Digitized by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

# चिन्तामणि

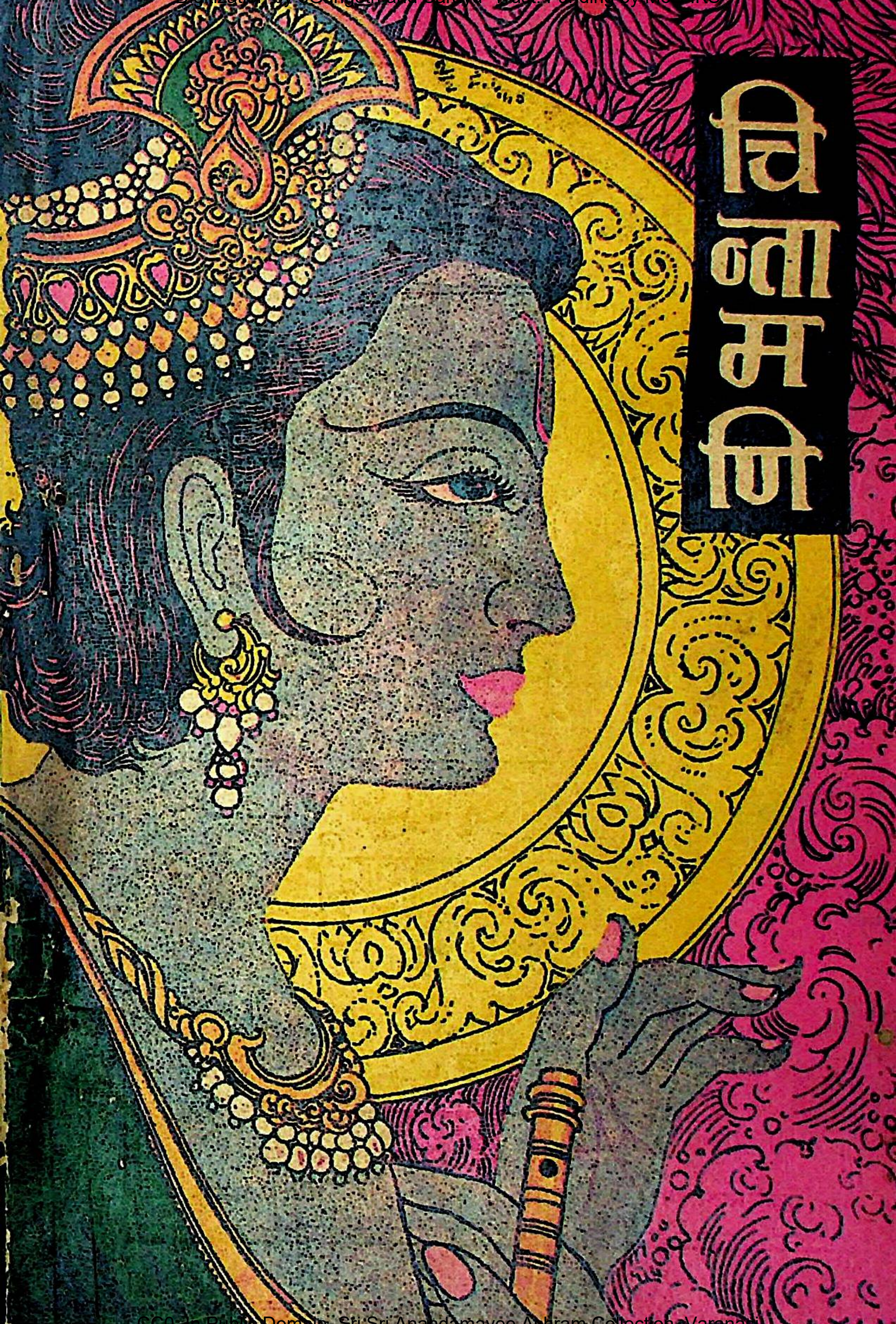

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

॥ श्रीः ॥

न श्वेतांशुवदन्धकारदलनादुद्योतिते रोदसी,
नाप्यैरावतवन्निरस्तदितिजत्रासः कृतो वासवः।
नो 'चिन्तामणि' रत्नवत्त्रिभुवने छिन्ना विपन्नार्थिनां,
भूत्वा तस्य हरेरुरःप्रणयिना किं कौस्तुभेनार्जितम् ॥

चन्द्रमणि उज्ज्वलकिरण तिमिर-नाशक है गगनमें।
हस्तमणि इन्द्ररक्षक त्रासनाशक दैत्यरणमें ॥
हरि-हृदय-प्रिय-हार कौस्तुभ दृष्टि दर्शनसे परे।
सर्व-अर्थ-समर्थ 'चिन्तामणि' विपद् विनशन करे ॥


शुभ कामनाओं सहित

नरोत्तमदास भाऊ
ज्वैलर्स

४३२ लेमिंगटन रोड
बम्बई-४

के

सौजन्यसे

तारः "दासनरोत्तम" फोन नं. ३५६३३३


CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अर्वाचीन-प्राचीन ज्ञान-विज्ञान प्रतिनिधि,
पुरुषार्थ-प्रतिपादक, प्रसन्न-गम्भीर
पत्रिका—

वर्ष : २ अङ्क : २
फरवरी १९६८ ई.

# चिन्तामणि

संस्थापक—
पूज्यपाद अनन्तश्री
स्वामी अखण्डानन्द सरस्वतीजी
महाराज

★ ★

## परम पूज्य श्री महाराज श्रीकी

संन्यास-जयन्तीके शुभावसरपर
यह द्वितीय वर्षकी द्वितीय मणि
आपकी सेवामें प्रस्तुत है।

—'चिन्तामणि' परिवार

सम्पादक—

ब्र० प्रेमानन्द 'दादा' : विश्वम्भरनाथ द्विवेदी

★

वार्षिक शुल्क—चार रुपये : एक प्रति—सवा रुपया

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

चिन्तामणि

[संन्यसा जयन्ती फरवरी ६८]

सम्वत् २०२४ वि०

★ विषय-क्रम


१. सबका आराध्य : १४५ : ऋग्वेद

निगम मन्थन

२. विष्णुसूक्त : १४७ : ऋग्वेद

३. श्री श्रीहरिबाबाके उपदेश : १५० :

४. अवतार क्यों नहीं ? : १५२ : श्रीउड़िया बाबाजी

५. श्रीमहाराजश्रीसे वार्तालाप : १५३ : प्रेषक-श्रीप्रबुद्धानन्द सरस्वती

६. भेद ? : १५५ : भक्त कोकिल साईं

७. प्रत्येकके अन्तस्‌में विद्यमान : १६१ : डा० सर्वेपल्लि राधाकृष्णन्

८. शान्तरसके स्रोत : १६६ : परशुराम चतुर्वेदी

९. हम भटक गये हैं ? : १७७ : सुदर्शनसिंह 'चक्र'

१०. धरती अधरमें : १७८ : आ. वा. भा. ३

११. कौन जानै कहाँते आई कौनकी को ही : १८५ : गोस्वामी तुलसीदास

कहानी

१२. परोपकार : १८६ : श्रीकृष्णगोपाल माथुर

१३. वाह गुरु ! : १९२ : आनन्द वाणी

भिक्षु शंकराजीसे सुना हुआ दृष्टान्त

१४. केहिं केहिं समुझावौं सब जग अन्धा : १९३ :

स्वामी श्री ब्रह्मप्रकाशजीसे सुने हुए दृष्टान्त

१५. सन्तका जादू : १९८ :

१६. दोनोंसे लाभ : २०० :


CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



१७. दोनोंसे हानि : २०२ :
१८. श्री ज्ञानेश्वरकी गुरुनिष्ठा : २०४ : यशवन्त बलवन्त क्षीरसागर
१९. बौद्धदृष्टिमें व्यक्तित्वका स्वरूप : २१० : जगन्नाथ उपाध्याय

महाराजश्रीके सत्संगसे-

२०. वितर्तका अर्थ : २२४ : दिनकर राय व्यास
२१. चन्देलोंकी भटकती हुई आत्माओंका
२२. विश्राम-स्थल : खजुराहो : २२५ : ज्योतिप्रकाश सक्सेना एम.ए
२३. बस एक बात : २३२ : शिवनाथ दुबे 'साहित्यरत्न'
२४. सेवाका अवसर : २३८ : ज्वालाप्रसाद मिश्र

एक अन्वेषक दृष्टि—

२५. श्रीराधा : पुराण और तन्त्रमें : २३९ : जमीला कुरैशी

न्याय—

२६. सारा वृक्ष ही हिला दो : २४७ :
२७. बिछुड़ा बूँद : २४८ : रामाश्रय दीक्षित
२८. कवियोंकी सरस उड़ानें जिन्होंने नीरस भी व्याकरण सरस बनाया ! : २५० : गोविन्द नरहरि वैजापुरकर एम. ए. न्याय-वेदान्त-साहित्याचार्य

पर्वोत्सव

२९. संन्यास-जयन्ती-प्रवचन : २५५ : डा० उर्वशी जे. सूरती एम. ए. पी. एच. डी.
३०. ढकनीका गर्व : २६१ :
३१. गीताका आत्मसंयम योग : २६२ : प्रभुदत्त ब्रह्मचारी

विज्ञान परिशिष्ट

३२. ये आवाजें कहाँसे आती हैं ? : २६४ : जसबीर कौर
३३. सन्तुलित भोजन : २६९ : डा. के. एन राव
34. An introduction to A Realised soul : 275 : B.C.Mishra senior advocate Supreme Court of India

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

## चि न्ता म णि

किं तेन कल्पतरुणा भुवि दुर्लभो यः,
वन्द्यैव कौस्तुभमणिः सुरवन्द्यभूपा ।
संस्पर्शरत्नमपि चारुकथं बभूव,
चिन्तामणिर्विजयते सततं करस्था ॥

—ओंकारदत्त शास्त्री

## क्षमा-प्रार्थना

द्वितीय वर्षके प्रथम अङ्क भेजनेमें हमारी असावधानीके कारण हमारे कुछ ग्राहकोंको विशेष कष्ट मिला। जिन्होंने 'चिन्तामणि'का वार्षिक शुल्क भेज दिया था, उन्हें भी वी. पी. से अङ्क चले गये। इसी प्रकार कुछ लोगोंको अङ्क मिले ही नहीं। सूचना मिलनेपर हमने भूल सुधारका प्रयास किया है। फिर भी आपको जो कष्ट हुआ है, उसका हमें दुःख है, और हम क्षमा-प्रार्थी हैं। हमारा निवेदन है कि भविष्यमें भी आप हमारी भूलोंकी ओर अवश्य निर्देश कीजिये, जिससे हम उसका सुधार कर सकें।

प्रार्थी

व्यवस्थापक 'चिन्तामणि'

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

चिन्तामणि

संन्यास-जयन्ती वर्ष—२ अङ्क—२

फरवरी, १९६८

# सबका आराध्य

ॐ गायन्ति त्वा गायत्रिणोऽर्चन्त्यर्कमर्किणः ।
ब्रह्माणस्त्वा शतक्रत उद्वंशमिव येमिरे ।।

( ऋक्० म० १. सू० १०. ऋ० १. )

हे सच्चिदानन्द ! आपके कार्य, प्रज्ञा और आनन्द अनन्त हैं। उद्गाता आपके भोक्ता, भोग्य और भोगके रूपमें स्थित समत्व अर्थात् ब्रह्मस्वरूपका निरूपण करते हैं। आपके अर्चक-होता आपके अर्चनीय स्वरूपकी अर्चा-पूजा करते हैं। ब्रह्मा और ब्राह्मण सर्वश्रेष्ठ रूपमें आपकी स्तुति करते हैं। जैसे, बांसके नोकपर नृत्य करते हुए शिल्पी प्रौढ़ वंशको उन्नत करते हैं, अथवा सन्मार्गवर्ती पुरुष अपने कुलको उन्नत करते हैं, वैसे ही वे सब स्तुति द्वारा आपकी महिमाका संवर्द्धन करते हैं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



स्कन्दस्वामीने इस मन्त्रके भाष्यमें एक सूक्ति दी है, — 'स्तूयमाना हि देवता वीर्येण वर्धन्ते।' स्तुति करनेपर देवता अपने वीर्य पराक्रमको अधिकाधिक प्रकाशित करते हैं। वेङ्कटनाथने 'उद्गाता और होता, ये दोनों प्रकारके ब्राह्मण जैसे कोई अपने हाथोंसे वंश ( बांस ) को उठाये, वैसे ही स्तोत्रोंके द्वारा देवताको जगाते हैं'—ऐसा कहा है।

मुद्गलीय व्याख्यामें सायणके समान ही है।

गायत्र साममें 'मैं ही अन्न हूँ, मैं ही अन्नाद हूँ, मैं ही दोनोंका एकत्वापादक हूँ'—इस प्रकार ब्रह्मके समत्वका गान है। इसलिए उसे गायत्र साम कहते हैं। वह प्रसिद्ध है—अहमन्नमहमन्नमहमन्नमित्यादि ०।

कोई-कोई इस मन्त्रमें 'गायत्रिणः' पदका अर्थ 'गायत्रीके उपासक' ऐसा करते हैं। गायत्रीके पूर्वार्द्धमें तत्पदवाच्यार्थ सविता देवके भर्गका वर्णन है और उत्तरार्द्धमें त्वंपद वाच्यार्थ बुद्धिप्रेरक रूपका वर्णन है। पहला कारणोपाधिक है और दूसरा कार्योपाधिक। सामानाधिकरण्यके कारण उपाधिका निरसन करके अखण्डार्थका ग्रहण करना चाहिए। अभिप्राय यह है कि गायत्रीके द्वारा प्रत्यक् चैतन्याभिन्न ब्रह्मका ही प्रतिपादन है।

यह मन्त्र ऋग्वेदके अतिरिक्त सामवेद और तैत्तिरीय संहितामें भी आया है। निरुक्तमें भी इसका व्याख्यान है। यास्कने 'अर्क' शब्दके चार अर्थ दिये हैं—अर्क देवता है; क्योंकि लोग इसकी अर्चा करते हैं। अर्क मन्त्र है; क्योंकि इससे अर्चा करते हैं। अर्क अन्न है, यह प्राणियोंकी अर्चा करता है। अर्क आकका वृक्ष है; क्योंकि यह कटुकतासे संवृत्त है। इस प्रकार 'अर्क' शब्दका अर्थ ईश्वर, पूजाके मन्त्र, पूजाकी सामग्री आदि होता है। उन्होंने 'वंश' पदका अर्थ ध्वज किया है। जैसे लोग बांसके सहारे किसीके यशका झंडा फहराते हैं, वैसे ब्राह्मण स्तुति-पूजाके द्वारा ईश्वरके यशका झंडा फहराते हैं।

अभिप्राय यह है कि सम्पूर्ण वेद, मन्त्र, पूजा आदिका तात्पर्य परमेश्वरकी आराधनामें ही है।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

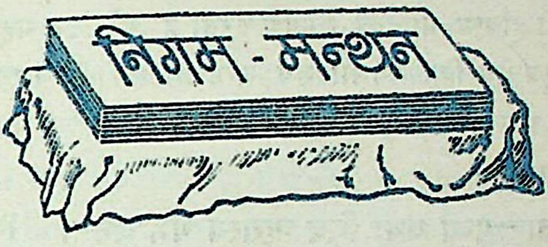


# विष्णु सूक्त

. २ .

[ ऋग्वेद मं० १. अ० २. सू० १५६ .]

भवा मित्रो न शेव्यो घृतासुतिर्विभूतद्युम्न एवया उ सप्रथाः ।
अधा ते विष्णो चिदर्थ्यः स्तोमो यज्ञश्च राध्यो हविष्मता ॥१॥

हे सर्वव्यापी विष्णुदेव ! आप हमारे सूर्यके समान प्रकाशक मित्र हैं। आप ही हमारी सीमाओंके सम्पूर्ण बन्धन काटकर सर्वविध दुखोंसे त्राण करते हैं और असीम बन्धनमुक्त सुखका दान करते हैं। आप घृतके जन्मदाता हैं तथा घृताहुतियोंके द्वारा पूजित होते हैं। आपका यश एवं अन्न महान् है। आप ही सबको सुरक्षित रखते हैं। और सबसे बड़े हैं। सचमुच ही आप हमारे लिए भी ऐसे ही हों। हृदयेश्वर ! अतः आप ऐसे हैं, इसलिये आपके महात्म्यके ज्ञाता यजमानको बारम्बार आपके स्तोत्रकी वृद्धि करनी चाहिए। यज्ञोंके द्वारा हाथमें हविष्य लेकर आपकी पूजा करनी चाहिए।

यः पूर्व्याय वेधसे नवीयसे सुमज्जानये विष्णवे ददाशति ।
यो जातमस्य महतो महि ब्रवत्सेदु श्रवोभिर्युज्यं चिदभ्यसत् ॥२॥

जो मनुष्य सनातन जगत्कर्ता, नित्यनूतन परम सुन्दर, स्तवनीय स्वयम्भू एवं ललनाललाम, प्रमदाशिरोमणि लक्ष्मीके पति विष्णु-



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



भगवान्को हविष्य आदिका समर्पण करता है और इन महानुभावके महान्, पूजनीय हिरण्यगर्भादिरूप जन्मका संकीर्तन करता है, वह भी अन्न और कीर्तिसे युक्त होकर सबके परम गन्तव्य भगवत्पदको प्राप्त होता है।

तमु स्तोतारः पूर्व्यं यथा विद ऋतस्य गर्भं जनुषा पिपर्तन ।
आस्य जानन्तो नाम चिद्विवक्तन महस्ते विष्णो सुमतिं भजामहे ॥

हे भगवद्गुणानुवाद-रसिक सत्पुरुषो ! उस अनादिसिद्ध सनातन परमात्माको तुम जैसा जानते हो; वैसा ही अपने सहज निष्काम जीवनसे आजीवन तृप्त करो, प्रीतिपूर्वक उसकी भक्ति करो; क्योंकि वही कारणवारिका जनक, यज्ञात्मा, परमसत्य, ऋतदेव है।

इस सर्वात्मा विष्णुके चिन्मय नामको ही सर्वत्र परिपूर्ण देखते हुए उसका संकीर्तन करो। हे सर्वव्यापी सर्वकारण-कारण प्रभो ! आप महान् हैं। हम आपकी सुमतिका भजन-सेवन करते हैं।

तमस्य राजा वरुणास्तमश्विना क्रतुं सचंत मारुतस्य वेधसः ।
दाधार दक्षमुत्तममहर्विदं व्रजं च विष्णुः सखिवाँ अपोर्णुते ॥४॥

भगवान् विष्णु सम्पूर्ण देवगणोंके विधाता हैं। उन्हींके स्थिति, पालनादि रूप कर्मका सेवन-अनुगमन राजा वरुण, अश्विनीकुमार आदि देवता करते हैं; क्योंकि सम्पूर्ण पालन-क्रिया विष्णुके अधीन है। वही इन्द्र आदि सहायकोंसे युक्त होकर अत्यन्त उत्कृष्ट स्वर्गोत्पादक एवं दक्षतासे युक्त बल धारण करते हैं और वही व्रजको निरावरण करते हैं।

[ सायणने इस मन्त्रके दो अर्थ किये हैं—पहले अर्थमें ऋत्विज और देवताओंके संघातसे युक्त मेधावी यजमानके यज्ञरूप विष्णुका स्तवन है और दूसरेमें देवताओंके जनक विष्णुका। पहले अर्थमें व्रजका अर्थ मेघ है और



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu  Trust. Funding by MoE-IKS



दूसरे अर्थमें व्रज गोष्ठ है। यजुः संहितामें व्रजको गोष्ठान कहा गया है। इस अर्थमें श्रीकृष्णलीलाका बीज भी इस मन्त्रमें है। देवताओंकी सहायतासे गोविन्दलीला ध्वनित होती है और व्रजके निरावरणसे गोपियोंके आवरण-भङ्गकी लीला। वरुणादि देवताओंने श्रीकृष्णकी पूजा की ही है ]

आ यो विवाय सचथाय दैव्य इन्द्राय विष्णुः सुकृते सुकृत्तरः।
वेधा अजिन्वत् त्रिषधस्थ आर्यमृतस्य भागे यजमानमाभजत् ॥५॥

विष्णु भगवान् दिव्य प्रकाशमय लोकमें निवास करते हैं। शुभ फलदाताओंमें वही सर्वश्रेष्ठ हैं। वह शुभ कर्म यज्ञात्मक समर्पणमें सहायता करनेके लिए अपने गुणानुवादगायक स्तुतिकर्ता सर्वस्वार्पण-शील यजमानभक्तके पास स्वयं पधारते हैं। अर्थात् भक्तको दर्शन देते हैं। विष्णुका निवास-स्थान है तीनों सवन अथवा द्युलोक, अन्तरिक्ष और पृथिवी। वे ही विधाता हैं। वे अपने श्रेष्ठ सर्वमेधी यजमान भक्तको तृप्त करते हैं। वे यज्ञभागमें यजमानको भी अपने साथ बैठाते हैं अथवा भक्तको यज्ञफलका स्वामी बना देते हैं।

[ इस मन्त्रमें अनेक उपयोगी पदार्थोंका निरूपण हुआ है। विष्णुका निवासस्थान दिव्य एवं त्रिलोक है। वे शुभकर्ममें सहायक और उसके फलदाता हैं। वे अपने भक्तके पास आकर वरदान देते हैं, उसको प्रसन्न करते हैं, पास बैठाते हैं, उसके साथ भोजन करते हैं और उसमें भी भक्तिका फल देनेवाली शक्तिका सञ्चार कर देते हैं। ] ✶

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

# श्री श्रीहरि बाबाजीके उपदेश

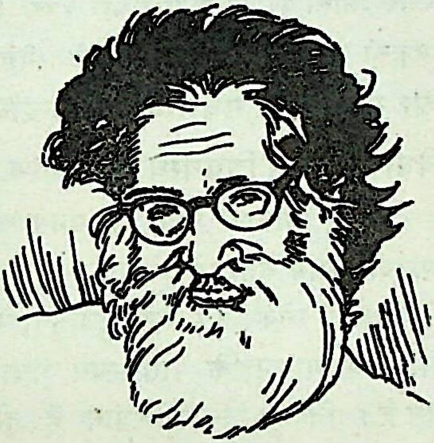

लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः ।
येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः ॥

श्री भगवान्पर विश्वास करो । उनके विधानमें सदा ग्रानन्दही है । यदि जीवनमें विपरीतताएँ भी ग्रायें तो उसमें भी उनकी कृपा, उनकी करुणा छिपी रहती है ।

एक भक्त थे गिरिवर । उनकी धर्मपत्नी गौरी ग्रपने ग्राठ वर्षीय पुत्र ऊदाको लेकर दशहरा पर्वपर गंगा-स्नान करने गयी । बालक गहरे पानीमें उतरा तो सहसा भीतरसे मगर उसका पैर पकड़कर खींचने लगा । ऊदा चिल्लाया : 'बचाग्रो ! बचाग्रो ! हे भगवान् मेरी रक्षा करो !' किन्तु किसीका कोई बस न चला ग्रौर देखते ही देखते बालक ऊदा ग्राँखोंसे ग्रोझल हो गया । कालरूपी मगरने उसे ग्रपना ग्रास बना लिया । रोती-कलपती मां घर ग्रायी ग्रौर पछाड़ खाकर पतिके ग्रागे गिर पड़ी । उसके हृदय-विदारक विलापसे भक्त गिरिवर भी शोकाकुल हो गये । शोकग्रस्त गौरी



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



भगवान्‌को बुरा-भला कह रही थी : 'भगवान् कितना निष्ठुर है ? हमारा सुख उससे देखा न गया, हमारा इकलौता बेटा हमसे छीन लिया।'

गिरिवर विश्वासी भक्त थे। वे श्री भगवान्‌की लीला और उनका स्वभाव जानते थे। उन्होंने धैर्य देते हुए कहा : भगवान् जो भी करते हैं, अच्छा ही करते हैं। उनके हाथों कभी अमंगल नहीं होता। वे मंगलमय हैं। इसलिए उनकी लीला समझकर तुम्हें शोक नहीं करना चाहिए।

गौरीको यह यह वाक्य बहुत बुरे लगे। उसने कहा—आपको शर्म नहीं आती ! मेरा तो कलेजा फटा जा रहा है और आप इसे भगवान्‌की कृपा बतलाते हैं।

गिरिवर बोले—देवि ! धैर्यपूर्वक विचार करो : 'जब यह शरीर ही अपना नहीं ही है, तब पुत्रको तुमने अपना कैसे समझा ? इस सारी सृष्टिके स्वामी भगवान् हैं। किसी सेठके चार दूकाने हैं। वह अपनी एक दूकानका माल दूसरी दूकानपर भेज दे तो वह क्यों रोये ? ठीक इसी प्रकार प्रभुने ऊदाको यहाँसे हटाकर दूसरी जगह भेज दिया तो इसमें भी उनकी कुछ कृपा होगी। क्या पता, यहाँसे भी अधिक सुखमें पहुँच गया हो। जहाँ भी होगा, ईश्वरकी ही देख-रेखमें होगा।

गिरिवर कुछ दिनों बाद वैकुण्ठ चले गये। गौरी पुत्रवियोगमें पागलकी भाँति देश-विदेशमें कीर्तन करती घूमने लगी। एक दिन वह किसी नगरमें पहुँची ही थी कि छतपरसे राजाने उसे देख लिया और चौकीदार भेजकर ऊपर बुला लिया। राजाने माताके चरणोंमें प्रणाम किया।

गौरी—कौन है, बेटा ऊदा !

राजा—हां मैया।

माँ–बेटा प्रेमसे लिपटकर रोने लगे।

गौरी : बेटा ! तुझे तो मगर पकड़कर ले गया था; यहाँ कैसे आया ?

ऊदा : मां! इस शहरके राजाके सन्तान नहीं थी। उसने इक्कीस दिनका



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

[ चिन्तामणि ]

अनुष्ठान करवाया गुरुकी आज्ञासे। अनुष्ठान सम्पन्न होनेपर गुरुजी और राजा दोनों नावपर घूम रहे थे। मगर जब मुझे पकड़कर वहाँसे निकला तो दूसरे मगरने उसपर आक्रमण कर दिया। दोनों परस्पर लड़ने लगे। मैं छूटकर जलके ऊपर उतरा गया। राजाने नाव बढ़ाकर मुझे निकाल लिया। घावकी दवा हुई, मैं ठीक हो गया। राजाने कल ही मुझे यहाँकी गद्दीपर बैठा दिया और स्वयं तप करने चला गया। अब मैं इस नगरका राजा हूँ। मां! भगवान् जो करते हैं सो अच्छा ही करते हैं। मेरे पिताजीका कहना सर्वथा सत्य था। अतः सावधान! संकटमें घबड़ाना नहीं। धैर्यपूर्वक भगवान्का स्मरण करनेसे बड़ी-बड़ी बाधाए समाप्त हो जाती हैं। ध्रुवजीको सौतेली मां गोदसे न फेंकती तो भगवान् नहीं मिलते। रामजीको कैकेयी वनवास न देती तो रावण नहीं मरता; इसलिए भगवान् जो करते हैं, अच्छा ही करते हैं। ★

## अवतार क्यों नहीं ?

### [ श्रीउड़िया बाबाजी महाराजका अभिमत ]

एक बार श्री उड़िया बाबाजी महाराजसे किसीने पूछा : 'महाराज, आजकल अधर्म बहुत बढ़ गया है। बड़े-बड़े दुराचार, पाप हो रहे हैं। कंस, पूतना, जरासंघ, दन्तवक्र आदि जितना पाप करते थे, उनसे कहीं अधिक हिंसा, अनाचार, अत्याचार करनेवाले पापी इस समय हो गये हैं। ऐसी दशामें ईश्वर अवतार क्यों नहीं लेता ?'

श्री उड़िया बाबाजीने तत्काल कहा : और सब तो ठीक है, किन्तु कोई वसुदेव-देवकी नहीं हैं। इसीलिए ईश्वर अवतार नहीं लेता।'

परमात्माके प्राकट्यके लिए देवकी-वसुदेवकी आवश्यकता है। ★



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

# प्रश्न और उत्तर

## पूज्यपाद श्रीमहाराजश्रीसे वार्तालाप

[ प्रेषक—स्वामी प्रबुद्धानन्द सरस्वती ]

**प्रश्न :** क्या वेदका तात्पर्य—विषय भेद है ?

**उत्तर :** नहीं, क्योंकि भेद प्रत्यक्षादि प्रमाणसे सिद्ध है। प्रमाणान्तरसे सिद्ध वस्तुका प्रतिपादन करनेपर वेद अज्ञातज्ञापक प्रमाण नहीं रहेगा, दूसरे प्रमाणसे सिद्ध पदार्थका अनुवादक हो जायगा। जो वस्तु साक्षीके अनुभवसे ही सिद्ध हो रही है, उसकी सिद्धिके लिए वेद-तक दौड़नेकी क्या आवश्यकता है? वेद ऐसी वस्तु बताता है जो प्रत्यक्ष, अनुमान आदिसे सिद्ध नहीं होती। वेद केवल साक्षिमात्रका भी प्रतिपादक नहीं है, क्योंकि वह तो स्वतःसिद्ध है और सबका प्रकाशक है। वेदका वेदत्व साक्षीको ब्रह्म बतानेसे ही सफल होता है।

वस्तुतः बात यह है कि परिछिन्न स्थूल, सूक्ष्म पदार्थसे अभेद अथवा तादात्म्य होना अज्ञानका लक्षण है। दृश्य, साक्ष्य अथवा भेद-मात्रसे अपनेको पृथक् द्रष्टा जानना विवेक है। इस पृथक्त्वमें भिन्नत्व अनुस्यूत है। जड़से चेतन आत्मा भिन्न है। यह भिन्नत्वकी भ्रान्ति भी अज्ञानकृत है। वेद प्रमाणान्तरसे अज्ञात आत्माकी अपरिच्छिन्नता अद्वितीयताका बोध करा देता है। आत्मा होनेसे चेतन है; ब्रह्म होनेसे अपरिच्छिन्न, अद्वितीय है। इस ऐक्यके ज्ञानसे अज्ञानकी निवृत्ति हो जाती है। भेद बाधित हो जाता है। यह अज्ञानकी निवृत्ति और बाधित भेद भी आत्मस्वरूप ही है। क्योंकि



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



वह अधिष्ठान आत्मासे भिन्न नहीं है। प्रमाणान्तरसे अज्ञात वस्तुका बोध करानेके कारण ही श्रुतिका वास्तविक प्रामाण्य है।

**प्रश्न :** तब क्या भेद सत्य नहीं है ?

**उत्तर :** कदापि नहीं। भेद सर्वथा मिथ्या है; परिच्छिन्नके तादात्म्यसे ही भेद सत्य भासता है। जिस अधिष्ठानमें भेद भास रहा है; उसीमें उसका अत्यन्ताभाव भी भास रहा है। अपने अभावके अधिष्ठानमें भासना ही मिथ्याका लक्षण है। इसलिए यह युक्ति बिलकुल ठीक है—'भेदो मिथ्या स्वभावाधिकरणे भासमानत्वात्' यह अनुभवसिद्ध है कि अधिष्ठान-ज्ञानसे भेद मिथ्या हो जाता है। इसलिए वेदका तात्पर्य मिथ्या भेदके प्रतिपादनमें नहीं है, प्रत्युत भेदके भाव और अभावके अनुकूल शक्ति, मायाके अधिष्ठानके प्रतिपादनमें है।

**प्रश्न :** तब क्या भेदके प्रतिपादनसे किसी प्रयोजनकी सिद्धि नहीं होती ?

**उत्तर :** भेदके प्रतिपादनसे अर्थ, धर्म, काम रूप तीनों पुरुषार्थोंकी सिद्धि होती है, परन्तु मुक्तिकी सिद्धि नहीं होती। भेदमें परिच्छिन्नताकी भ्रान्ति दुःख है, अहंकार दुःख है, राग-द्वेष दुःख है और जन्म-मरण भी दुःख है। भेदमें समाधि-विक्षेप नहीं छूटते, सुख-दुःख नहीं छूटते, पाप-पुण्य नहीं छूटते और संयोग-वियोग भी नहीं छूटते; इसलिए भेदमें जन्म-मरणका चक्र अव्याहत रूपसे चलता रहता है। इसलिए मुक्ति पुरुषार्थकी सिद्धि भेदसे नहीं हो सकती। मुक्ति स्वयं आत्माका स्वरूप ही है। ज्ञान रूपसे उपलक्षित आत्मा ही अज्ञानकी निवृत्ति है। निवृत्ति कोई स्वतन्त्र पदार्थ नहीं है। इसलिए मुक्तिमें प्राप्य-प्रापक, साध्य-साधन आदि भाव भी नहीं हैं। इससे सिद्ध होता है कि श्रुतिका तात्पर्य भेदके प्रतिपादनमें नहीं है, क्योंकि भेदकी सिद्धिसे मुक्तिकी सिद्धि नहीं हो सकती।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



**प्रश्न :** फिर भेद प्रतिपादक श्रुतियोंका क्या होगा ?

**उत्तर :** भेद प्रतिपादक श्रुतियां अविरक्त अधिकारीके लिए हैं। उनसे लौकिक - पारलौकिक सिद्धिकी प्राप्ति होती है, व्यष्टि-समष्टिका कल्याण करती हैं, अन्तःकरण शुद्ध करती हैं, मुमुक्षुको ज्ञानोन्मुख करती हैं। इसलिए व्यवहारमें उनका बहुत ही उपयोग है; परन्तु जहाँ वस्तुकी प्रधानतासे परमार्थ तत्त्वका निरूपण है, वहाँ श्रुतियां भेदको ज्ञाननिवर्त्य; अतएव मिथ्या बताती हैं। जो वस्तु अज्ञानसे सिद्ध होती; वह मिथ्या होती है और जो ज्ञानसे निवृत्त होती है, वह भी मिथ्या ही होती है। अतएव सर्वाधिष्ठान सर्वावभासक, स्वयंप्रकाश प्रत्यक्चैतन्याभिन्न अद्वितीय ब्रह्मतत्त्वके अज्ञानसे तद्विषयक अज्ञानकृत सर्वभेदकी आत्यन्तिक निवृत्ति हो जाती है।

बात यह है कि केवल इन्द्रिययन्त्रोंसे तत्त्वका अनुसन्धान करनेपर केवल एक या अनेक जड़सत्ताकी ही सिद्धि होती है। चिद्वस्तु यन्त्रग्राह्य नहीं है। केवल बुद्धिसे अनुसन्धान करनेपर बुद्धिकी शून्यता ही परमार्थरूपसे उपलब्ध होती है; क्योंकि विचार-विक्षेपात्मक बुद्धिका अन्तिम सत्य निर्वाणात्मक शून्य ही है। भक्तिभावनायुक्त बुद्धिके द्वारा अनुसन्धान करनेपर सर्व प्रमाण-प्रमेय-व्यवहारके मूलभूत सर्वज्ञ सर्वशक्ति परमेश्वरकी सिद्धि होती है। ऐसी स्थितिमें स्वतः-सिद्ध साक्षीको अपरिच्छिन्न अद्वितीय ब्रह्म बतानेके लिए कोई इन्द्रिययन्त्र या भाव-भक्ति समर्थ नहीं हैं। उसका ज्ञान केवल औपनिषद ऐक्यबोधक महावाक्यसे सम्पन्न होता है। ★

## —: भेद: :—

**प्रश्न—**स्वामीजी, कर्मी, ज्ञानी और भक्तमें क्या भेद है ?'

**उत्तर—**कर्मी तीन, ज्ञानी एक और भक्त दो। भक्त, जीव, ईश्वर। केवल ईश्वर। भक्त और ईश्वर। —भक्त कोकिल साईं



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

# भक्ति साधनाका मनोविज्ञान

श्री विश्वनाथ चक्रवर्ती

[ पूर्व प्रसङ्गमें भक्ति कल्पलताकी साधना नामकी दो पत्तियोंकी पहचान करायी गयी थी। अब उनसे भी अत्यन्त स्निग्ध श्रवण, कीर्तन आदिरूप भावकुसुमसे संलग्न बहुत-से अनुभाव नामक पत्तोंका वर्णन करते हैं, जो एकाएक प्रकट होकर प्रतिक्षण चमकते हैं और भावकुसुमको परिपक्वतारूप परिणाम प्राप्त कराकर फिर उसी समय प्रेम नामक फलका रूप दे देते हैं।—सम्पादक ]

## अष्टम अमृतवृष्टि

यह पहले ही कह चुके हैं कि भक्तिकल्पवल्लीके साधना नामकी दो पत्तियां होती हैं। अब उनसे भी अतिशय चिकने किसलय श्रवण-कीर्तन आदि रूपका वर्णन करते हैं। इनमें भावकुसुम संलग्न होते हैं और इनका नाम अनुभाव होता है। ये एकाएक प्रकट होकर क्षण-क्षणमें प्रकाशित करते हैं और भावकुसुमको परिणत करके उसी समय प्रेमफल बना देते हैं।

इस भक्तिवल्लीकी एक-एक चर्या आश्चर्यमयी है; क्योंकि इसके पत्र, स्तबक, पुष्प, फल परिपक्व हो जानेपर भी अपने स्वरूपका परित्याग नहीं करते और सबके-सब एक



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



साथ ही नित्यनूतन रूपसे शोभायमान होते हैं। इसके बाद तो भक्तका वही मन जो पहले शरीर, सम्बन्धी-जन, गृह, धन आदिमें शत-शत सहस्र-सहस्र रूप धारण करके प्रवृत्त था और ममताकी हथकड़ी-बेड़ियोंसे आबद्ध था उसी मन और उसकी सारी वृत्तियोंको खेल-खेलमें ही सब जगहसे छुड़ाकर यह प्रेम एक विचित्र कार्य कर देता है। जैसे महारसके कूपका स्पर्श करने मात्रसे ही वस्तुओंका रूपान्तर हो जाता है, इसी प्रकार इस प्रेमरसके स्पर्शमात्रसे ही वे मायिक वृत्तियां भी साकार चिदानन्द ज्योतिर्मय हो जाती हैं और यह प्रेम उन सबको भगवान्के रूप, नाम, गुण एवं माधुरीमें निबद्ध कर देता है। रश्मिमाली भुवन-भास्कर सूर्यके समान यह प्रेम अपने उदय होनेके पूर्व क्षणमें ही सभी पुरुषार्थरूप नक्षत्रमण्डलीको विलुप्त कर देता है। इस प्रेमका स्वाद जब मिलने लगता है, तब वह इतना गाढ़ा होता है और साथ ही साथ शक्तिशाली भी कि वह श्रीकृष्णको भी अपनी ओर आकर्षित कर लेता है। इस प्रेमरसकी पौष्टिकी शक्तिका नाम 'श्रीकृष्णाकर्षिणी' है। प्रेमी भक्त इस आस्वादन प्रारम्भ होनेपर ही विघ्नोंको कुछ नहीं गिनता, यह तो एक छोटी बात है; प्रत्युत वह अपने आपको भी भूल जाता है। उसकी स्थिति महाशूर-भटके समान अथवा महाधन-लोभी, अत्यावेशलुप्त चोरके समान हो जाती है। यदि संसारमें कोई ऐसी क्षुधा हो जो अहर्निश, प्रतिक्षण चतुर्विध, परम स्वादु, अपरिमित अन्नका भोजन करनेपर भी शान्त न हो तो, कहा जा सकता है कि वैसी ही उत्कण्ठा भक्तके हृदयमें होती है। प्रेम ऐसी ही उत्कण्ठासे प्रेमीके मनको तप्त करके उसी समय भगवान्के रूप, गुण, अपार माधुर्यको प्रकट कर देता है और उनको आस्वादनका विषय बनाकर कोटि-चन्द्रके समान शीतलता एवं आह्लादसे भर देता है। अद्भुत है यह प्रेम, जो अपने आधारभूत-भक्तके हृदयमें एक साथ ही उत्कण्ठा और माधुर्य दोनोंका अनुभव कराता है।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



जब यह प्रेम उदित होकर थोड़ा-सा बढ़ता है, तब भक्त प्रतिक्षण भगवत्साक्षात्कारके लिए ही व्याकुल रहने लगता है। उत्कण्ठा-शल्यकी जलन अत्यन्त प्रबल हो जाती है। स्फूर्तिप्राप्त रूपलीला एवं माधुर्यसे तृप्ति नहीं होती। उसके मनकी ऐसी दशा हो जाती है कि बन्धु-बान्धव भी अन्धकूप-जैसे लगने लगते हैं। भवन कण्टकवनके समान और आहारका आग्रह महा-प्रहार जान पड़ता है। सज्जनोंके द्वारा की हुई प्रशंसा उसे सर्पदंशके समान विषैली जान पड़ती है। नित्य कर्तव्य भी मर्तव्य, अंग प्रत्यंग भी भङ्ग-कारी भार, सुहृद्गणोंकी सान्त्वना विषदृष्टि और सदा जागर भी अनुतापका सागर प्रतीत होता है। कभी-कभी आनेवाली निद्रा जीवन-विद्राविणी और अपना विग्रह भी मूर्तिमान् भगवन्निग्रह ज्ञात होते हैं। प्राण धानकी तरह पुनः पुनः भुने हुए और अपनी पहलेकी प्रिय वस्तुएं उप-द्रवकारिणी जान पड़ती हैं। कहाँ तक कहें, उस समय भगवच्चिन्तन भी भक्तके लिए आत्मनिकृन्तन हो जाता है। इसके बाद प्रेम ही चुम्बक-सा बनकर कृष्णलोहको खींचकर ले आता है और किसी भी क्षणमें भक्तके लोचनगोचर कर देता है। भगवान् प्रत्यक्ष होकर अपने स्वरूप-भूत परमकल्याणगुण सौन्दर्य, सौरभ्य, सौस्वर्य, सौकुमार्य, सौरस्य, औदार्य एवं कारुण्य आदि उस भक्तके नेत्र आदि इन्द्रियोंमें भर देते हैं। उन गुणोंकी परम मधुरता एवं नित्य-नूतनताका आस्वादन करनेवाले भक्तके हृदयमें जब वे प्रेमके कारण प्रतिक्षण बढ़ने लगते हैं और उनके अनुरूप ही उत्कण्ठा भी बढ़ने लगती है; तब आनन्दका एक ऐसा अपार पारावार प्रकट हो जाता है कि कवि-वाणीकी छोटी-सी लकड़ी उसकी थाह लगानेमें सर्वथा असमर्थ हो जाती है।

उस समय भक्तको जैसा आनन्द होता है. उसका उपमान सृष्टिमें कहीं भी नहीं है; तथापि दिग्दर्शनके लिए इस ढंगसे कहा जा सकता है कि मानो ग्रीष्म-ऋतुके प्रखर तापसे



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



सन्तप्त मरुभूमिके पथिकको एक विशाल घनी छायावाले बटवृक्षका आश्रय मिल गया हो, अथवा उत्तरकाशीतलवाहिनी, शीतलवाहिनी भगवती भागीरथीके सहस्र-सहस्र घटसम्भृत हिमसलिलकी धारा प्राप्त हो गयी हो। ऐसा भी कह सकते हैं कि मानो दीर्घकालसे दावाग्नि-पीड़ित गजेन्द्रको अपार कादम्बिनी-घटासार जलधाराका अभिषेक प्राप्त हो गया हो। यह कहना भी अल्प ही है कि अनल्प आमयशाली, तल्प-शायी, स्वादलोलुप रोगीको परम आल्हाददायी सुधामय प्रचुर भोजनका रसास्वाद प्राप्त हो गया हो। कुछ-कुछ इन्हीं भावोंको भक्तकी मनः-स्थितिका उपमान बनाया जा सकता है।

सबसे पहले भगवान् अपार चमत्कारमहोदधिमग्न भक्तके लोचन-का अतिथि बनाते हैं अपने सौन्दर्य-को। परम प्रियतम प्रभुकी इस रूप-माधुरीके प्रभावसे सब इन्द्रियाँ और मनोवृत्तियां लोचनरूपमें परिवर्तित होने लगती हैं। भक्तके शरीरमें कभी जड़ता आती है, कभी वह कांपता है, कभी नेत्रोंसे आंसुओंकी धारा बहने लगती है। वह आनन्दके उद्रेकसे मूर्च्छाग्रस्त होने ही वाला होता है कि भगवान् अपना दूसरा गुण सौरभ्य, दिव्य सुगन्ध उसकी घ्राणेन्द्रियके प्रति प्रकाशित कर देते हैं। इन्द्रिय और मन घ्राणेन्द्रियमें समाने लगते हैं। मूर्च्छा होते न होते भगवान् कहते हैं—'मेरे प्यारे भक्त! मैं तुम्हारा ही हूं। विह्वल मत बन! मेरा अनुभव कर।' इस प्रकार भगवान्‌की सुरीली वाणी, सौस्वर्य भक्तके कानोंमें अमृत उडेल देता है। इन्द्रिय और मन कान होनेके लिए दौड़ पड़ते हैं। मूर्च्छाके प्रारम्भमें ही भगवान् अपने चरणारविन्दसे कर-कमलोंसे अथवा वक्षःस्थलसे अपना सुखद स्पर्श देकर भक्तको अपने सौकुमार्यका अनुभव कराते हैं।

दास्य-भाव हो; तो भगवान चरणारविन्दसे सिरपर स्पर्श करते हैं। सख्य-भाव हो; तो हाथोंसे हाथ मिलाते हैं। वात्सल्य-भाव हो तो अपने करकमलोंसे आंसू पोंछते हैं।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



प्रेयसी-भाव हो; तो अपने भुजपाशसे बांधकर वक्षःस्थलसे वक्षःस्थलका आलिङ्गन करते हैं। यह विशेष समझने योग्य है।

इस आश्लेषसे भी मूर्च्छाका आगमन होनेपर भगवान् अपने अधरामृतका सौरस्य भक्तकी रसनाका विषय बनाते हैं, परन्तु यह सौभाग्य प्रेयसीभाववाले भक्तको और ठीक उसी समय उदय होनेवाले अभिलाषकी पूर्तिके लिए ही करते हैं। इससे भक्तके हृदयमें जितना-जितना आनन्दका उदय होता है उतनी ही उतनी मूर्च्छा भी निविड होती जाती है। भगवान् मानो ऐसे भक्तको प्रबुद्ध करनेमें असमर्थ-से होकर अपने असीम औदार्यको प्रकट करते हैं और अपने सौन्दर्य, माधुर्य आदि सभी गुणोंको एक साथ ही भक्तकी सब इन्द्रियोंमें प्रकट कर देते हैं और बलात् उसका आस्वादन कराते हैं। उस समय मानो भगवान्के संकेतको जानकर प्रेम भी अत्यन्त बढ़ जाता है और तदनुरूप तृष्णाको भी समृद्ध करता है। प्रेम स्वयं चन्द्रमाके रूपमें प्रकट होकर उसके हृदय-समुद्रको शत-शत परमानन्दतरङ्गोंसे उद्वेलित कर देता है और स्वयं ही भक्तके मनका अधिदेवता बनकर युगपत् भगवद्गुणोंके आस्वादनका सामर्थ्य दे देता है। यह निर्विवाद अर्थात् अनुभवसिद्ध है कि भक्तको इन सब स्वादोंकी अनुभूति एक साथ ही होती है।

ऐसा नहीं समझना चाहिए कि ऐसी स्थितिमें तो मन एकाग्र नहीं रहेगा और चंचल मनमें स्वादकी सान्द्रता, अर्थात् घनता भङ्ग हो जायगी, क्योंकि सम्पूर्ण इन्द्रियों और मनोवृत्तियोंका सौन्दर्य, सौस्वर्य आदिका आस्वादन करनेके लिए युगपद ही नमन, श्रवण आदिके रूपमें रूपान्तर हो जाता है। यह अद्भुत, अलौकिक, अचिन्त्य चमत्कार रसानुभूतिको अत्यन्त गाढ बना देते हैं। लौकिक अनुभवमूलक तर्कदावाग्निसे इस अलौकिक चमत्कारको काटना उचित नहीं है। अचिन्त्यभाव तर्ककी कसौटीपर नहीं कसे जाते। ★



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

# प्रत्येकके अन्तस्में विद्यमान

डा० सर्वेपल्लि राधाकृष्णन्

ब्रह्म शोधका सिद्धान्त भी है और शोधका विषय भी। वह साधन भी है और साध्य भी। वह प्रेरक आदर्श भी है और उसकी निष्पत्ति भी। निस्सीमकी प्राप्तिके लिए आत्माका प्रयत्न 'ब्रह्म' कहलाता है। जो अन्तः-प्रेरणा हमें सत्य, ईश्वरके प्रश्न उठानेके लिए वाध्य करती है, वह स्वयं दिव्यशक्ति है, ईश्वर है। ब्रह्म प्राणका ही दूसरा नाम है। जैसा कि 'विजडम ऑव सॉलोमन' में कहा गया है—'यह ईश्वरकी शक्तिका प्राण' है। ब्रह्म ईश्वरीय भावना भी है और साथ ही ईश्वर भी। उसके ये दोनों अर्थ परस्पर-सम्बद्ध हैं। ऐसा लगता है मानो सांसारिक कार्यके मोहसे अभिभूत होकर अनुभवा-तीत आत्मा नभित होता है और आनुभविक आत्माके नेत्रोंको स्पर्श कर लेता है। जव व्यक्ति अपनी आत्माको समस्त बाह्य व्यापारों-से हटाकर अपनी प्रवृत्तियोंको समेटकर अन्तर्मुख हो जाता है और ध्यानको केन्द्रित करनेका प्रयत्न करता है, तब उसको अकस्मात् एक गुह्य, विचित्र और अद्भुत अनुभव होता है, जो उसके भीतर प्रखरसे प्रखरतर होता जाता है, उसपर हावी हो जाता है और अन्ततः वह उसकी अपनी ही सत्ता, उसका अपना ही अस्तित्व वन जाता है।

भले ही ईश्वर एक विचार-मात्र हो और व्यक्तिकी कल्पनासे परे उसकी कोई वास्तविकता न हो, फिर भी जो शक्ति ईश्वर-सम्बन्धी विचारको जन्म देती है और उसको अनुभवगम्य बनानेकी चेष्टा करती है, वह स्वयं दिव्य है, ईश्वरीय है। पूर्णत्वके लिए



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



हमारी चाह, अभावकी हमारी भावना, अनन्तताकी चेतना प्राप्त करनेके लिए हमारी चेष्टा, आदर्शके प्रति हमारी लगन—ये सब ईश्वरीय साक्षात्कारके ही साधन हैं। सभी प्राणियोंमें ये बातें किसी न किसी मात्रामें मिलती हैं। यह तथ्य ही कि हम ईश्वरका सन्धान करते हैं, स्पष्टतः सिद्ध करता है कि उसके ( ईश्वरके ) विना जीवनकी कोई स्थिति नहीं। ईश्वर ही जीवन है—इस तथ्यका अभिज्ञान ही आध्यात्मिक चेतना कहलाता है।

जब हम यह कहते हैं कि ईश्वरका अस्तित्व है, तब इसका अर्थ है कि आध्यात्मिक अनुभव प्राप्तव्य है, इस अनुभवकी सम्भाव्यता ईश्वरकी वास्तविकताका सबसे बड़ा निर्णायक प्रमाण है। ईश्वर-प्रदत्त है और वह आध्यात्मिक अनुभवका वास्तविक सार है। अन्य सभी प्रामाण ईश्वरके विवरणमात्र हैं। परिभाषा और भाषाके विषय हैं। ईश्वरका अस्तित्व केवल इस बातकी अपेक्षा नहीं रखता कि लोगोंने उसके लिए क्या-क्या प्रमाण उपस्थित किये हैं, अथवा तथा-कथित चमत्कारिक घटनाओंसे क्या साक्ष्य मिलता है। धर्म-ग्रन्थोंके प्रमाण, धर्मसंस्थाकी परम्पराएं या अध्यापकोंके, जो ईश्वरका उद्घोष तो कर सकते हैं, परन्तु प्रमाणित नहीं कर सकते, वाक्छल हममेंसे कइयोंके, जो विज्ञान और तर्कनाकी संतति हैं, मनमें ईश्वरके प्रति विश्वास नहीं जमा सकते, किन्तु हमें आध्यात्मिक अनुभवकी तथ्यता-को तो स्वीकार करना ही होगा, क्योंकि यह अनुभव प्राथमिक और प्रत्यक्ष होता है। धर्मशास्त्रोंकी बातोंपर भले ही हम लोगोंमें मतभेद हो, परन्तु तथ्योंको हम अस्वीकार नहीं कर सकते। अलावके चारों ओर बैठकर हुक्का गुड़गुड़ानेवाले लोगोंकी लालबुझक्कड़ी अटकलबाजियोंसे हमारे मनमें भले ही ईश्वरके



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



प्रति विश्वास न जमे, किन्तु हमारे भीतर जीवनकी जो आग जल रही है, वह हमें विवश करती है कि हम उसके अस्तित्वको स्वीकार करें।

जबकि आत्मज्ञान तथ्य है, तब यथार्थताका सिद्धान्त एक अनुमान है। यथार्थ या सत्यके सम्पर्कमें आना एक बात है और उसके बारेमें राय प्रकट करना दूसरी बात। धार्मिकताके रहस्य और ईश्वरके प्रति विश्वासमें अन्तर है। कोई मनुष्य धर्मशास्त्र या अध्यात्मविद्याके सम्बन्धमें बहुत कुछ ज्ञान रखकर भी धर्मकी भावनासे शून्य हो सकता है। हिन्दू-मनीषियोंने हेतुवादी आत्म-निर्भरताके विरुद्ध हमें चेतावनी दी है। ज्ञानियोंको अज्ञानियोंकी अपेक्षा कहीं अधिक संकट मोल लेना पड़ता है। जैसा कि वृहदारण्यक-उपनिषद्में लिखा है — जो अविद्या ( कर्म ) की उपासना करते हैं, वे तो अज्ञान-रूपी अन्धकारमें प्रवेश करते ही हैं, किन्तु जो विद्या ( कर्मकाण्ड-रूपी त्रयी विद्या ) में रत हैं, वे उनसे भी अधिक अन्धकारमें प्रवेश करते हैं। हम दो प्रकारसे अपने आपको धोखा देते हैं; एक प्रकार तो है, उन अज्ञानियोंका जो सहज ही यह मान लेते हैं कि जिस संसारको हम अपने चर्म-चक्षुओंसे देख रहे हैं, वही सब कुछ है; दूसरा प्रकार जो कुछ श्रमसाध्य है, उन ज्ञानियोंका है जो प्रकृतिवादकी सत्यताकी तो स्थापना करते हैं, परन्तु निर्णीत सत्यके विषयमें धोखेमें रहते हैं। इनमेंसे दोनों ही हमें हमारे अस्तित्वकी यथार्थतासे अपरिचित रखनेमें सफल हो जाते हैं।

आत्मान्वेषणकी प्रक्रिया बौद्धिक विश्लेषणका परिणाम नहीं है, वरन् प्रकृतिपर पूर्ण स्वामित्व प्राप्त करनेसे मनुष्यमें जो सम-ग्रता उत्पन्न होती है, उसीका परिणाम है। चिन्तनाके प्रति यह प्राचीन आस्था कि यदि हम सही ढंगसे सोचें तो उचित रूपसे कार्य



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



करेंगे, सत्य नहीं है। मात्र ज्ञान एक सजावटकी सामग्री है, प्रदर्शनकी वस्तु है, जिसकी जड़ें नहीं होतीं। यह मनको मोहमुक्त नहीं कर पाता। छान्दोग्य-उपनिषद्में नारदने यह स्वीकार किया है कि धर्मग्रन्थोंका सम्यक् आलोड़न करनेके पश्चात् भी उन्हें अहं ( आत्म ) की सत्य प्रकृति ज्ञात नहीं हो सकी। उसी उपनिषद्में श्वेतकेतुके विषयमें कहा गया है कि एक निर्धारित अवधि-तक धर्मशास्त्रोंका अध्ययन करनेके बाद भी उसमें अहंकार ही आया, सच्चा आत्मतत्त्वज्ञान नहीं। आध्यात्मिक-उपलब्धिसे बुद्धिशाली व्यक्तिमें पूर्णता आती हो, ऐसी बात नहीं; वरन् इससे तो उसमें एक प्रकारकी ऊर्जा बाहरसे प्रविष्ट होने लगती है और उसको अनुप्राणित कर देती है। कठोपनिषद्में कहा है: 'क्योंकि स्वयंभू भगवान्ने समस्त इन्द्रियोंके द्वार बाहरकी ओर जानेवाले ही बनाये हैं, इसलिए मनुष्य इन्द्रियोंके द्वारा बाहरकी वस्तुओंको ही देखता है, अपनी अन्तरात्माको नहीं। किसी बुद्धिमान् मनुष्यने ही अमरपद पानेकी इच्छा करके चक्षु आदि इन्द्रियोंको बाह्य विषयोंकी ओरसे विमुख करके अन्तरात्माको देखा है।' यहाँ इस बातपर बल दिया गया है कि अन्तरात्माको वही व्यक्ति अपने आध्यात्मिक नेत्रसे देख सकता है, जिसका हृदय विशुद्ध हो; जो लोभ, ईर्ष्या, घृणा और सन्देह आदि मनोविकारोंपर विजय प्राप्त कर चुका हो, यह मनुष्यके जीवनका पूर्णकाम हो जाना है। इस दशामें उसके अस्तित्वका प्रत्येक पक्ष अपने उच्चतम उत्कर्ष-पर पहुँच जाता है, सभी चेतनाएँ एकत्र हो जाती हैं, समग्र मन आगे बढ़कर एक ही स्पन्दनशील क्षणमें ऐसी बातोंकी अनुभूति कर लेता है, जिनको सहज-रूपसे अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता। यद्यपि वाणी इसे व्यक्त नहीं कर-सकती और मन इसकी अव-



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

[ प्रत्येकके अन्तस्‌में विद्यमान ]

धारणा नहीं कर सकता, तथापि आत्माकी अभिलाषा और प्रेम, उसकी इच्छा और उद्वेग, उसकी साधना और चिन्तना; सभी कुछ उच्चतम चेतनासे ओतप्रोत हो जाता है। अपने अस्तित्व या जागरूकताकी इस दशाको प्राप्त करना मनुष्य-जीवनकी सार्थकता है। ईश्वर और जीवन सम्बन्धी किसी व्यक्तिके विचारोंके लिए धर्मको ही प्रमाण माना जा सकता है, उसके विषयमें कोरे तर्क-वितर्कको नहीं। ईश्वर कोई बौद्धिक विचार या नैतिक सिद्धान्त नहीं है, वरन् गम्भीरतम चेतना है, जिससे विचार और नियम प्रसूत होते हैं। वह कोई तर्कसम्मत रचना नहीं है, अपितु ऐसी प्रत्यक्ष वास्तविकता है जो हममेंसे प्रत्येकके अन्तस्‌में विद्यमान है और जो हममेंसे प्रत्येकको उसकी यथार्थता प्रदान करती है। हमारा उद्धार धार्मिक-सम्प्रदायोंके द्वारा नहीं होता, वरन् ज्ञान या आध्यात्मिक-ज्ञान द्वारा होता है। यह मनुष्यके पुनर्गठनका परिणाम है। तार्किक ज्ञानकी तुलना उस अंगुलीसे की जा सकती है जो किसी पदार्थकी ओर इंगित तो करती है, किन्तु उस पदार्थके दृष्टिगत होते ही विलुप्त हो जाती है। सच्चा ज्ञान जागरूकता है, परमात्माके साथ आत्माकी एकरूपताकी अनुभूति है, स्वच्छ दृष्टिवाली अन्तःप्रेरणा है, अन्तर्दृष्टिका आरम्भ है, जिसको तर्कशास्त्र अपने विवेचन-का विषय बनाता है और धर्म-ग्रन्थ जिसका उपदेश करते हैं। संयमी जीवन ज्ञानको प्रज्ञामें बदल देता है।

[ प्राच्य धर्म और पाश्चात्य विचार ]

आजकल अधिकांश आत्मज्ञानी खामोश हैं और भले लोग शक्ति-विहीन हैं, जब कि नासमझ लोग हल्ला मचाये हैं और हृदयहीन शासन कर रहे हैं।

—रस्किन



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

# 'शान्तरस' के स्रोत

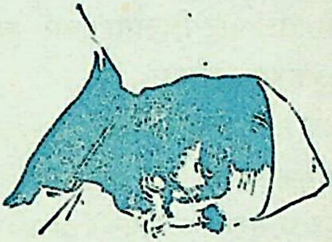

परशुराम चतुर्वेदी

काव्यतत्त्वका विवेचन करनेवाले संस्कृतके प्रमुख उपलब्ध ग्रंथोंमें सबसे प्राचीन भरतमुनिका 'नाटचशास्त्र' समझा जाता है, जिसके रचना-कालका ईस्वी-सन्के पूर्व द्वितीय शतीसे लेकर उसके उत्तर द्वितीय शती तकके बीच कभी, होना अनुमान किया गया है। इस ग्रंथके एक प्रकाशित संस्करणके अन्तर्गत, रसोंकी चर्चा करते समय, निम्नरूपमें कथन किया गया पाया जाता है:—

'शृंगार - हास्य - करुण-
रौद्र-वीर - भयानकाः।
वीभत्साद्भुत संज्ञौ चेत्यष्टौ
नाट्ये रसाः स्मृताः।
एते ह्यष्टौ रसाः प्रोक्ता
द्रुहिणेन महात्मना॥

अर्थात् नाटचमें शृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, वीभत्स एवं अद्भुत नामक आठ रस कहे गये हैं और इन्हीं आठों

१. काव्यमाला(४२)संस्करण, निर्णयसागरप्रेस, मुम्बई ६, १५—६पृ० ९१



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



रसोंकी चर्चा कभी स्वयं महात्मा द्रुहिण अर्थात् ब्रह्माने भी पहले पहल की थी जिससे यह भी परिणाम निकाला जा सकता है कि रसोंकी यह संख्या अत्यन्त प्राचीन कालसे ही प्रसिद्ध है। इसीप्रकार 'नाट्यशास्त्र' के ही एक आगे आनेवाले श्लोकमें यह भी कहा गया मिलता है:—

'रतिर्हासश्च शोकश्च क्रोधोत्साहौ भयं तथा।
जुगुप्सा विस्मयश्चेति स्थायिभावाः प्रकीर्तिताः॥[1]

अर्थात् 'उक्त आठो रसोंके स्थायीभाव क्रमशः रति, हास, शोक, क्रोध, उत्साह, भय, जुगुप्सा एवं विस्मय नामोंसे प्रसिद्ध हैं' जिससे उनकी आठवाली संख्याकी और भी पुष्टि हो जाती है। इसके सिवाय महाकवि कालिदासके प्रसिद्ध नाटक 'विक्रमोर्वशीयम्' में भी एक स्थलपर प्रसंगवश कहा गया दीख पड़ता है:—

'मुनिना भरतेन यः प्रयोगो भवतीष्वष्टरसाश्रयो नियुक्तः।
ललिताभिनयं तमद्यभर्त्ता, मरुतां द्रष्टुमनाः सलोकपालः॥[2]

जिससे स्पष्ट है कि यहाँपर भी भरतमुनि द्वारा किये गये उस प्रयोगकी ही चर्चा पायी जाती है, जो केवल आठ रसोंपर आश्रित है और इस प्रकार, उक्त नाटकके रचना-काल अर्थात् संभवतः चौथी पांचवीं ईस्वी शती तक, हमें किसी ऐसे नवें रसके सम्बन्धमें कोई संकेत नहीं मिलता; जिसे कभी उनकी ओरसे स्वीकार किया गया कहा जा सके।

काव्यशास्त्रके प्रसिद्ध मर्मज्ञ राजशेखर (ईस्वी शती ९ वीं-१०वीं) ने अपने ग्रंथ 'काव्य-मीमांसा' के एक स्थलपर कहा है कि वास्तवमें, रसके सर्वप्रथम प्रतिपादनकर्ता नन्दिकेश्वर थे और नाटकवाले विषयके

---

१. वही, १७

२. विक्रमोर्वशीयम् ( निर्णयसागरप्रेस, मुम्बई ) २, १८।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



पुरस्कर्ता भरतमुनि थे।[1] ये नन्दिकेश्वर कौन थे इसका ठीक पता नहीं चलता, किंतु, यदि यह संभव हो कि ये उस नन्दिकेश्वरसे अभिन्न हैं; जिनकी चर्चा वात्स्यायनने अपने 'कामसूत्र' ( १, १–८ ) में की है; तो हम इन्हें भी एक प्राचीन आचार्य मान सकते हैं। 'भाव-प्रकाश' ग्रंथके रचयिता शारदातनय ( ईस्वी शती १३वींका मध्य-भाग )ने तो किसी नन्दिकेश्वरके विषयमें यहाँ तक बतलाया है कि 'ब्रह्माने शिवके आदेशपर लोकोंकी रचना की और उनके समक्ष उपस्थित होकर, नन्दिकेश्वरने उन्हें नाटचकी शिक्षा दी तथा उन्हें यह भी परामर्श दिया कि तुम इसे 'भरतों' अथवा अभिनेताओंको सिखला दो'[2]। अतएव यदि ये नन्दिकेश्वर उन नन्दीसे भिन्न नहीं हैं जो शिवके निकटवर्ती 'नन्दीके' भी नामसे प्रसिद्ध हैं। उस दशामें ये भरतमुनिसे भी अधिक प्राचीन ठहराये जा सकते हैं और शारदातनयका यह कथन कि 'जिस समय ब्रह्माके निर्देशानुसार भरतोंने 'त्रिपुरदाह' नामका अभिनय किया; तो उसे देखते ही उनके चारों मुखोंसे चार भिन्न-भिन्न वृत्तियोंके रस श्रृंगार, वीर, रौद्र एवं वीभत्स नामसे उत्पन्न हो गये'। इस बातकी भी पुष्टि कर सकता है कि भरतमुनिने सर्वप्रथम संभवतः इन चार रसोंको ही प्रधानता दी। इसके सिवाय 'दशरूपक' के रचियता धनंजयके अनुसार काव्यार्थके आधारपर होनेवाले 'सम्भेद' से जो किसी सहृदय व्यक्तिके चित्तमें आत्मानन्दकी अनुभूति हुआ करती है उसे 'स्वाद' वा काव्यानंद कहते हैं और वह विकास, विस्तार, क्षोभ एवं विक्षेपके

१. 'रूपक निरूपणीयं भरतः रसाधिकारिकं नन्दिकेश्वरः' 'काव्य-मीमांसा' ( गायकवाड प्राच्यग्रन्थमाला; बड़ौदा १९३४ ई० ) पृ. १

२. V. Raghavan. "The number of Rasas ( Adyar Library 1940 ) 9.



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



रूपोंमें चार प्रकारका होता है और क्रमशः इन्हीं चारोंको शृंगार वीर, वीभत्स एवं रौद्र रसोंका नाम देकर, हमें फिर उनसे हास्य, अद्भुत, भयानक एवं करुण रसोंको भी व्युत्पन्न हुआ मानना पड़ता है; तथा इस प्रकार उक्त सारे आठों रस अस्तित्वमें आ जाते हैं।[1]

अतएव आज तक उपलब्ध उपर्युक्त सामग्रीके आधारपर हम यही कह सकते हैं कि आचार्य भरतमुनिने केवल शृङ्गार, वीर, वीभत्स, भयानक, हास्य, अद्भुत, रौद्र एवं करुण नामक आठ रसोंको ही स्वीकार किया था। इनके साथ उन्होंने नवें शान्त-रसका नाम नहीं लिया था और न उन्होंने इसके लिए किसी 'निर्वेद' अथवा 'शम' जैसे स्थायी रसके पृथक् होनेकी ही कल्पना की थी। फिर भी उनके 'नाटच-शास्त्रम्' ग्रंथके अब तक प्रकाशित कतिपय भिन्न संस्करणों अथवा उनपर लिखे गये भाष्य-ग्रंथोंको देखनेसे ही पता चलता है कि वास्तवमें उन्होंने 'शांत' रस नामके एक नवें रसका भी नाम लिया था और उसके स्थायी भाव 'शम' की भी चर्चा की थी, तदनुसार उस ग्रंथके वे ही श्लोक जिनके आधारपर केवल आठ रसोंका होना अनुमान किया जाता था, हमें यहाँपर अपने किंचित् परिवर्तित रूपोंमें प्रकाशित मिलते हैं और हमें उनपर की गयी टीका-टिप्पणियोंका भी पता चल जाता है। इन नये रूपोंमें वे इस प्रकार दीख पड़ते हैं:—

[2]शृङ्गार-हास्य-करुणाः रौद्र-वीर-भयानकाः।
वीभत्साद्भुत-शान्ताश्च नव नाट्ये रसाः स्मृताः॥
रतिर्हासश्च शोकश्च क्रोधोत्साहौ भयं तथा।
जुगुप्सा-विस्मय-शमाः स्थायिभावाः प्रकीर्तिताः॥

---

१. 'हिन्दी दश रूपक' ( अनुवादक डा. गोविन्द त्रिगुणायत ) साहित्य-निकेतन कानपुर, चतुर्थ प्रकाश श्लोक ४३ पृ. २१७ )

२. The number of Rasas के पृष्ठ १३ पर उद्धृत।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



अर्थात् शृङ्गार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, बीभत्स अद्भुत एवं शांत ये नव रस नाटचमें कहे जाते हैं और इनके स्थायी भाव भी क्रमशः रति, हास, शोक, उत्साह, जुगुप्सा, बिस्मय तथा शम नामोंसे प्रसिद्ध हैं। जो स्पष्टतः उनके किसी उल्लेखनीय पाठान्तरको भी सूचित करता है। एक ही प्रसिद्ध ग्रंथके अंतर्गत इन दो पाठान्तरोंका समावेश कब और कैसे सम्भव हुआ तथा इनमेंसे किसे प्रामाणिक समझा जाये इनका ठीक निर्णय कदाचित् अभी तक नहीं हो पाया[2]। प्रत्युत इनके आधारपर बहुत दिनों तक पूरा विवाद भी होता आया है। फलतः कुछ लोगोंने जहाँ शांत रसको अभिनयकी दृष्टिसे उपयुक्त ठहराते हुए, इसका भरतमुनिके नाट्य-शास्त्रके अन्तर्गत स्वभावतः समाविष्ट न किया जाना कहा है, वहाँ दूसरोंने ऐसे तर्कोंका प्रतिवाद किया है और इस रसको विशेष महत्त्व तक दिया है।

यहाँपर यह उल्लेखनीय है कि शांत रसको नवें रसके रूपमें स्वीकार करनेवाले आचार्योंमेंसे कुछने इस बातकी भी चर्चा की है कि इसका अस्तित्व भरतमुनिके अतिरिक्त कतिपय अन्य प्राचीन ग्रंथकारों द्वारा भी स्वीकृत किया गया है। उदाहरणके लिए शारदातनयका कथन है कि रसोंकी उत्पत्तिके विषयमें पहले किसी वासुकिने भी नारदको बतलाया था तथा इन्होंने रजोगुण एवं तमोगुणसे रहित और बाह्यार्थोंसे अस्पष्ट सतोगुणप्रधान रसको शांतरसका नाम दिया था[१]। परन्तु ये वासुकि कौन थे और इनका आविर्भाव कब हुआ था आदि जैसी बातोंका कोई स्पष्ट पता नहीं चलता। इसी प्रकार इधरके किसी धर्मसूरि नामक लेखकने भी अपने 'साहित्य-रत्नाकर' ग्रंथमें ऐसा अनुमान प्रकट किया है कि 'कोहल' नामधारी

---

2. The Nmuber of Rasas L. 11



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



आचार्यने शान्तरसके स्थायीभावके रूपमें 'शम' वा उत्साह वा निर्वेदको स्वीकार किया है[1]। इसके सिवाय काव्य-शास्त्र-विषयक विविध ग्रन्थोंके देखनेसे यह भी पता चलता है कि रसोंकी वास्तविक संख्या केवल आठ अथवा नव तक ही सीमित नहीं समझी जाती रही है, अपितु इसे बढ़ाकर ड्योढ़ी–दुगुनी तक पहुँचानेकी चेष्टा की गयी है। इस सम्बन्धमें प्रसिद्ध है कि रुद्रट ( ९वीं ईस्वी शती ) ने 'प्रेयान्रस' की वृद्धि की है, विश्वनाथ ( १४वीं ईस्वी शती ) ने 'वत्सलरस' की अवतारणा की है, रूपगोस्वामी ( १५वीं–१६वीं ईस्वी शती)ने 'भक्तिरस' का प्रतिपादन किया है, अभिनवगुप्त (१०वीं—११वीं ईस्वी शती) ने 'स्नेहरस' का समावेश किया है तथा 'रसतरङ्गिणी' कारने किसी विचित्र 'मायारस' की भी कल्पना की है। इस प्रकार वह संख्या आगे बढ़ती ही चली गयी है यहाँ तक कि मधुसूदन सरस्वती जैसे कतिपय लोगोंका तो इस प्रकार किया गया कथन भी मिलता है कि 'जितनी भी चित्तद्रुतियां वा मनोविकार हैं वे सभी स्थायी-भाव हैं तथा वे उपयुक्त विभावादिके कारण, विशिष्ट रसत्वको प्राप्त हो सकते हैं।'[2] और 'काव्यालङ्कार' के टीकाकार नमिसाधु कहते हैं कि 'ऐसी कोई चित्त-वृत्ति ही नहीं जो परिपुष्ट होकर रसावस्थाको प्राप्त न हो सके'[3]।

---

१. कोहलस्तु उत्साहो वा निर्वेदा वा शमो वा अस्य स्थायीत्युवाच।
See Journal of Oriental Research Madras VoL 5 L. 20

२. यावत्यो द्रुतयश्चित्ते भावास्तावन्त एव हि।
स्थायिनो रसतां यान्ति विभावादि समाश्रयात्॥
—'भगवद् भक्तिरसायन वाराणसी १९५० ( २.२६ )पृ० १६८।

३. यदुत सा नास्ति कापि चित्तवृत्तिः मा परिपोषं गतां न रसीभवति।
—काव्यदर्पणम् ( रामदहिन मिश्र ) पृ० १५५ से उद्धृत काव्यालंकार टीका ४-५



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



इसके विपरीत हमें ऐसे लोगोंकी भी कमी नहीं दीख पड़ती जो किसी एक चित्त-वृत्तिको प्रधानता देकर, उसके ही अन्तर्गत अन्य सभीका भी समावेश कर देना चाहते हैं। और इस प्रकार उसे एक-मात्र 'रस' के रूपमें स्वीकार करते हुए तक भी जान पड़ते हैं। उदाहरणके लिये प्रसिद्ध कवि भवभूतिने अपने 'उत्तररामचरित' नाटकमें कहा है कि, वास्तवमें 'करुण' ही एकमात्र रस है जो निमित्त-भेदके कारण, अन्य रसोंके भी रूपोंमें प्रकट होता हुआ प्रतीत होता है; जिस प्रकार समुद्रके जल तथा उसकी ऊर्मि तथा बुद्बुदके सम्बन्धमें दीख पड़ता है[1]। भोजराज (११ वीं ईस्वी शती) एकमात्र 'अहंकार' को प्रधानता देकर उसीको शृङ्गार, अभिमान एवं रस भी ठहराते हैं और कहते हैं कि रति आदिके जितने भी भाव हैं वे सब इसीसे सम्पन्न होते हैं; तथा उन सभीका मूल उत्स यही कहा जा सकता है।[2]

इनका तथा 'अग्निपुराण' के रचियताका मत वस्तुतः शृङ्गार रसको सर्वप्रधान रस स्वीकार करनेका भी जान पड़ता है।[3] जिसके अनुसरणमें अन्य अनेक आचार्यों एवं कवियोंने भी लिखा है और इस प्रकार उसे 'रसराज' तककी पदवी दे डाली है। इसी प्रकार आचार्य विश्वनाथने अपने 'साहित्यदर्पण' ग्रंथ में रसका

---

१. एको रसः करुण एव निमित्तभेदात्, भिन्नः पृथक् पृथगिवाश्रयते विवर्तान्। आवर्त्तबुद्बुदतरङ्गमयान् विकारनम्भो यथा सलिलमेव हि तत् समस्तम् (३-४७)

२. तच्च आत्मनोऽहंकारगुणविशेषं ब्रूमः। स शृङ्गारः सोभिमानः सः रसः। तत एव रत्यादयो जायन्ते।
(शृंगारप्रकाशम् निर्णयसागर प्रेस बम्बई)

३. वयन्तु शृङ्गारमेव रसनाद्रसमामनामः। —वही



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



सार चमत्कारको ठहराया है और बतलाता है कि इसीके कारण सर्वत्र अद्भुत रसका अनुभव होता है[1]। इसके सिवाय कवि कर्णपूर (१६वीं-१७वीं शती) का तो यहाँ तक कहना है कि वास्तवमें प्रेम ही एक ऐसा भाव है जिसके अखंड रसमें सभी अन्य भाव समुद्रमें उसकी तरंगोंके समान उठते और विलीन होते रहा करते हैं[2]। इनके अनुसार रसका धर्म आनन्द है। जिसे हम एक भावके रूपमें अनुभव करते हैं उसमें नानात्वका बोध, हमें केवल उपाधि-भेदके कारण हो जाया करता है; तथा रति आदिको इसकी उन उपाधियोंकी संज्ञा भी दी जा सकती है।[3] अतएव यदि निष्कर्षके रूपमें बतलाया जाय तो; इसे यों भी कह सकते हैं कि 'रस-बुद्धि हमें अपनी आत्माके अतिरिक्त अन्य कहीं भी नहीं हो सकती; क्योंकि वस्तुतः केवल आत्माकी ही दृष्टिसे हमें सभी कुछ प्रिय जान पड़ता है, तथा 'आत्म-रस' ही सत्य, ध्रुव, विभु एवं नित्य कहा जा सकता है।[4]

---

१. रसे सारश्चमत्कारः सर्वत्राप्यनुभूयते।
तच्चमत्कारसारत्वे सर्वत्राप्यद्भुतोरसः॥ —'साहित्य-दर्पण'

२. उन्मज्जन्ति निमज्जन्ति प्रेम्ण्यखण्डरसत्वतः।
सर्वे रसाश्च भावाश्च तरंगा इव वारिधौ॥
( 'अलंकारकौस्तुभ' से 'काव्यदर्पण' पृ. १५७ से उद्धृत। )

३. रसस्यानन्दधर्मत्वात् एकध्यं भाव एव हि।
उपाधिभेदान्नानात्वं रत्यादय उपाधयः॥
( वहीसे The Number of Rasas 179 में उद्धृत )

४. आत्मनोऽन्यत्र यातु स्यात् रसबुद्धिर्न सा ऋता।
आत्मनः खलु कामाय सर्वमन्यत् प्रियं भवेत्।
सत्यो ध्रुवो विभुर्नित्यो एक आत्मरसः स्मृतः॥
( काव्यदर्पण पृ०१५८ में उद्धृत )



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



इस प्रकार रस तत्त्वकी व्याख्या केवल मनोवैज्ञानिक ही न रह कर आध्यात्मिक वा दार्शनिक मार्गकी ओर भी उन्मुख हो पड़ती है। ऐसी दशामें ऐसे प्रश्नोंका भी उठना स्वाभाविक है कि क्या जिस आनन्दको हम 'काव्यानंद' का नाम देते हैं; वह आत्मरस कहे जानेके कारण कहीं ब्रह्मानंदकी दशा तक तो नहीं पहुंच जाता और यदि नहीं तो इन दोनोंमें क्या अंतर हो सकता है ? यह प्रायः सुना जाता है कि 'काव्यानंद' 'ब्रह्मानंद' का 'सहोदर' हुआ करता है; जिसका अभिप्राय यह है कि उसमें केवल सुख ही सुखका अनुभव हुआ करता है और किसी प्रकारके दुःखको उसके अंतर्गत कोई स्थान नहीं है। परंतु इसके साथ ही हमें ऐसा भी जान पड़ता है कि काव्यकी अनुभूति सदा केवल सुखमात्रकी ही परिचायिका नहीं हो सकती। जब कभी उसमें शोक, क्रोध, भय, अथवा, जुगुप्सा जैसे भावोंकी व्यंजना की गयी मिलेगी और तदनुसार हमें वहाँपर रसकी निष्पत्तिका अनुभव होगा, यह स्वाभाविक है कि हम उस दशामें कभी अमिश्रित सुखका ही आस्वादन नहीं कर सके। उपर्युक्त भावोंकी सफल अभिव्यक्ति हमें सदा तदनुकूल दशाओंमें ही आजानेको वाध्य करेगी और हमें कभी विशुद्ध और अमिश्रित आनंद नहीं मिल सकेगा। इसीलिये कहते हैं कि 'नाट्यदर्पण' के रचयिता रामचन्द्र एवं गुणचन्द्र ने **'सुखदुःखात्मको रसः'** जैसा भी कथन किया है और उसकी 'वृत्ति' के अन्तर्गत यह प्रतिपादन करनेकी चेष्टा की है कि कुछ रस अवश्य दुःखपरक भी होते हैं तथा यदि हम उनसे किसी प्रकारका आनन्द लिया करते हैं; तो वह केवल इसीलिये कि हमें उसके साथ 'कला-चातुर्य' का भी बोध हो जाया करता है[1]। फिर भी बहुतसे अन्य आचार्योंने इस मतको सर्वथा समीचीन नहीं ठहराया

---

The Number of Rasas' 156



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



हैं; क्योंकि उनके अनुसार इससे काव्यानंदकी भी गणना उस कोटिमें की जाती जान पड़ती है जिसे लौकिक-भाव कहा जाता है; परन्तु उसी बातको मधुसूदन सरस्वतीने एक दूसरे ढंगसे कहा है और उन्होंने बतलाया है कि सांख्य द्वारा प्रतिपादित सत्त्व, रजस् तथा तमस् नामक तीनों गुणोंमेंसे केवल प्रथम ही 'सुखरूप' है। जिस कारण यदि रजोगुण व तमोगुणपरक भावोंमें किसी सुखका अनुभव होता है; तो वह केवल इसलिये कि उनमें किसी न किसी मात्रा तक सतोगुणका भी संमिश्रण रहा करता है[1]। सभीमें एक समान सुख नहीं मिला करता। इसी प्रकार उन्होंने इस विषयपर वेदान्तमतके अनुसार भी अपना मत प्रकट किया है और अन्तमें संभवतः इस सिद्धान्तको ही प्रधानता दी है कि जिस किसी भी भावको हम 'आनन्द' की संज्ञा देते हैं; वह वस्तुतः 'ब्रह्मानन्द' से भिन्न नहीं कहा जा सकता; क्योंकि स्वयं ब्रह्म ही आनन्दस्वरूप है और उसे ही हम सारे आनन्दोंका मूल उत्स भी ठहरा सकते हैं। अतएव 'ब्रह्मानन्द' की तुलनामें हम काव्यानन्दको 'लौकिक' कह सकते हैं। जिस प्रकार इसके आगे भी सांसारिक आनन्द स्वभावतः लौकिक बतलाया जाता है।

इस प्रकार देखते हैं कि, जिस किसी भी समयसे हमारे यहाँ 'रस' के विषयपर विचार किया जाना आरंभ हुआ हो, उसके महत्त्व, उसकी संख्या तथा उसकी व्यापकता आदिको लेकर हमारे आचार्योंने बड़ी गम्भीरताके साथ विवेचन किया है। रसके विषयने उनका

---

१. क्रोधशोकभयादीनां साक्षात्सुखविरोधिनाम्।
रसत्वमभ्युपगतं तथानुभवमात्रतः॥
—भगवद् भक्तिरसायन
(२,७७ पृ० २४१)

तथा समूहालम्बनात्मैका जायते सात्विकी मतिः।
सानन्तरक्षणेऽवश्यं व्यनक्ति सुखमुत्तमम्॥
(वही ३, १२-३ पृ० २५०-१)



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



ध्यान सर्वप्रथम, कदाचित् नाट्य वस्तुका निरूपण करते समय अथवा अभिनयादिका नियम निर्धारित करनेके अवसरपर एक विशेष प्रकारकी परिस्थितिमें ही आकृष्ट किया था; किन्तु आगे चलकर इसे अन्य दृष्टियोंसे भी देखा जाने लगा। इसके अस्तित्वकी कल्पना पूरे काव्यका विषय प्रतिपादित करते समय भी, की जाने लगी और इसका क्षेत्र बहुत व्यापक बन गया। इसके सिवाय इस विषयपर न केवल किसी व्यावहारिक दृष्टिकोणसे ही विचार किया गया; अपितु इसे लेकर समय-समयपर अत्यन्त गूढ़ एवं रहस्यमय तत्त्वों-तकपर मनन किया गया; तथा इसके प्रश्नको एक आध्यात्मिक रूप तक प्रदान कर दिया गया; फलतः नाट्य-कला एवं काव्य-शास्त्रकी परिधिसे बाहर निकल कर यह क्रमशः अध्यात्म-दर्शनको सीमा तकमें प्रवेश कर गया और उपनिषद् साहित्यमें पाये जानेवाले "रसो वै सः" [१] जैसे कतिपय वाक्योंने इस विषयको एक और ही रूप दे डाला। ध्यानावस्थित साधकोंके परमलक्ष्य ब्रह्मानंद तथा साहित्य रसिकोंके अभीष्ट 'काव्यानंद' की चर्चा प्रायः एक साथ और एक ही प्रकारके शब्दोंमें की जाने लगी और इस विषयपर कभी-कभी विभिन्न दर्शनोंके अनुसार तर्क-वितर्क भी किया गया। अतएव इसके पहिले कि वस्तुतः रसको किन भिन्न-भिन्न रूपोंमें कल्पित किया जाय अथवा उनमेंसे किसी एकको 'शान्त रस' की संज्ञा भी दी जाये अथवा नहीं, हमें उचित जान पड़ता है कि उसके तात्त्विक एवं मनो वैज्ञानिक रूपको निर्धारित करनेकी ही चेष्टा कर लें। 'रस' के रहस्यका कुछ परिचय प्राप्त कर लेनेपर ही अपने मूल प्रश्नके विषयमें समुचित निर्णय भी किया जा सकता है। ० ०

---

१. 'यद्वैतत्सुकृतं रसो वै सः। रस ऍ ह्येवायं लब्ध्वानन्दी भवति तैत्तरीयोपनिषद् ( द्वितीय बल्ली सप्तम अनुवाक )



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

# हम भटक गये हैं ?

श्री सुदर्शनसिंह 'चक्र'

आज जो साहित्य प्रकाशित होता है; उसमें जहाँ भी विश्लेषणकी बात आती है—प्रायः सर्वत्र विकासवादका आश्रय लिया जाता है। कला, भाषा आदिके प्रत्येक क्षेत्रका विवेचक विकासको ध्रुव सत्य मानकर अपनी धारणाओंको रूपरेखा देता है। आश्चर्य तो तब होता है, जब विवेचक अपनेको आस्तिक, आध्यात्मिक भी कहता जाता है और विकासवादका फूटा नगाड़ा भी पीटता जाता है।

विकासवाद किसका सिद्धान्त है? डार्विनका नाम मत लीजिये। डार्विन न हुआ होता तो दूसरा कोई उसका स्थान लेता। अतः स्पष्ट समझ लीजिये कि विकासवाद व्यक्तिका नहीं, जड़वादका



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



सत्य है। यदि जगत्का मूलकारण जड़ प्रकृति है, चेतना जड़की विकृतिका ही परिणाम है तो विकासवाद ठीक है। 'न ईश्वर है, न पुनर्जन्म। न प्रारब्ध है और न धर्म-कर्मका कोई मरणोत्तर फल। धर्म असंस्कृत मानवके दुर्बल मनकी सृष्टि है। ईश्वर असभ्य मनुष्यके भयभीत मानसका पुत्र है।' विकासवाद माननेके साथ यह आपको मानना होगा। आप ईश्वर तथा धर्मको भी मानते हैं और विकासके सिद्धान्त-को भी स्वीकार करते हैं; तो आप न विकासवादको सम-झते और न धर्म या ईश्वरको ही जानते हैं।

जो यन्त्र-प्रत्यक्षमें विश्वास करते हैं, जड़-प्रकृति ही सृष्टिका मूल कारण है, इसमें जिनकी आस्था है, उनके लिए विकासवाद माननेके अतिरिक्त उपाय नहीं है। इस सिद्धान्तके अनुसार प्राचीन समाज,प्राचीनतम शास्त्र या ग्रन्थोंकी अपेक्षा आजका समाज, आजके ग्रन्थ अधिक निर्दोष एवं प्रामाणिक हैं। अपने पूर्वजोंसे

### धरती अधरमें

उन दिनों वसिष्ठ और विश्वामित्रमें यह विवाद चल रहा था कि बड़ा कौन है? जब परस्परके विचार-विनिमयसे निर्णय न हो सका, तब दोनों धरणीधर भगवान् शेषके पास पहुँचे। उनके कलहका कारण जानकर शेष भगवान्ने कहा—'मेरे सिरपर पृथ्वीका बोझ है। आपमेंसे कोई इसे क्षणभर धारण करलें, तो मैं निर्णय दे दूंगा।'

विश्वामित्रको बड़ी त्वरा थी। उन्होंने अपने जीवनभरके सम्पूर्ण जप-तप-यज्ञ-व्रत-स्वाध्यायसे अर्जित शक्तिके द्वारा क्षणभर पृथ्वीको धारण करना चाहा; परन्तु वह डगमगाकर गिरने लगी शेषने उन्हें रोक दिया।

वसिष्ठने अपने जीवनके थोड़ेसे भागमें किये हुए सत्सङ्गका एक अंश लगाया। उसकी शक्तिसे पृथ्वी अधरमें स्थिर हो गयी।

शेषने मुसकराकर पूछा-महात्माओ! अब भी निर्णय देनेकी आवश्यकता है?

कहनेका अभिप्राय यह है कि क्षणभर सत्सङ्गकी शक्ति करोड़ों यज्ञ, तप आदिसे बढ़कर है। सत्सङ्ग शक्तियोंका खजाना है।

—आनन्दवाणी भाग ३



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



हम अधिक बुद्धिमान्, श्रेष्ठ एवं सुसभ्य हैं और हमारी अपेक्षा आगे आनेवाली पीढ़ी अधिक बुद्धिमान्, सभ्य एवं सुसभ्य होगी। उसकी कृतियाँ हमारी अपेक्षा अधिक निर्दोष एवं प्रामाणिक होंगी।

अब यह तो कालपुरुषका इस सिद्धान्तके प्रति अनुचित षड्यन्त्र है कि आनेवाली पीढ़ीको उसने 'बीटल-प्रिय' असन्तुष्ट बना दिया है। वर्तमान पीढ़ीसे पहिले यदि समाजके दूषित तत्त्व गाँजा, भाँग, अफीम, शराबसे सन्तुष्ट हो जाते थे; तो वर्तमान पीढ़ीने 'लासर्जिक एसिड' का आविष्कार कर लिया है और उसने इस विकासकी दौड़में 'कोकीन' को बहुत पीछे छोड़ दिया है। अब बहुत शीघ्र युवक इस नवीन एसिडकी सहायतासे पंगु, क्रियाहीन बन सकते हैं। अमेरिका जैसे सम्पन्न विकसित देशमें यह परम विकसित द्रव्य धड़ल्लेसे चल पड़ा है।

विकासकी एक और उच्चतम प्रवृत्ति योरोप-अमेरिकाके सभ्य समाजमें आचुकी है। उसकी थोड़ी छाया इस देशमें भी पहुँची है। यह प्रवृत्ति कहती है—'मनुष्यको (विशेषतः नारीको) नग्न रहना चाहिए। अल्पतम वस्त्र रखना पड़ता है, यह भी दकियानूसी समाजके दबावकी विवशता है। अब आप कहते हैं कि यह पशुत्वकी ओर लौटना है; तो इसे आपकी बुद्धिका दोष कहना होगा; क्योंकि नियमानुसार तो प्रकृति विकास कर रही है न ?

आजका युग कर्मका युग है। क्रियाशक्ति करका काम है, फिर भले वह कितने भी विकसित यन्त्रोंके द्वारा क्यों न प्रतिपादित हो। आप हाथके द्वारा पकड़ना चाहेंगे तो किसे पकड़ सकेंगे ? पदार्थको। चेतना अथवा आनन्द तो हाथकी पकड़में आनेसे रहे। इसका अर्थ है कि सम्पूर्ण क्रिया-शक्ति — समस्त वैज्ञानिक उन्नति केवल पदार्थके क्षेत्रमें — जड़ द्रव्यके विस्तारमें ही सीमित रहेगी।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



सत्, चित् एवं आनन्द पृथक्-पृथक् तथ्य नहीं हैं। एक ही मूल सत्ता है, जिसे सच्चिदानन्द कहा जाता है। उस अतीन्द्रिय-सत्तासे पृथक् कुछ है नहीं; किन्तु व्यवहारमें—जगत्में सत्, चित् अथवा आनन्दमें-से एकको प्रधानता दी जा सकती है—दी जाती है। त्रिगुणात्मिका प्रकृतिमें सत्त्वगुण आनन्दका, रजोगुण चित्का और तमोगुण सत्का परावर्तित स्वरूप ही है और प्रकृतिमें ये तीनों गुण साम्यावस्थामें हों, तब तो प्रलयकी अवस्था रहती है। सृष्टि-कालमें तो कभी कहीं एक गुण प्रधान रहता है और कभी कहीं दूसरा या तीसरा गुण।

इसी प्रकार मनुष्यमें क्रियाशक्ति, भावनाशक्ति एवं विचार शक्ति, ये त्रिविध शक्तियाँ हैं। देह, हृदय और मस्तिष्क ये तीन उपकरण हमारे समीप हैं और जैसे जगत्में प्रत्येक पदार्थ एवं क्रिया त्रिगुणात्मक ही है, वैसे ही मनुष्यकी प्रत्येक चेष्टामें देह, मन तथा मस्तिष्क इन तीनोंका ही कुछ न कुछ भाग रहता है।

जब हम किसी पदार्थ या क्रियाको राजस, तामस अथवा सात्विक कहते हैं, तब तात्पर्य यही होता है कि उस वस्तु या व्यवहारमें उस विशेष गुणका नेतृत्व है। मनुष्यके कर्ममें भावना तथा विवेकका पर्याप्त हाथ होता है। कर्ममें आनन्द आता है और कर्म बुद्धिपूर्वक किया जाता है। इसी प्रकार भावना-प्रेरित कर्ममें भी आनन्द आता है, क्रिया होती है तथा मस्तिष्कका योग रहता है। लेकिन देखना यह है कि हमारे व्यवहारमें प्रधानता किसकी है।

आजका युग क्रियाप्रधान है। वैज्ञानिक-उन्नतिमें आनन्द नहीं है अथवा इसमें मस्तिष्कका कम उपयोग हुआ है, ऐसी बात तो कोई विक्षिप्त व्यक्ति ही कह सकता है। समस्त वैज्ञानिक-उन्नति मानव-मस्तिष्कका ही चमत्कार है और इस उन्नतिने मनुष्यकी सुख-सुविधा



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



बढ़ाकर उसके हर्षोल्लासके क्षणोंमें पर्याप्त वृद्धि की है; किन्तु यह सब होनेपर भी यह क्रिया-प्रधान युग है। बुद्धिको कर्मका अनुगामी बना दिया गया है और फल यह है कि मनुष्य जड़वादी हो गया है। क्योंकि कितनी भी बुद्धिमत्तासे आप हाथोंका सञ्चालन करें, हाथके द्वारा जड़-पदार्थ ही पकड़ा जायगा।

जड़वादका परिणाम है निर्मर्याद भोग-लोलुपता। पदार्थ सदा सीमित रहेंगे और तृष्णाका अन्त है नहीं। फलतः विज्ञानकी उन्नतिके साथ-साथ अशान्ति, संघर्ष एवं विनाशके क्षेत्र एवं उनके साधन बढ़ते ही जायँगे। उदाहरणके लिए चिकित्सा-विज्ञानने मस्तिष्कके निर्माण एवं परिष्कारके क्षेत्रमें पैर रख दिया है। अब यह सम्भव माना जाने लगा है कि आपरेशन, इन्जेक्शन या दवाके द्वारा मनुष्यके मस्तिष्कसे काम, क्रोधादिके भाव सदाको दूर किये जा सकेंगे और जैसा अभीष्ट हो, मस्तिष्कको वैसा बनाया जा सकेगा। कितनी भव्य सम्भावना है ! वर्षोंके साधन, श्रमसे जो नहीं हो पाता, वह कार्य एक गोली, एक सुई या एक चीर-फाड़ कर देगी। लेकिन कितनी भयानक सम्भावना है यह ? किसी तानाशाहके हाथमें यह शक्ति पड़ेगी ( पड़ेगी ही ) और वह पूरे समाजको अपना अनुगामी पशु बना डालेगा। लोग उसकी इच्छानुसार चलनेको ही नहीं, सोचनेको भी विवश हो जायँगे। मनुष्यताकी ही मृत्यु हो जायगी !!

"जन्मौषधितपोमन्त्रसमाधिजा सिद्धयः।"

जन्मसे कुछ लोग सिद्ध होते हैं। शेष लोग ओषधिसे, तपस्यासे, मन्त्र-जप द्वारा अथवा समाधि—मनकी एकाग्रतासे सिद्धि प्राप्त कर सकते हैं। तपस्यासे जो सिद्धि मिल सकती है, वही सिद्धि ओषधिसे भी प्राप्त हो सकती है, यह तथ्य महर्षि पतञ्जलिने बहुत स्पष्ट कर दिया था। तपस्याके द्वारा महर्षि विश्वामित्र दूसरी सृष्टि करनेमें



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



समर्थ होगये थे। अतः वैज्ञानिक यदि मस्तिष्क अथवा नवीन प्राणी-वनाने लगते हैं, शरीरको अजर-अमर बना लेते हैं (सुदूर भविष्यमें) अथवा ऐसे और भी चमत्कार कर दिखलाते हैं तो यह सब ओषधिकी सिद्धि ही मानी जायगी। इससे आस्तिकताके सिद्धान्तको आघात लगनेकी तो कोई बात नहीं है।

साधनाके क्षेत्रमें सर्वत्र यह माना जाता है कि साधक जब सिद्धियोंको स्वीकार करता है, साधनाके पथसे भ्रष्ट हो जाता है। साधनने यदि सिद्धिकी कामना की—सिद्धि प्राप्त करनेमें लगा अथवा अनायास प्राप्त सिद्धिको उसने स्वीकार किया; तो वह अपने पथसे भटक गया। देखना यह है कि वैज्ञानिक उपलब्धियोंको स्वीकार करके एवं उनके अन्वेषणमें लगकर कहीं मानवता ही तो भटक नहीं गयी है। हम मानवताके मार्गपर हैं अथवा उससे भटक गये हैं ?

मनुष्यको ही नहीं, प्राणिमात्रको चाहिये सुख और शान्ति। मनुष्य विवेकशील प्राणी है, अतः प्रकृति-प्रदत्त साधनोंपर सन्तुष्ट न होकर अपने लिए विशेष व्यवस्था करता है। यहीं प्रारम्भमें ही यह स्पष्ट हो जाना चाहिये कि मनुष्यको सुख-शान्ति चाहिये या सुविधा चाहिये ? सुविधाका सुख-शान्तिके साथ कोई सम्वन्ध है भी या नहीं है ?

एक सीमा तक—बहुत छोटी सीमा तक ही सुविधाका सम्वन्ध सुख-शान्तिसे है। भोजन, वस्त्र, आवास, शिक्षा, चिकित्सा, सुरक्षा तथा सामान्य मनोरञ्जन सर्व-साधारणको अपेक्षित है। इसके साथ ही एक सीमातक व्यवहार एवं बोलने-लिखनेकी स्वतन्त्रता भी मनुष्यको चाहिये; किन्तु इन सबके अत्यधिक अभावमें भी मनुष्य सुखी तथा शान्त रहता है, इसके उदाहरण विश्वमें भरे पड़े हैं। अनेक बार तो मनुष्य जान-बूझकर इन सब सुविधाओंको त्यागकर सुखी होता है।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



धार्मिक पुरुषोंकी बात छोड़िये, जड़वादी जगत्के लोग जो साहसिक कार्य सिर लेते हैं—उनमें उन्हें सुख मिलता है। अत्यन्त असुविधाका जीवन, घोर संकटके साथ खेलनेमें भी सुख है, यह किसी अच्छे पर्वतारोहीसे पूछ देखिये।

'मनुष्यको सुविधाकी अपेक्षा सुख-शान्तिकी अधिक आवश्यकता है और सुख-शान्ति पदार्थोंमें नहीं है, अन्तर्मुखतामें है। आनन्दस्वरूप ईश्वर है। जो उससे जितना सामीप्य प्राप्त करेगा, उसे सुख-शान्तिकी उतनी अधिक उपलब्धि होगी।' यह भारतकी प्राचीन धारणा है और यह धारणा ठीक नहीं है, इसे अबतक सिद्ध नहीं किया जा सका है।

'सुख-शान्तिका मूल चेतन है और वह सर्वव्यापक है। वही जगत्का मूल तत्त्व है।' ऐसा माननेवालोंके लिए यह भी मानना आवश्यक ही है कि जो उस चेतनसे जितनी समीपता, जितनी एकात्मताका सम्पादन कर पाता है, वह उतना सुखी और शान्त ही नहीं होता, उतना ही ज्ञानवान्, विवेकशील और सुसभ्य भी होता है। फिर भले वह दिगम्बर रहता हो और अनिकेत हो।

'जगत्का मूलतत्त्व चेतन है।' इसी मान्यताके ऊपर समस्त धर्म स्थित हैं। प्रारब्धवाद, पुनर्जन्म आदि सबको आधार यही धारणा देती है। इसे मान लेनेपर तो यह मानना स्वाभाविक हो जाता है कि निखिल ज्ञानका स्रोत वही चेतन है। इस धारणामें विकासवादके लिये स्थान नहीं है। इसमें तो उस नित्य चेतनका ज्ञान ही नित्य एवं विशुद्ध है। मानव-मनमें आकर, मानव द्वारा व्यक्त होकर तो वह विकृत ही होता है। मनुष्योंकी जितनी परम्परा उसको व्यक्त करेगी, मानवमें स्थित भ्रम, प्रमाद, करणापाटव, विप्रलिप्सा आदि दोष उतने उसे विकृत करते जायँगे। अतः शुद्ध एवं पूर्ण ज्ञान ऋषियोंका—



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



आदि पूर्वजोंका था और आजकी अपेक्षा आगेकी पीढ़ी उस ज्ञानको कुछ न कुछ विकृत ही करेगी। यह विकृति तब तक चलेगी, जब तक जगत्‌के मूलमें स्थित चेतन-सत्ता स्वयं इसे दूर न कर दे। विकृतिकी सीमा है, चेतनका विधान है और अपने विधानका सञ्चालन करनेमें वह समर्थ है। चेतनको मूलमें स्वीकार कर लेनेपर यह सब स्वीकार कर लेना बहुत कठिन नहीं होता।

'जगत्‌के मूलमें चेतन है। उसके सामीप्य अथवा एकात्मतामें ही सुख-शान्ति है। इसे मानकर चलनेके भी दो पथ हैं। एक अन्वेषणका—बुद्धिका और दूसरा आस्थाका-भावनाका। बुद्धि ज्ञानात्मिका है, अतः उसका आश्रय लेकर जो चलेगा, उसे ज्ञानकी उपलब्धि होगी। उसकी अन्तिम अनुभूति है—'प्रज्ञानं ब्रह्म' 'अहं ब्रह्मास्मि।' सत्ता-क्रिया एवं आनन्दका सम्यक् सामञ्जस्य तो यहाँ भी है ही; किन्तु मुख्यता है बुद्धिकी-अन्वेषणकी-ज्ञानकी। दूसरा मार्ग आस्था-भावना-हृदयका मार्ग है। यह रसका मार्ग है और इसकी अन्तिम उपलब्धि है—'रसौ वै सः' 'रसोवायं लब्ध्वा आनन्दी भवति।'

बुद्धिका माध्यम हो या हृदयका; किन्तु ये दोनों ही स्थूल जगत्‌को, ऐन्द्रियक भोगोंको या यों कहिये कि सुविधाको पीठ देकर सुख-शान्तिको लक्ष्य बनाते हैं। भारतका परम्परागत मार्ग यह है। मनुष्यताका मार्ग यही है, इसमें आपको सन्देह है ?

मनुने महायन्त्रका उपयोग मानवके लिये निषिद्ध बतलाया। क्या यह सत्य नहीं है कि आजके विशाल कारखानोंने मनुष्यका जीवन यान्त्रिक बना दिया है? मनुष्य आज सुविधाओंके उत्पादन एवं संग्रहका यन्त्र बनकर रह गया है और आन्तरिक सुख-शान्ति भी कुछ तत्त्व है, यह सोचनेका अवकाश ही उसके समीप नहीं रह गया है। दानवाकार यन्त्रोंकी गड़गड़ाहट और विद्युत् एवं परमाणुशक्तिके प्रचण्ड प्रकाशमें हमारे श्रवण-नेत्र ही नहीं हमारे मन-बुद्धि भी चौंधिया चुके हैं।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

[ हम भटक गये हैं ? ]

हम—मानवता आज अपने मार्गसे—सुख-शान्तिकी उपलब्धिके मार्गसे भटक गयी है और ओषधिजन्य—यन्त्रज सिद्धियों-विज्ञानके चमत्कारोंमें उलझकर विनाशके गर्तकी ओर लुढ़कती जा रही है। इस अवस्थामें जो विवेक खो न बैठें और स्थिर-धीर रहकर अपने ठीक लक्ष्यको पहचानें, वे धन्य हैं। ००

कौन जानै, कहांतें आई कौन की को ही ॥

सखि! नीके कै निरखि, कोऊ सुठि सुन्दर बटोही।
मधुर मूरति मदनमोहन जोहन-जोग,
वदन सोभासदन देखि हौं मोही ॥ १ ॥
सांवरे-गोरे किशोर, सुर-मुनि-चित्तचोर,
उभय अंतर एक नारि सोही।
मनहु वारिद-विधु बीच ललित अति,
राजति तड़ित निज सहज बिछोही ॥ २ ॥
उर धीरजहि धरि, जनम सफल करि,
सुनहि सुमुखि! जनि विकल होही।
को जानै कौने सुकृत लह्यौ है लोचन लाहु,
ताहि तें बारहि बार कहति तोही ॥ ३ ॥
सखिहि सुसिख दई, प्रेम मगन भई,
सुरति बिसरि गई आपनी ओही।
तुलसी रही है ठाढ़ी पाहन गढ़ी-सी काढ़ी,
कौन जानै, कहाँतें आई कौन की को ही ॥ ४ ॥

—गोस्वामी तुलसीदास



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

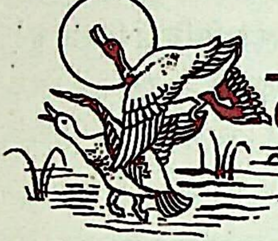

# कहानी

## परोपकार

( श्रीकृष्णगोपाल माथुर )

रामकिशोर अपनी गृहस्थीकी चिन्तामें मग्न हो दफ्तरको जा रहा था। 'कल वेतन मिलते ही प्रथम पत्नीके बढ़िया साड़ी, बालकोंके वस्त्र और तत्पश्चात् खान-पानकी वस्तुएँ खरीदूंगा। ऋणदाताओंका चुकारा अगले मासपर टाल दूँगा।' इन विचारोंके साथ उसके पैर जल्दी-जल्दी आफिसकी ओर बढ़ रहे थे।

इतने हीमें उसके कानोंमें करुण क्रन्दन सुनायी दिया – "दया कर कोई मुझे बचाओ।" ऐसी दीन पुकार कानोंमें पड़ते ही उसके उपर्युक्त विचारोंकी शृंखला इस तरह टूट गयी जैसे शक्तिशाली अश्व एक ही झटकेमें पिछाड़ी तोड़ देता है। चकित हो इधर-उधर देखते हुए उसने सोचा – "इस दुखीको चलकर बचाऊँ - मानवका यह मुख्य कर्त्तव्य भी है। किन्तु इस पुण्य-कार्यमें कहीं अधिक समय लग गया तो विलम्बके लिए दफ्तरके अधिकारीकी डाँट सुननी पड़ेगी।" रामकिशोर थोड़ा इन विचारोंमें रुका। ऊपर देखा तो आकाशमें ऐसी घनघोर घटा छायी हुई थी, मानो अभी मूसलाधार वर्षा होने वाली है। श्यामघनके नीचे दुग्ध, कपूर, समुद्र फेन और दिग्गजोंकी श्वेतताके तुल्य श्वेत पंखोंवाली बक-पंक्तियाँ बिहार कर रही थीं। एक क्षुद्र कोनेसे



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



भगवान् भास्कर भूलभुलैयाके समान मेघोंसे कभी झांकते, कभी छिप जाते थे। रामकिशोरको यह दृश्य सुहावना तो लगा, पर परवशताके कारण कुछ ईर्ष्या हुई। "पक्षी होकर ये इतने स्वतंत्र और मानव होकर मैं इतना परतंत्र ! और यदि मैं नौकरी छोड़ दूँ तो ? जरा अपनी आजीविकासे पूछूं।"

आजीविका तुनककर बोली—"मूर्ख ! दर-दरकी ठोंकरें खाते-खाते हताश हो गया था, तब कहीं मैं तुझे मिली हूँ। फिर वही अपनी दुर्दशा कराना चाहता है ?"

"और यदि मैं खेतोंमें इतना परिश्रम करूँ कि दुपहरीकी कड़ी धूपसे मेरे तनका चर्म जलकर कोयले जैसा काला हो जाय, तब भी विश्रामका नाम न लूँ, तो ?" साहस बटोरकर रामकिशोरने उत्तर दिया।

आजीविका हँसकर बोली—हाँ, तब तो मैं तेरे पास चली आऊँगी।, श्रममें तो भगवान् बसते हैं। किन्तु यदि तू बे-समझ श्रमिकोंकी भाँति शराब, सिनेमा आदि दुर्व्यसनोंमें मुझे व्यय कर देगा, तो स्मरण रख, भूखों मरेगा और घरके बच्चोंकी क्षुधा-वेदना तुझसे देखी नहीं जायेगी।"

इधर रामकिशोरके यह विचार चल रहे थे, उधर करुण क्रन्दन उसके कानोंमें बराबर ध्वनित हो रहा था। उसने मुड़कर देखा, किन्तु जहाँ तक दृष्टि-पथकी सामर्थ्य थी, वहाँ तक कोई दुःखी दिखायी नहीं दिया। इतनेमें ही एक संत सिंह-शावकके साथ सामनेसे आते दिखायी दिये। ओहो, पुण्यशाली भारत-भूमिपर सद्भाग्यसे ही सन्त-महात्माओंके दर्शन हो पाते हैं, इस भावनाको ले रामकिशोरने दौड़कर सन्तके चरणोंमें मस्तक नवाया, और सन्तके प्रश्न करनेपर सारा वृत्तान्त उनको सुना दिया।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



परम दयालु सन्त बोले—"वत्स ! तूने बड़ी भारी भूल की, जो उस दर्दीका दर्द मिटानेको नहीं पहुँचा।" इस जीवलोकमें कोई भी मानव अपने लिए जीवित नहीं है, परन्तु जो परोपकारके लिए जीवित है, सच्चा जीवन उसीका है। अपने प्राण और धन दोनोंसे परोपकार करना चाहिये। परोपकार करनेसे जो पुण्य होता है, वह सौ-यज्ञ करनेसे भी नहीं होता। इसलिए बुद्धिमान् मनुष्यको परोपकारके निमित्त अपना जीवन और धनका त्याग करना चाहिये। क्योंकि धन और जीवन तो नाश होने ही वाले हैं, तो फिर परोपकारार्थ इनका त्याग करना उत्तम है।[1]"

रामकिशोरने हाथ जोड़कर कहा—"महात्मन् ! आप जैसे महात्माओंके—स्मरणमात्रसे ही गृहस्थोंके घर तत्काल पवित्र हो जाते हैं, फिर दर्शन, स्पर्श, पाद-प्रक्षालन और आसन देने आदिका सुअवसर मिलनेपर तो कहना ही क्या है ! अज्ञानवश असत्पुरुषोंके साथ किया हुआ जो संग संसार-बन्धनका कारण होता है, वही संग सत्पुरुषोंके साथ किये जानेपर असङ्गता प्रदान करता है।"[2]

---

१. आत्मार्थं जीवलोकेऽस्मिन् को न जीवति मानवः।
परं परोपकारार्थं यो जीवति स जीवति॥
परोपकारः कर्त्तव्यः प्राणैरपि धनैरपि।
परोपकारजं पुण्यं न स्यात्क्रतुशतैरपि॥
धनानि जीवितं चैव परार्थे प्राज्ञ उत्सृजेत्।
तन्निमित्तो वरं त्यागो विनाशे नियते सति॥
( सुभाषितरत्नभांडागार )

२. येषां संस्मरणात् पुंसां सद्यः शुद्ध्यन्ति वै गृहाः।
किं पुनर्दर्शनस्पर्शपादशौचासनादिभिः॥
—श्रीमद्भागवत

सङ्गो यः संसृतेर्हेतुरसत्सु विहितोऽधिया।
स एव साधुषु कृतो निःसङ्गत्वाय कल्पते॥
—श्रीमद्भागवत



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



मैं तो आज आपके दर्शन पाकर धन्य-धन्य हो गया हू।"

महात्मा अमृतवर्षिणी मिष्ट वाणीमें बोले—"प्रिय वत्स, आप तो वड़े ज्ञानी ध्यानी जान पड़ते हैं। तो फिर चलिये, मैं भी आपके साथ चलता हूँ, जहाँ कहीं वह दर्दी होगा हम उसकी खोज करके उसका दुःख दूर करनेका भरसक प्रयत्न करेंगे।"

रामकिशोर महात्माजीकी वात्सल्य-पूर्ण मीठी बात सुनकर क्षण-भरके लिए किंकर्त्तव्यविमूढ़-सा होगया। फिर महात्माजीके चरणार-विन्दोंकी रज मस्तकपर चढ़ाते हुए दीनभावसे बोला—"संतप्रवर ! इस समय तो मुझे आफिस जानेकी आज्ञा दीजिये। आज एक प्रतिष्ठित महानुभावकी मिसल तैयार करके हाकिमके सामने मुझे पेश करना है।"

सन्त यह सुनकर हँसे - बहुत हँसे। कहा —"जा जा, तुझे सुरक्षित-रूपसे कचहरी तक अपने इस सिंह - शिशुको साथ कर दूँ। यह तेरे अफसरके सामने तक तुझे पहुंचा आवेगा !"

सन्तके इन व्यंग वचनोंसे रामकिशोर लज्जित हो सकुचाये मनसे सन्तके चरणोंमें प्रणाम कर आगे वढ़ा।

दफ्तरमें पहुंचते ही साथी रामनाथने आश्चर्यके साथ कहा—"भाई वाह, आज तो समयसे वहुत पहले आगये हो।"

यह सुनकर रामकिशोरके मनको एक चोट-सी लगी। "समय था, इसमें मैं सन्तके साथ चलकर उस दर्दीका दर्द मिटानेमें समर्थ हो सकता-था। मुझे धिक्कार है, मैंने सन्तका सत्परामर्श नहीं माना। करुण-क्रन्दन अभी भी मेरे कर्णकुहरोंमें ध्वनित हो रहा है।" इस प्रकार विवेक बुद्धिके जोर मारनेपर रामकिशोर कचहरीमें बैठा बैठा मन ही मन पश्चाताप करता हुआ चुपचाप अश्रुविन्दु गिराने लगा। "भले ही अनुपस्थितिमें मेरा सारा वेतन कट जाय, अधिकारी क्रुद्ध



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



होकर भले ही मुझे नौकरीसे आज ही अलग कर दें, पर मेरा साहस, सेवाभाव, दृढ़ निश्चय, निर्भयता प्रवलवेगसे जाग उठे हैं।" यह सोच, थोड़ी देरआफिसमें ठहरकर रामकिशोर एकदम उठ सपाटेसे सीढ़ियाँ, उतरता हुआ मार्गपर आगया।

उस समय बड़ा प्रसन्न था रामकिशोर। किन्तु वहाँ कोई यान न देखकर पैदल ही भागा। वर्षा धीमी-धीमी होने लगी थी। मार्गमें दो किसान बातें करते जा रहे थे। एक बोला—"बेचारी वृद्धा निर्जन वनमें अकेली उपले बीनने आयी थी। पाँव फिसल जानेसे खड्डमें ऐसी गिरी कि बहुत प्रयत्न करनेपर भी निकला नहीं गया। मैंने उसका करुण-क्रन्दन सुन, उसी ओर जा तत्काल उसे खड्डसे बाहर निकाल; कंधेपर बैठाकर उसके बताये घरपर पहुँचा दिया। देखो न, मेरे सारे वस्त्र कीचड़से सन गये हैं। किन्तु मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है कि आज मैं संकटमें फँसी हुई निर्बल वृद्धाकी सेवा कर सका।"

दूसरे कृषकने हर्षपूर्वक कहा—"बहुत ही उत्तम कार्य किया भाई तुमने, मुझे खेद है कि 'मैं भी उस समय तुम्हारी इस सेवा-क्रियामें साथ न दे सका' यह कहते हुए उसने मुड़कर देखा तो रामकिशोर वर्षासे तरबतर होकर कीचड़में धीमी गतिसे चलते-चलते इन दोनोंकी बातें बड़े ध्यानसे सुन रहा था। उसका सेवा-भाव कह रहा था 'तू भी शीघ्रातिशीघ्र क्रन्दनके स्थानपर पहुंचकर दर्दीकी रक्षा और महात्माजीकी आज्ञाका पालन कर।' उसकी एक स्मृति ताजा हो आयी। मेरी वृद्धा माताजीको बैलोंकी लड़ाईमें कुचल जानेपर एक दयाशील वृद्ध हरिजन कंधेपर बिठाकर घर लाया था। तब मैंने उसको नरके रूपमें नारायण समझा था। आज वही सेवा-धर्म निबाहनेका अवसर मेरे सामने है। किन्तु मैंने उसी समय संतकी आज्ञा मानकर यह काम क्यों नहीं कर डाला! पर अब तो मेरा फौलादी निश्चय टलेगा नहीं।"



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



इन विचारोंमें मग्न रामकिशोर चलते-चलते रुक गया। बुद्धिने संकेत किया 'यह स्थान वही है, जहाँसे करुण-क्रन्दनकी ध्वनि सुनायी दी थी, खोजो उसे।'

साहब बोला—"मार्गसे नीचे उतरो कीचड़ बचाकर चलो।

आँखोने सावधान किया—"हाँ, अब इधर-उधर ही कहीं देखो।"

वर्षा बन्द हो चुकी थी। आकाशमें श्वेत-घन अद्भुत सूरतें बना तितर-बितर हो रहे थे। उनकी होड़में रश्मिराज सूर्यके सारथि अरुण भी रथके सप्ताश्वोंको चाबुककी मारसे तेज दौड़ा रहे थे। सर्वत्र प्रकाश फैल गया था। जल-पूर्ण गर्त, मेढ़कियोंकी उछल-कूद, वीर वधूटियोंकी अपूर्व छटा, हरी-हरी दूबकी स्वच्छता ऐसे नयनाभिराम अपूर्व दृश्यको देखकर मनमें प्रसन्न होता हुआ रामकिशोर एकान्त वनमें अकेला उस करुण-क्रन्दनको खोज रहा था। परन्तु क्रन्दन अब बनमें, पानीमें, पानीके भरे खड्डोंमें, कीचड़में, दूर्वादलमें, सनसनाती वायुमें नहीं था— केवल रासकिशोरकी उत्कट सेवाभावनामें, पश्चातापमें, कष्ट मिटानेकी लालसामें, महात्माजीकी उपदेश पूर्ण आज्ञापालन करनेकी प्रबल इच्छामें—मौजूद था। रामकिशोरने मानो किसी निधिको प्राप्त करनेकी ललचाई हुई दृष्टिसे देखा—"घासकी ऊंची-ऊंची टहनियाँ वायुके झोंकोंसे हिल-हिलकर मानो बता रही थीं "वह अब यहाँ कहाँ— एक किसान उसे बचा ले गया।"

इस संकेतके साथ ही वे संत रामकिशोरको वहाँ पुनः दिखायी दिये, और हँसते-हँसते मधुरवाणीमें कहने लगे "वत्स! अब भी तुझे निःस्वार्थ सेवा करनेका ज्ञान हो आया, यह कम महत्त्वकी बात नहीं है; पर यह अवसर तो हाथसे चला गया। भविष्यमें ऐसे सुअवसरोंपर तत्काल योग देनेका ध्यान रखना। ऐसे अवसर प्रभु प्रेरणासे हीं आते हैं।"



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



रामकिशोरके पश्चातापका पार नहीं था, उसकी आंखोंके कोये अश्रुपूर्ण हो गये थे। उसने संतके मंगलकारी चरणोंपर मस्तक टेककर उन्हें पश्चातापकी अश्रुधारासे भिगोना प्रारम्भ कर दिया। संतने उसे उठाकर अपना वरद हस्त उसके मस्तकपर रखते हुए आशीर्वाद दिया—"प्रिय वत्स ! तुम्हारा अन्तरमन पश्चाताप रूपी रामबाण ओषधिसे निर्दोष—निर्विकार हो गया है। यह श्रीभगवान्‌की अहैतुकी कृपासे ही हुआ है। जाओ, तुम्हारा सब प्रकारसे कल्याण हो।"

रामकिशोर हतप्रभ-सा खड़ा रहा। उसके मुखसे केवल इतना ही निकला—"महात्मन्! भगवान्‌की कृपाके बिना आप जैसे सन्तोंके दर्शन भी तो नहीं होते—**बिनु- हरि कृपा मिलै नहिं सन्ता।**" आज मैं आपके दुर्लभ दर्शन और सदुपदेश पाकर धन्य-धन्य हो गया हूं।" यह कहकर रामकिशोरने स-भक्ति अवनत होकर ज्योंही सन्तके पुनीत चरणोंमें मस्तक नवाया, त्यों ही सन्त अन्तर्ध्यान हो गये। ★

---

## वाह गुरु !

: आनन्द वाणी

गुरु नानकजीने अपने शिष्यको सन्देश भेजकर बुलवाया। वह परिणीत होनेवाली कन्याका हाथ छोड़कर विवाह-मण्डपसे दौड़ा। रात्रिमें विश्रामके लिये मार्गकी एक सरायमें रुका। सामने वेश्याका गायन हो रहा था। मन विचलित हुआ। कई बार वहाँ जानेका प्रयत्न किया; परन्तु हर बार चपरासी हाथमें डण्डा लिये सामने आ खड़ा होता। शिष्य न तो रातभर सो ही सका और न वेश्याके पास ही जा सका। सवेरा हुआ और वह पुनः दौड़ा। गुरुदेवकी सेवामें उपस्थित हुआ। निवेदन किया – 'प्रभो, आपसे मिलनेकी इतनी व्याकुलता बढ़ी कि सब कुछ छोड़कर आपकी आज्ञा पालनके लिये दौड़ा आया हूं।' गुरु नानकजी बोले—'बेटा रास्तेमें तुम्हारा मन वासनाग्रस्त हो गया था, सो पहरेदारके रूपमें डण्डा दिखाकर मैंने ही बचाया था, वह क्यों नहीं कहते?' शिष्य विह्वल हो चरणोंमें लोट गया। वाह गुरु!



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

टेलीफोन : २५३०४५
३७४६१४

तार : ईस्टसेल

# मारवरिया मशीनरी मार्ट

डीलर्स इन जनरेटिंग सेट्स एलेक्ट्रिक मोटर्स स्विच गेयर्स, ऑयल इंजिन पम्प सेट्स, ट्रान्सफॉर्मर इत्यादि ।

१०१, अपोलो स्ट्रीट,
फोर्ट, बम्बई-१

PHONE : 242975 GRAM : 'ARTCENTER'

With Best Complements

from

# ROOP-KALA

( Air Conditions )

Queen's Chambers, Queen's Rd., opp-Marine Bridge,
BOMBAY 1.

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

# चिन्तामणि

भिक्षु श्री शंकरानन्दजी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

## भिक्षु श्रीशंकरानन्दजीसे सुना हुआ दृष्टान्त

**इन दृष्टान्तोंमें यह बात कही गयी है कि विवेकहीन जनता अपनी आसक्ति और भ्रान्त धारणाओंके वशीभूत होकर बार-बार कष्ट सहती है — ठगी जाती है — परन्तु अपनी बुरी आदतों और पाखंडियोंके द्वारा की गयी ठगीसे मुक्त होनेका प्रयास नहीं करती। उलटे और उनमें ही फंसती जाती है। विवेकी पुरुषको इन बुराइयोंसे और ढोंगियोंके मायाजालसे सावधान रहना चाहिये और बचना चाहिये। —सम्पादक**

एक राजा था, स्वभावका कुतूहलो और हृदयसे लोकतत्त्वका जिज्ञासु। वेष बदलकर अपनी प्रजामें घूमता और उनकी गुप्त मनो-वृत्तियोंका पता लगाता। इसी प्रकार गुप्त-वेषसे यात्रा करते समय उसे चार कुमारियाँ दिखीं। वे हंसती-खेलती परस्पर गप्प हांकती आगे-आगे चल रही थीं और राजा अपनेको छिपाये उनके पीछे-पीछे। वे आपसमें बात कर रही थीं। एक लड़कीने कहा—



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



'व्यभिचारमें सुख है'। दूसरीने कहा—'मांसभक्षणमें'। तीसरीने कहा—'शराब पीनेमें, और चौथीने कहा–'सबसे बड़ा सुख झूठ बोलनेमें है।'

राजा सुनकर अपने महलमें लौट आया। दूसरे दिन दरबारमें चारो लड़कियाँ बुलायी गयीं। राजाने उनकी बातचीत दुहरा कर सिद्ध करनेके लिये कहा—भला, तुम भले घरकी पवित्र कुमारी, ऐसी द्वन्द-फन्दकी गन्दी बात कैसे करती हो ?'

तीनों लड़कियोंने अपना वैसा निश्चय बनानेका कारण बतलाया 'हम आंख खोलकर अपने चारो ओर देखती हैं। पास-पड़ोसमें होता है। उसीके आधार पर सोचती हैं।'

पहली—'हमारे पड़ोसमें एक स्त्री-पुरुषका अवैध सम्बन्ध है। वे बहुत दिनोंसे गुप्त रूपसे मर्यादाके विरुद्ध परस्पर मिलते हैं। उनकी बदनामी हुई, लोगोंने तिरस्कार किया, हड्डी-पसली तोड़ दी; तब भी उन्होंने अपनी बुरी आदत नहीं छोड़ी। यदि वैसा करनेमें उन्हें सुख न मिलता तो वे इतनी सांसत सहकर भी ऐसा क्यों करते ?'

दूसरी—'मैं एक दिन भोजन कर रही थी। थोड़ी-सी मिठाई बाहर गिर गयी। चींटियाँ इकट्ठी हो गयीं, मिठाई खाने लगीं। इतनेमें किसी मांसभक्षी पक्षीने कहींसे मांसका टुकड़ा लाकर वहाँ गिरा दिया। चींटियाँ मिठाई छोड़कर मांस पर टूट पड़ीं। इससे सिद्ध होता है—मांसमें स्वाद-सुख अधिक होता है।'

तीसरी—'मेरे मकानके सामने शराबकी दूकान है। लोग आते हैं, पीते हैं, करते हैं कै, नालीमें गिरते हैं, परस्पर गाली-गलौज करते हैं, उनके मुँहपर कुत्ते तक मूत जाते हैं; फिर भी दूसरे दिन उसी दूकानपर आते और वही काम करते हैं। है न कोई सुख शराबमें ? तभी तो इतनी दुर्दशा होनेपर भी पीते हैं।'



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



चौथी लड़कीने कहा—'झूठ बोलनेमें बड़ा सुख है, परन्तु यह बात छः महीनेमें मैं सिद्ध करके दिखाऊंगी। मुझे दरबारसे इसके लिये अनुज्ञा प्राप्त हो।'

राजाने स्वीकृति दी। लड़की चली गयी।

कुछ समय बीतनेके बाद उस राज्यमें यह चर्चा चारों ओर होने लगी– यहाँसे थोड़ी दूर एक गांवमें कोई भक्त लड़की रहती है, जिसके आराध्य–भगवान्‌की प्रतिमा हँसती बोलती, खाती है, उसके साथ सारे व्यवहार करती है। मूर्ख और विद्वान्, भोले-विश्वासी और बुद्धि मान्—सबके मुखपर यही बात थी। कुछ लोग तो यहाँ तक कहते थे कि उसके भगवान्‌ने स्वयं मुझसे बात की है, मुझे अपने हाथसे प्रसाद दिया है। अनहोनी बात गाँवमें जल्दी फैलती है। चमत्कारकी चर्चा किसको अपनी ओर नहीं खींचती ! श्रद्धा उमड़ी, ख्याति बढ़ी, राजाके कानों तक बात पहुंची। रानीने आग्रह किया, मन्त्रीने उत्साहित किया। वह लड़की और भगवान् तो राजाके घर आ नहीं सकते थे। वह थी विरक्त भक्त और भगवान् थे महान्। राजाको ही अपने परिवार और मन्त्रीके साथ उस छप्परकी कुटियामें जाना पड़ा। वह भक्तिन अपने पाले-पोषे प्रशंसकोंके साथ वहीं रहती थी।

उस भक्त महिलाने स्वीकार किया कि हाँ हमारे भगवान् जीवित, जाग्रत्, चैतन्य हैं। हमारे साथ हँसते, बोलते, खाते, सोते हैं। और लोगोंके साथ भी ऐसा करते हैं। आप हमारे इन अनुयायियों एवं प्रजाजनसे भी पूछ लीजिये। आप स्वयं भी चाहें तो एक-एक व्यक्ति चलकर मिल लें।

पहले मन्त्री गये। भक्त महिलाने बताया —'मन्त्रीजी ! हमारे भगवान् शुद्ध चरित्र पुरुषसे ही बात करते हैं, यह सबको मालूम है। जो असली बापका बेटा नहीं होता, चोर या बेईमान होता है, उससे भगवान् नहीं बोलते। आप जाइये, भगवान्‌से बात कीजिये।'



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



मन्त्री भीतर गया तो सही; पर परेशान था। न भगवान् बोले और न हँसे। वह सोचने लगा; यदि मैं बाहर चलकर सच-सच कह दूँ तो सारी-प्रजा, राजा, राजपरिवार मुझे दोगला, बेईमान और व्यभिचारी समझेंगे। मेरी प्रतिष्ठा दो कौड़ीकी भी नहीं रहेगी। वह कुछ सोच-समझकर बाहर निकला हँसता हुआ, प्रसन्न—'अहा भगवान् कितने दयालु हैं। उन्होंने मुझसे बात की। मेरे सिरपर हाथ रखा। मैं धन्य हूं।'

भक्त महिलाने रानीको समझाया—'हमारे भगवान् व्यभिचारसे उत्पन्न अथवा व्यभिचारिणी स्त्रीसे बात नहीं करते। आपका चरित्र शुद्ध होगा तो भगवान् आपपर अवश्य कृपा करेंगे।

रानीका दिमाग आगे तक दौड़ गया। जब लोगोंको ज्ञात होगा कि भगवान्ने रानीसे बात नहीं की, तब वे मुझे क्या समझेंगे और तब तो महाराज मुझे त्याग ही देंगे।'

वे भी भीतर हो आयीं और बोलीं—'प्रभु तो मुझे देखते ही मुस्कराने लगे। मेरे वंश और पातिव्रतकी प्रशंसा की। मुझे अखण्ड सौभाग्यका वरदान दिया।'

अब राजाकी बारी थी। उन्हें भी सब बात समझा दी गयी। वे भी मन्दिरमें गये। गोबरके भगवान् कहीं बोलते हैं? उन्होंने सोचा कि रानी, मन्त्री और प्रजाके लोगोंसे भगवान् बात करते हैं, मुझसे नहीं की। अब यह बात प्रसिद्ध होते ही लोग मुझे दोगला और दुश्चरित्र समझने लगेंगे।

राजाने भी बाहर निकलकर कहा—'धन्य! धन्य! भगवान्ने अपने हाथसे प्रसाद देकर मुझे कृतार्थ कर दिया।'

भक्त महिलाकी सेवा-पूजा करके सब लौट आये।

छः महीना पूरा होते-होते राजाने उस लड़कीको बुलाया और



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



कहा—'तुम सिद्ध करो कि झूठ बोलनेमें सुख है। लड़कीने कहा—'महाराज! आप स्वयं इस बातके साक्षी हैं। जिस भगवान्के बारेमें आपलोगोंने कहा कि उन्होंने सिरपर हाथ रखा, वरदान दिया, प्रसाद

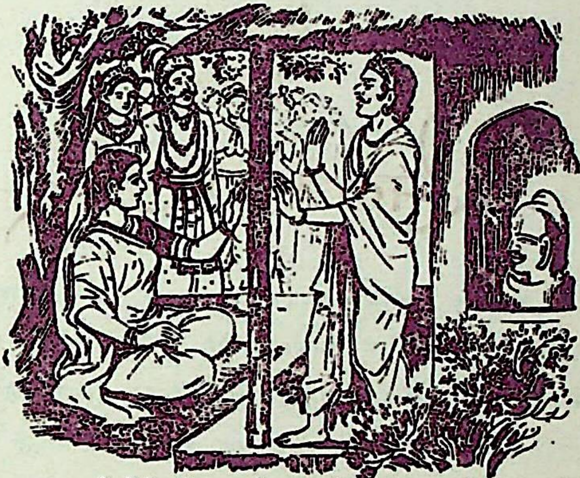

खिलाया, वह तो मेरे ही बनाये हुए गोबरके एक ढेर थे। मैंने कपड़ा-लत्ता पहनाकर, सजा-सँवारकर उसे सुन्दर बना दिया था। उन्होंने न मुझसे बात की थी, न और लोगोंसे, न आपसे। जनतामें अपने एजेन्टोंसे पैसा देकर यह गप्प फैलायी थी। परन्तु झूठमें भी क्या सुख-स्वाद है कि दूसरे तो दूसरे, स्वयं आप भी बोलने लगे। मूर्तिकी बात तो बिलकुल गप्प थी। मैंने ही अपनेको उस भद्र महिलाके वेषमें बनाकर यह सब ढोंग रचा था। एक महात्मा क्या ही अच्छा कहते हैं—

आपै लीपै आपै पोतै आपै काढ़ै 'ह्रोई'[1]।
औंधी पड़के बेटा मांगै अकल रांड़की खोई ॥"

★

---

[1] (भित्ति चित्र)



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

## स्वामी श्री ब्रह्मप्रकाश जीसे सुने हुए दृष्टान्त

# सन्त का जादू

उन दिनों तपःसिद्ध महात्मा दादूदयालजी अत्यन्त लोक-प्रसिद्ध थे। दूर-दूरसे जनसमुदाय आ-आकर उनके दर्शनोंसे शान्ति अनुभव करता, उनके सत्संगसे अपने हृदयका सन्देह भङ्ग करता, भक्ति-ज्ञानके रंगमें अपनी अन्तरात्माको रंगता। वे स्वयं एक वन-प्रान्तमें स्थित शान्त-कान्त पर्वत शिखरपर निवास करते थे। एक दिन उन्होंने देखा कि दो सज्जन सभ्य वेष-भूषासे सुसज्जित, मानो बड़े विद्वान् हों, पर्वत-शिखरके निम्न भागमें अवस्थित गहन-वनमें पथभ्रष्ट हो गये हैं। दया आयी। दयालु दादूदयाल कठिन मार्गसे तुरन्त नीचे उतर आये। विद्वानोंसे पूछा— 'आप कहाँ जा रहे हैं?' उन्होंने बताया कि हम लोकप्रसिद्ध सिद्धका दर्शन करने जा रहे हैं।'

दादू,—'तुम्हें किसने मिथ्या स्तुति करके भ्रममें डाल दिया? वह सिद्ध नहीं, दम्भी है। लोक-परलोक दोनोंसे भ्रष्ट है।'

पण्डितोंको क्रोध आ गया। काशीमें भी तो नवरत्न होते हैं। उन्होंने दादूजीकी अच्छी पूजा की। हाथ-पाँव तुड़वाये विना ही उन्हें मार्ग वताकर छोटे मार्गसे अपने स्थानपर पहुँच गये। वैसे ही शान्त, सौम्य, सहिष्णुताकी मूर्ति।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



पण्डितोंने मनोराज्य किया—'महाराजको सुनायेंगे कि उनके एक निन्दकको हमने कैसा दण्ड दिया! महात्माजीसे शास्त्रके अमुक-अमुक विषयपर प्रश्नोत्तर करेंगे, शास्त्रार्थ करेंगे। अपने वैदुष्यका प्रदर्शन करके

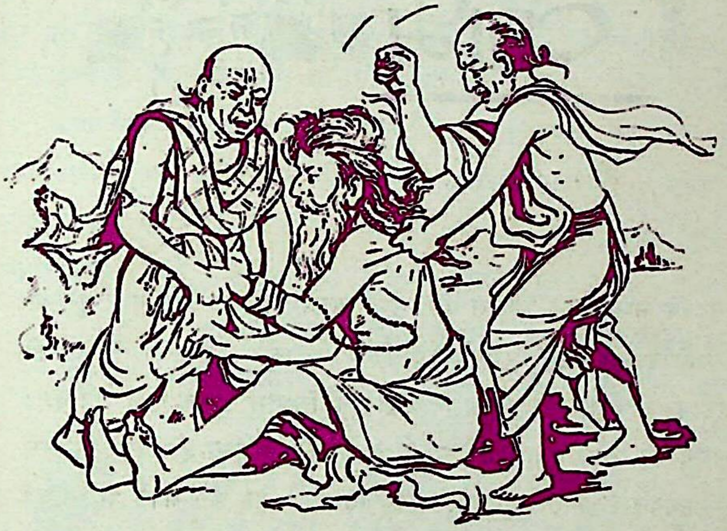

अपने अहंकी पुष्टि-तुष्टि करेंगे।' परन्तु उनका सारा मनोराज्य निष्फल गया। उन्होंने देखा कि जिनकी पीठ-पूजा कुछ ही क्षण पहले की थी, वही आसनपर विराजमान दादूदयालजी ही हैं। उनका अभिमान गलकर वह गया। हृदयका अभिमान ही नहीं, नेत्र भी घुल गये। साष्टांग दण्डवत् करके क्षमायाचना-पूर्वक पण्डितोंने कहा—'महाराज! अपराध हुआ। आपने यह क्या लीला की?'

दादू—वह तो एक खेल था। क्या शास्त्रचर्चासे आप लोगोंका हृदय इतना कोमल हो पाता? इतना विनय जाग्रत् हो पाता? क्या सामान्य वेष-भूषावाले भिखारी वनवासीमें भी महात्माको पहचाननेकी क्षमता अभिव्यक्ति दे सकती?

पण्डित—'सचमुच महाराज! आपकी लीलासे हमने गलत काम किया हो; परन्तु हमारा हृदय पवित्र हुआ है। यही तो सत्संगकी महिमा है। ०



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

# कोनोंसे लाभ

नगरके मध्यमें एक विशाल एवं भव्य आश्रम। श्वेत केशश्मश्रु सुगन्ध-सने रेशमी काषाय वस्त्र धारण किये दिव्य तेजःपुंज महापुरुष आश्रमकी व्यवस्थाका संचालन कर रहे थे। श्रद्धावान् जिज्ञासु उनके पास पहुँचा। महात्माने बड़े प्रेमसे उसे पास बिठाया। युवकने करबद्ध हो बड़े विनयसे पूछा—भगवन्! अपने अनुभवका सार बताइये। हम कैसे अपने आत्माका साक्षात्कार करें?'

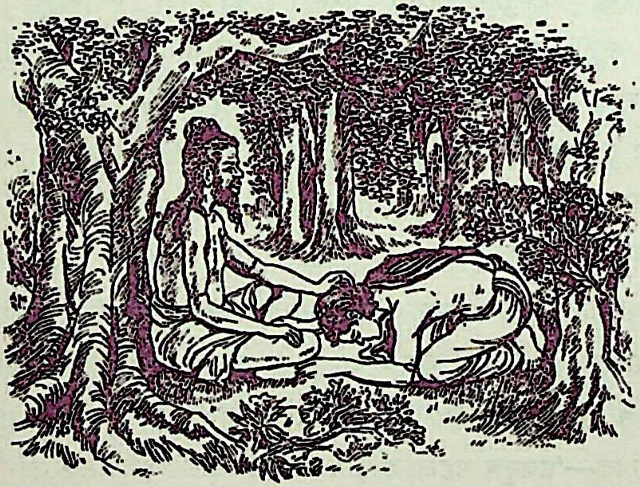



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



महात्मा बोले—बेटा ! तुम देखते नहीं मैं कैसा भोग-विलासयुक्त जीवन व्यतीत कर रहा हूँ। मेरा बड़ा-सा आश्रम, सेवक और व्यस्ततापूर्ण दैनिक कार्यकलाप है। भैया, मैं तो संसारमें रह रहा हूँ। तुम नगरसे बहुत दूर उस वनमें जाओ। वहाँ तुम्हें एक अत्यन्त विरक्त, अपरिग्रही, एकान्त-सेवी सन्त मिलेंगे। वह तुम्हें ज्ञानकी उचित दिशा देंगे।

युवक सिर झुकाकर उठा और बतलाये हुए स्थानपर पहुँचा। गहन वनमें एक वृक्षकी छाया-तले जीर्ण एवं मलिन-से वस्त्रोंमें कृषकाय वे सन्त विश्राम कर रहे थे। युवकने साष्टांग लोटकर उन्हें प्रणाम किया। महात्माकी सौम्य आकृतिसे वह आकृष्ट हुआ। मुस्कराकर महात्माने

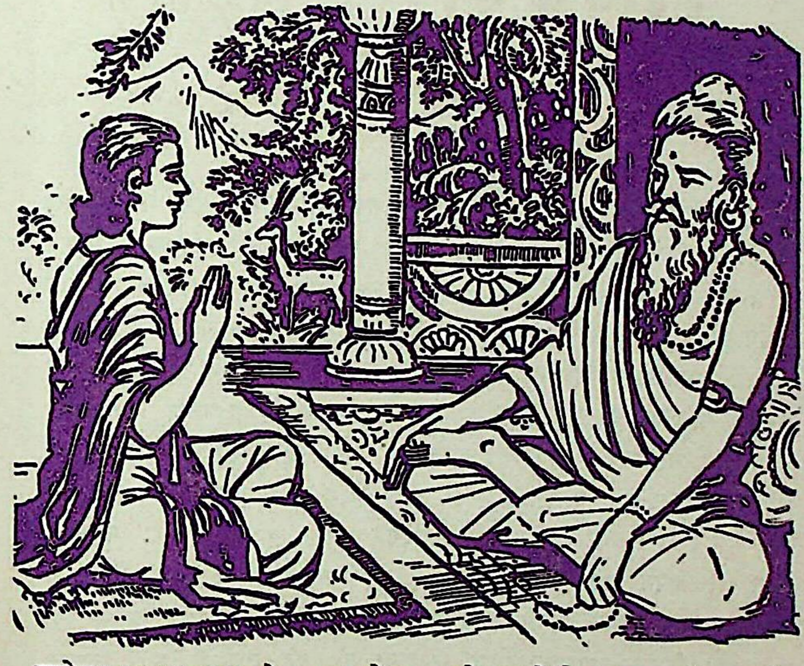

आनेका कारण पूछा तो युवक बोला—मुझे नगरके आश्रमाध्यक्षने आपकी सेवामें भेजा है। वे सन्त बोले—भैया वस्तुतः सन्त तो वे ही हैं। इतने भोग-विलासयुक्त जीवन तथा कोलाहलपूर्ण वातावरणमें रहकर भी वे



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



उससे सर्वथा अलिप्त हैं। त्याग और संग्रह, योग, और भोग राग और वैराग्यका मर्म उन्होंने जाना है। मैं तो पलायनवादी हूँ। संसारसे डरकर यहाँ एकान्तमें आ पड़ा हूँ। आत्मसाक्षात्कारका मार्ग वही तुम्हें कृपा करके बतलायेंगे। मेरे मनमें भी जब कभी कोई आध्यात्मिक प्रश्न उठता है तो समाधानके लिये उन्हींके पास जाता हूँ। सचमुच ही वे महापुरुष हैं, उन्होंने मुझे बड़ाई देनेके लिये ही तुम्हें यहाँ भेजा है। यह भी उनकी महिमा है।

**युवकने दोनों ही जगह श्रद्धा सम्पत्ति-पायी।** ★

गंगा-तटपर दो तरुण साधु दीखे। एक स्नान कर रहा था, दूसरा वस्त्रोंकी रखवाली। एक गृहस्थ उनके पास पहुँचा। हाथ जोड़कर वस्त्रोंके पास बैठे साधुसे कहा—महाराज, मेरे अहोभाग्य हैं जो आपके दर्शन हुए। कृपा करके आज मेरी झोंपड़ी पवित्र करके, वहीं भिक्षा करें।' महात्माने प्रार्थना स्वीकार कर ली। गृहस्थने हाथ जोड़कर पूछा—महाराज! क्या वे स्नान कर रहे तेजस्वी महात्मा आपके ही साथ हैं? महात्माने व्यंग्य-सा करते हुए कहा-उहँ! काहेका महात्मा!, ऊँट है पूरा ऊँट। गृहस्थने हाथ जोड़ लिये। अब दूसरे महात्माकी बारी थी। रखवाली करनेवाला महात्मा स्नान करने गया तो गृहस्थने इनसे भी अपने यहाँ भिक्षा करनेकी प्रार्थना उनसे की। इन्होंने भी स्वीकार कर लिया। थोड़ी देरमें गृहस्थने हाथ जोड़कर इनसे भी वही प्रश्न किया—महाराज! ये महात्मा तो बड़े तेजस्वी और विद्वान् दीखते हैं। इन्होंने भी वैसा ही कुटिल आक्षेप किया—उहँ! बैल है पूरा बैल। उठने-बैठने तकका तो तमीज नहीं है, विद्वान् क्या खाक होगा? गृहस्थने उन्हें भी हाथ जोड़ लिये।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



मध्याह्नको दोनों साधु गृहस्थके अतिथि हुए। हाथ-पैर धोये गये। सुन्दर-स्वच्छ आसनोंपर बैठाये गये। भोजनके लिये एकके आगे बड़े टोकरेमें नीमकी पत्तियाँ और दूसरेके सामने सूखी घास रखी गयी। दोनों

महात्मा क्रोधसे लाल हो उठे कहा—यह क्या मूर्खता है ? निमन्त्रण देकर हमारा अपमान करते हो ?

गृहस्थने हाथ जोड़, बड़े विनयसे कहा—महाराज मैं तो सीधा-साधा आदमी हूँ। आप दोनोंके स्वरूपको—आपकी महिमाको क्या जानूं ? आपको निमन्त्रण देते समय आप लोगोंने एक दूसरेको ऊँट और बैल बताया था, इसीलिये आप दोनोंके उपयुक्त यह भोजन सेवामें उपस्थित किया। मुझसे कोई त्रुटि हुई हो तो कृपया क्षमा करें।

दोनोंने ही गृहस्थके मनमें एक दूसरेके प्रति अश्रद्धा और संशयका विष भर दिया था। ★



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

# श्रीज्ञानेश्वरकी एकनिष्ठा

—यशवन्त बलवन्त क्षीरसागर

श्रीगीताभगवतीको भारतवर्षकी भिन्न भाषाओंमेंसे अनेक तत्त्वज्ञानियोंने, भक्तोंने अनेकविध अलंकार चढ़ाये हैं। महाराष्ट्रके महान् संत श्रीज्ञानेश्वरजीके द्वारा महाराष्ट्र(मराठी) भाषामें चढ़ाये हुए अलंकारका नाम है ज्ञानेश्वरी। महाराष्ट्रके कोने-कोनेमें—देहातोंमें तथा पहाड़ी बस्तियोंमें भी—श्रीज्ञानेश्वरजीका नाम पहुँचा है। भक्तगण उन्हें प्यारसे ज्ञानेश्वर माऊली ( माँ ) कहते हैं। उनकी परम पावन ज्ञानेश्वरीकी अनेक घरोंमें पाठ-पूजा होती है।

श्रीज्ञानेश्वरजीका स्मरण मंगलमय है। उनके पिताजी श्रीविठ्ठलपंत गुर्वाज्ञासे संन्यासाश्रमसे गृहस्थाश्रममें प्रविष्ट हुए थे। यह आचार समाज-विरुद्ध माना गया और वे पति-पत्नी तथा उनके चारों बालक समाजसे बहिष्कृत किये गये। चारोंमें सबसे बड़े थे श्रीनिवृत्तिनाथ और उनके अनुज थे श्री ज्ञानेश्वर, श्रीसोपानदेव और श्रीमुक्ताबाई। माता-पिताके प्रायश्चित-स्वरूप मृत्यु स्वीकारनेके पश्चात् भी इन बालकोंकी निन्दा, अवहेलना कम न हुई; मानो यह एक प्रकारकी तपस्या ही थी।

कालचक्र फिरता रहा। इन बच्चोंकी योग्यता धीरे-धीरे



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



समाजमें ज्ञात होती गयी। जिन्होंने उपेक्षा की थी वे लोग ही इनके भक्त बन गये और इनको परम-भागवत मानने लगे।

श्रीज्ञानेश्वरजीने अपने बड़े भाई श्रीनिवृत्तिनाथजीसे दीक्षा ग्रहण की थी। बड़े भाईके नाते ज्ञानेश्वरजी उनसे बड़ा प्यार करते ही थे; जब वे गुरुदेवके रूपमें प्रकट हुए तब उन्होंने अपनेको गुरुदेवके चरणोंमें पूर्णरूपसे मिला डाला। ज्ञानेश्वरीमें स्थान-स्थानपर अपनेको **निवृत्तिदास** कहनेमें ज्ञानेश्वरजीको कितना आनन्द मिला होगा, इसकी पूर्ण कल्पना हम नहीं कर पाते।

श्रीज्ञानेश्वरजीकी सब रचनाओंमें ज्ञानेश्वरीका स्थान अनन्य है। वैसे तो यह ज्ञानेश्वरजीका लिखित नहीं बल्कि 'प्रवचन-स्वरूप' ग्रंथ है। अहमदनगर जिलेमें नेवासे ग्राममें अपने गुरुदेवके सम्मुख बैठकर ज्ञानेश्वरजी श्रीमद्भगवद्गीतापर प्रवचन करते थे। उत्फुल्ल-हृदयसे श्रोता सुनते और सुख-शांतिका समुद्र उमड़ता रहता। ज्ञानेश्वरीका भाव-सौंदर्य इतना आह्लाद-दायक है कि मानो श्रीकृष्णचन्द्र ही ज्ञानेश्वरजीके मुँहसे अपनी बांसुरी बजाते हों। इस रमणीय काव्य-ग्रंथमें ज्ञानेश्वरजीका वेदान्त-निरूपण, उनकी योग-साधना, उनकी विश्वरूप-पूजा, तन्मयता आदि सब बातें एक मजबूत और गहरी नींवपर खड़ी हैं। वह नींव है, उनकी अलौकिक गुरुनिष्ठा।

प्रायः सभी अठारह अध्यायोंमें ज्ञानेश्वरजीने अपने गुरुदेवका मंगल-स्मरण किया है। कभी-कभी तो वे स्मरणमें इतने डूबते हैं कि प्रत्यक्ष गुरुदेव श्रीनिवृत्तिनाथजीको उन्हें कथाकी याद दिलानी पड़ती है।

अठारहवें अध्यायमें श्रीज्ञानेश्वरजी कहते हैं—'यह अध्याय श्रीगीताजीका कलशाध्याय है। इस पवित्र गीता-मंदिरमें मैं मेरे



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



गुरुदेव-स्वरूप दिव्य-लिंगकी पूजा बाँध रहा हूँ। इस ग्रंथमें मेरा तो कुछ है ही नहीं। परमादरणीय गुरुदेवकी कृपाका यह सब वैभव है। न तो मैंनें कभी श्रवण-मनन किया है, और न तो मेरे हाथोंसे गुरुदेवकी सेवा कभी हुई है। क्या मैं कभी ऐसा ग्रंथ रच सकता? मुझे निमित्त बनाकर मेरे गुरुदेवने ही अपना 'समाधि-धन' जगत् रक्षाके लिए यहाँ बिखेर दिया है।

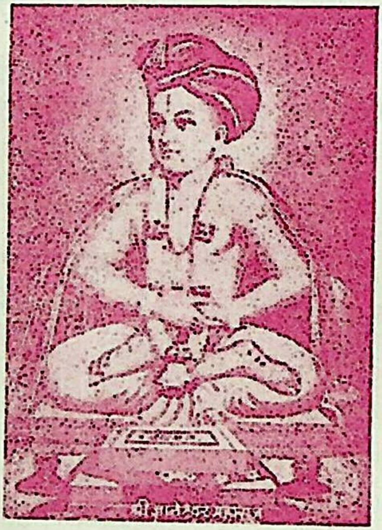

गुरुदेवके ऐश्वर्यंका वर्णन करते हुए वे कहते हैं—'हे जगदखिल-पालन गुरुदेव ! आप आत्मानुभव-नरेन्द्र और श्रुतिसार-समुद्र हैं। यह समस्त विश्व आपमें भास रहा है। आपकी कृपासे—जल रसमय होता है और पृथ्वीमाता क्षमाशील हो गयी है। रविचन्द्रोंकी 'शक्तियाँ' आपसे प्रकाशित होती हैं। आपके विशाल स्वरूपमें यह आकाश 'लपाथपी' ( आँखमिचौनी ) खेलता है। कोई भी विशेषण आपको स्पर्श नहीं कर पाते। जहाँ साक्षात् वेद भी वर्णन नहीं कर



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



सकते, वहाँ नतमस्तक होनेके सिवा मैं भला और क्या कुछ कर सकता हूँ।

भक्तिविह्वल अंतःकरणसे ज्ञानेश्वर गुरुदेवसे कहते हैं—'हे मां, तू मुझे अपने आँचलमें ढाँक दे। तेरी स्नेहमयी कृपा अगर गूँगेको प्राप्त होगी तो वह बृहस्पतिसे भी होड़ करेगा। तेरे पदस्पर्शसे स्थान-स्थानमें सारस्वत खिल उठते हैं, इसमें क्या आश्चर्य ?

'इस 'नित्य नूतन' गीता - तत्त्वका निरूपण क्या मैं कभी कर सकता ? एक मच्छरके मुट्ठीमें क्या कभी आकाश समा जाता ? मेरा 'चिन्तामणि', मेरी 'कामधेनु' तो मेरे गुरुदेव हैं। मैं निर्जीव कठपुतली हूँ—मेरी सब चेष्टा उनके अधीन है। उनकी कृपाका यह बड़ा चमत्कार है कि मेरे श्वासोच्छ्वास भी 'प्रबंधरूप' हो जायँ।

पन्द्रहवें अध्यायमें श्रीज्ञानेश्वरजी द्वारा की हुई प्रातःस्मरणीय गुरुदेवकी भाव-पूजा अतीव मनोहर है। वे कहते हैं—'हृदय-सिंहासन शुद्ध करके मैं मेरे गुरुदेवके चरणोंकी प्राण-प्रतिष्ठा कर रहा हूं। 'ऐक्यभावकी अञ्जलिसे' इंद्रियरूपी पुष्प मैं प्रभुको अर्पण कर रहा हूं। उन सुकोमल चरणोंमें मैं रुन-झुनसे प्रेमके नूपुर बाँध रहा हूँ। मेरा शरीर और प्राण इनकी पादुकाएँ (खड़ाऊँ) बनाकर मैं प्रभु-चरणोंपर चढ़ा रहा हूँ। और उनसे भोग और मोक्ष न्योछावर कर रहा हूँ। इन दिव्य चरणोंकी सेवा जिसे प्राप्त हुई; उसको और क्या मिलना शेष रहा ?

## आचार्योपासनम्

श्रीगीताजीके १३ वें अध्यायमें सातवें श्लोकका (अमानित्व-मित्यादि) विवेचन करते हुये आचार्योपासनम् पर श्रीज्ञानेश्वरजीके प्रकट किये हुए भाव अद्भुतसे मालूम पड़ते है। श्रीज्ञानेश्वरजी कहते हैं—



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



'जब हमारे गुरुदेव प्रसन्न होंगे तब मैं इतना ही वरदान माँग लूँगा कि—गुरुदेव ! आपके काममें आनेवाली जितनी चीजें हैं वे सब मैं अकेला बन जाऊँ और आपकी दिन-रात सेवा करूँ। आपका मकान मैं बनूँ और आप आते-जाते समय जिसे लाँघते हैं वह अंबर भी मैं ही बनूँ। आपके भवनका द्वार मैं बनूं और द्वारपाल भी।' अपनी मधुर भाषामें वे कहते हैं गुरुदेवकी पादुकाएं मैं बनूं और उन्हें पहनानेकी सेवा भी मेरी ही होगी। गुरुदेवका शिर–छत्र मैं बनूंगा और वह छत्र उनपर ढालनेकी सेवा भी मैं करूंगा। श्रीगुरुदेवके प्रति चँवर झलनेवाला, उन्हें रास्ता दिखानेवाला, उनको हाथ देनेवाला, सब मैं और मैं ही बनूँ। गुरुदेवके हाथोंपर जल बरसानेकी झारी मैं बनूँ और जल बरसानेकी सेवा भी मैं ही करूं। जब वे कुल्ला करेंगे तब उनके मुंहका जल मैं बनूं और वे जिस पात्रमें अपना कुल्ला-पानी फेकेंगे वह पात्र भी मैं स्वयं बनूँ। उनका पानदान और ताम्बूल मैं ही बनूंगा और गुरुदेवसे चबाया हुआ ताम्बूल भी मैं ही ग्रहण करूँगा। उनको ज्ञान होनेवाले सब शब्द - रूप -स्पर्श - रस - गंध— सब कुछ मैं ही बनूँगा।

यह शरीर गिरनेके पश्चात् मैं मेरी शरीरकी मिट्टी उसी स्थान पर मिलाऊँगा जहाँ मेरे गुरुदेवके श्रीचरण विराजते हों। जिस जलको गुरुदेव प्रेमसे स्पर्श करेंगे; वहाँपर शरीरका 'जल' तत्त्व रहेगा। जिन ज्योतिओंसे मेरे गुरुदेवकी आरती उतारी जायेगी उस ज्योतिमें मेरा 'तेज' रहेगा। जहाँ गुरुदेवको विजन झलने होंगे, वहाँ पर मैं मेरा वायु-तत्त्व विलीन करूँगा। जिस अवकाशमें मेरे गुरुदेव विचरण करेंगे वहाँ मैं मेरा 'आकाश' मिलाऊँगा। अतएव मैं जिन्दा रहूँ या मर जाऊँ तो भी मैं मेरे गुरुदेवकी सेवासे एक निमिषके लिये भी अलग नहीं रहूँगा।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



यह दिव्य गुरु-सेवा-भाव जिसके मनमें छा जाता है वह गुरुसेवामें अपने शरीरको भूल जाता है। उसको गुरुसेवा नित्यकर्म होती है और गुरुदेव साक्षात् माता - पितासे लगते हैं। गुरुदेवके चरणोंसे स्पृष्ट साधारण जल भी उसे त्रिलोकीके तीर्थोंके समान लगता है। गुरुदेवके उच्छिष्ट–प्रसादको वह समाधि-सुखसे भी अधिक मानता है और गुरुचरणोंसे उड़नेवाले परमाणु अपने मस्तकपर धारण करनेमें वह कैवल्य-सुखका अनुभव करता है।

इस वर्णनके अन्तमें श्रीज्ञानेश्वरजी कहते हैं—'मैंने यह विस्तारपूर्ण विवेचन इसलिए किया कि मेरी गुरुसेवाकी अभिलाषा अभीतक पूर्ण नहीं हुई है। मैं हाथवाला होकर भी मानो लूला हूँ। गुरुसेवामें दुबला हूँ, आलसी हूँ और मन्द हूँ। गुरुवर्णनमें तो मैं गूँगा ही हूँ। लेकिन इस दिव्य गुरुभक्तिकी उत्कट इच्छा मनमें भर गयी है। इस इच्छासे ही यह स्थूल शरीर मुझे संभालना पड़ता है।'

श्रीज्ञानेश्वरजीकी गुरुदेव-भक्ति शब्दातीत है। इस भक्तिकी हम नम्रतासे वंदना करते हैं और ईश्वरसे प्रार्थना करते हैं कि इस भक्तिके कुछ अमृत-बिन्दु हमारे भी जीवनमें आवें।

**गुरुः साक्षात् परं ब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः**

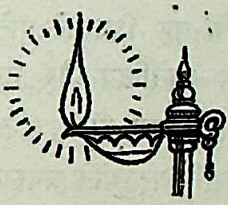



५

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

# बौद्ध दृष्टिमें व्यक्तित्वका स्वरूप

जगन्नाथ उपाध्याय

प्राध्यापक, वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय

इस लघु निबन्धमें बौद्ध-दृष्टिसे व्यक्तित्व और उसके उपादान-कारण तथा उनमें ह्रास एवं विकासकी क्रम-चर्चा की जायगी। इसे स्पष्ट करनेके लिये यह आवश्यक है कि पहले जीवनके प्रति बौद्धोंकी दृष्टि तथा जीव-जगत् सम्बन्धी उनके कुछ मोटे-मोटे सिद्धान्तोंकी चर्चा कर ली जाय।

**व्यक्तित्वका क्षेत्र—**

जैसे सागरका प्रत्येक कण लवण-रस है, वैसे बुद्धकी प्रत्येक देशना निर्वाण-रस है, निर्वाण एक अवधिके बाद व्यक्तित्वका विलोप है, व्यक्तित्व नाम और रूपका एक विशिष्ट सम्पुञ्जनमात्र है। चेतना और उसके समस्त संवेदन अर्थात् समस्त संस्कार नाम हैं। संस्कार नाम हैं; क्योंकि वह विषयोंके प्रति नमते हैं और उनका आलम्बन लेते हैं। पंच ज्ञानेन्द्रिय और मनके द्वारा सुख-दुःखादिके अनुभवको वेदना कहते हैं। नीला, पीला, छोटा-बड़ा, पुरुष-स्त्री, तीक्ष्ण-मोटा, सुन्दर-असुन्दर आदि वस्तुओंके अवस्था-विशेषोंका ग्रहण करना या परिच्छेद करना संज्ञा है। चेतना या चित्तका नया अभिसंस्करण संस्कार है। प्रत्येक विषयको ग्रहण करना चित्त या विज्ञान है।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



वेदना, संज्ञा, संस्कार और विज्ञान ये समस्त संवेदनाओंके (विशेष-विशेष चेतनाओंके) राशिकृतरूप हैं, 'ये चेतना-समुदाय हैं' इस अर्थमें स्कन्ध हैं। ये स्कन्ध हैं, इसीलिए जीवनके घटक चेतनावयव अपनेमें स्वतंत्र एवं सम्पूर्ण नहीं है। रूप जड़-जगत् है। यह भी स्कन्ध-स्वभाव ही है। जैसे चेतनावयवोंके अतिरिक्त कोई चेतन या चेतयिता नहीं है, वैसे ही जड़ द्रव्योंके अवयवोंके अतिरिक्त कोई अवयवी नहीं है। आत्मा या अवयवी संस्कार-प्रसूत कल्पना मात्र है। संस्कार वाह्य एवं आन्तर जगत्के अनन्त परिवर्तनशील उपादानों एवं धर्मोंमें अस्तित्व प्रवाह ज्ञापित करता है, इस ज्ञापनसे ही जीव और जगत्का अस्तित्व और उसका व्यक्ति-जीवनसे सम्बन्ध स्थापित हो पाता है। नियत किन्तु परिवर्तनशील द्रव्यों और संवेदनाओंके प्रवाहसे भिन्न जीव और जगत्की कोई सत्ता नहीं है। जीवित मनुष्य नाम-रूपात्मक है। अतः हमारे व्यक्तित्वका निर्माण नाम-रूपकी अन्योन्यापेक्षासे ही होता है। मन उसके धर्म या अनुभूतियाँ व्यक्तिके प्रधान अंग हैं, चित्त-सन्तान या विज्ञान-प्रवाह ही मनुष्यका वैशिष्टय है, यही उसका अस्तित्व भी है। रूप=देह अथवा जड़ जगत्से उसका सम्बन्ध गौण है। इसीलिये व्यक्तित्वके विवेचनमें चित्त या मनकी अपेक्षा वह गौण स्थान लेता है। चित्त स्वभावतः निर्मल एवं प्रभास्वर है, आगन्तुक दोष उसे समल एवं सास्रव बनाते हैं। अनादिकालसे ये दोष अनुशय कहलाते हैं, क्योंकि वह चित्तमें अनुशयन करते हैं, उसमें जाकर सोते हैं, अर्थात् आधार प्राप्त करते हैं। हमारे समस्त कायिक, वाचिक और मानसिक व्यापार अनुशयोंके ही बाह्य प्रकाश हैं। व्यक्तित्वके विकासके लिये इन चित्त-धर्मोंका विश्लेषण अत्यन्त आवश्यक है। इसके विना निर्वाण भी असंभव है। इसके लिये चित्त-रक्षा या विशुद्धि आवश्यक है। इसकी विशुद्धिके लिये भगवान् बुद्ध शील, समाधि और प्रज्ञाकी शिक्षा देते हैं।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



**विकासका आधार—**

चित्तके कुछ आवरण हैं, वे व्यक्तित्वके विकासमें विघ्न पैदा करते हैं, जैसे अवैराग्य या विषयोंमें अनुराग ( कामच्छन्द ), प्रेमका विरोधी हिंसा ( व्यापाद ), चित्तकी अकर्मण्यता, चित्ताका आलस्य, अव्यवस्थित चित्तता ( औद्धत्य ), खेद-पश्चाताप ( कौकृत्य ), संशयालुता आदि। इसके अतिरिक्त कुछ मनोग्रन्थियाँ हैं, जिन्हें संयोजन कहा जाता है। इस प्रकारके अनेकानेक अनुशय और ग्रन्थियाँ जीवनके उन निगूढ़तम अंशोंमें छिपे हैं; जिनसे हमें अपने साधारण जीवनमें परिचय नहीं है। शील, समाधि और प्रज्ञाके द्वारा उन सभी मलोंका निरसन हो सकता है। भगवान् बुद्धने कहा है—'जो सदा शील-सम्पन्न हैं, जो प्रज्ञावान् हैं, जिसका चित्त एकाग्र है, जो अशुभके नाश और शुभके लाभके लिये उद्योग करता है एवं दृढ़ संकल्प करता है, वह संसाररूपी दुस्तर सागर पार कर जाता है। व्यक्तित्वके सर्वविध विकासमें शीलका प्रथम स्थान है। शील काय, वाक् आदि कर्मोंका संयम है, यह एक प्रकारकी चेतना है। इससे समस्त पाप-कृत्योंसे विरति हो जाती है और व्यक्ति नये गुणोंके विकासके लिये अपनेको आधार बना लेता है। समाधिके द्वारा एक ओर चित्तके विक्षेपोंका विध्वंस होता है। और दूसरी ओर शुभ चेतना ( कुशल चित्त ) के प्रति निष्ठा एवं एकाग्रता आती है। विकारोंके अपनयनके लिये समाधिके द्वारा श्रद्धा आदि नयी 'इन्द्रियाँ' और नये 'बल' प्राप्त होते हैं। समाधिके बलसे एक ओर चित्तके दोष शान्त होते हैं, दूसरी ओर आसाधारण जीवन जिसे बौद्ध 'आर्यत्व' कहते हैं, उसकी प्राप्तिकी ओर व्यक्ति उन्मुख होता है। अब व्यक्ति विषयाभिमुखी न होकर निर्वाणमुखी होता जाता है। प्रज्ञाके द्वारा जीव-जगत्-सम्बन्धी समस्त सत्य



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



प्रकट हो जाते हैं। जिन असत्याभिनिवेशोंके कारण व्यक्ति मिथ्या दृष्टियां रखता था—अपने व्यक्ति-जीवन और सामाजिक जीवनको कलुषित एवं क्लेशयुक्त बनाता था, उन सबका समूलोत्पाटन होने लगता है। क्लेश, कर्म और विपाक समाप्त होने लगते हैं, और जीवनमें परम शान्तिका लाभ होने लगता है। ऐसे व्यक्तिका जीवन करुणा-मुदिताका जीवन होता है। यही मनुष्यका लोकोत्तार जीवन है। इसके साथ ही व्यक्तित्वके विलोपका भी प्रत्यक्ष होने लगता है। जो भारतीय-जीवनका आध्यात्मिक पक्ष है। इस प्रकार बौद्ध-दृष्टिमें व्यक्तित्त्वके विकासका पर्यवसान व्यक्तित्वके विलोपमें होता है। व्यक्तित्वका विलोप जैसे विध्यात्मक नहीं है; वैसे निषेधात्मक भी नहीं है। वह परमार्थ-सत्य है, वह परम पुरुषार्थ एवं परम शुभ है। यह महा करुणा और महा प्रज्ञाके उद्‌गमका स्थान है। यहाँ जगत्‌की सेवाके लिये प्रज्ञा और उपाय दोनोंका प्रतिलाभ होता है।

इस प्रकार हम देखते हैं, पाश्चात्य जड़वादी-प्रधान दर्शनोंकी अपेक्षा बौद्धोंका अध्यात्म-प्रधान व्यक्तित्वका यह विश्लेषण बहुत कुछ भिन्न है।

व्यक्तित्वके उपादानोंके परिज्ञानके लिए थोड़ा हम विस्तार करेगें। व्यक्तित्वके दो उपादान नाम और रूप प्रसिद्ध हैं। नाम रूपके समन्वयको समझनेके लिए बौद्धोंके कार्यकारण भावकी कुछ विवेचना कर लेनी चाहिए। नाम-रूपात्मक व्यक्तित्वके विवेचनमें रूपका अभिप्राय जीवित देहसे है। रूपके दो अर्थ प्रसिद्ध हैं १. विपरिणाम या विक्रियासे जो बाधित होता है अर्थात् रूप उसे कहते हैं, शीत-उष्ण आदि जो भौतिक अवस्थाओंसे अपनी आकृति बदलता है २. या रूप सप्रतिध है, अर्थात् रूप स्वदेशमें पररूपकी उत्पत्तिमें बाधक होते हैं। वह प्रतिघात स्वभाव है। इन लक्षणोंके अनुसार



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



बाह्य पृथिवी, अप्, तेज, वायु आदि रूप स्कन्धमें हैं। सर्व साधारणमें प्रचलित इन रूपोंका विवेचन पदार्थ-शास्त्रका विषय है। मानस-विज्ञान जो व्यक्तित्वका भी विज्ञान है, उसकी दृष्टिसे पृथिवी, अप्, तेज, वायुसे अभिप्राय उनके काठिन्य, स्नेहत्व, उष्णत्व और गति-शीलत्वसे है। इसीलिए जीवित देहकी साधारण जड़ताका स्वरूप वाह्य वस्तुओंकी जड़तासे भिन्न है। पृथिवी आदि जड़ धातुओंके उपर्युक्त चार गुणोंसे दो प्रकारके भौतिक या उपादाय रूपोंका उत्पाद होता है। इन दो रूपोंमें पंच-ज्ञानेन्द्रियाँ और उसके विषय तो हैं ही, स्त्रीत्व, पुरुषत्व नामक भाव, मनुष्यकी जीवनी शक्ति ( जीवितेन्द्रिय ), हृदयवस्तु, काय और वाक्के व्यापार आदि भी हैं। इन विसदृश रूपोंका समन्वय जीवन है। इसी जीवित शरीरसे मनका सम्बन्ध है। इतना ही नहीं वैभाषिकोंने रूपमें 'अविज्ञप्ति' नामक पदार्थकी भी गणना की है। यह अविज्ञप्ति जाग्रत् अवस्थाकी पंचेन्द्रियोंके समान तथा काय, वाक् व्यापारके समान जाग्रत् जीवनको विज्ञापित नहीं करती, किन्तु उसका समग्र जीवनपर महत्त्वपूर्ण प्रभाव है। 'अविज्ञप्ति' कुशल या अकुशल कर्मोंका प्रवाह है, जो अन्य कर्मोंके समान दूसरोंको विज्ञापित न करके भो मनुष्योंके भले-बुरे पुराने कर्मोंको प्रवाहके रूपमें सुरक्षित रखती है। अपराध और दण्डको व्यवस्थामें अविज्ञप्तिके व्यापारका बड़ा महत्त्व है। अपराध करनेके बाद किसीका चित्त विक्षिप्त हो गया या अन्यासक्त हो गया, पुराने अपराध-चित्तका विज्ञापन नहीं हो रहा है, क्षणिक होनेके कारण अपराध चित्त तत्काल समाप्त भी हो गया, अब उस व्यक्तिका एक प्रकारसे नवीन व्यक्तित्व हो गया। ऐसा नवीन व्यक्ति पूर्वकृत अपराधके लिए दण्डका भागी कैसे होगा? इसके लिए अपराध-चित्तका अविज्ञापित प्रवाह आवश्यक हो जाता है। अविज्ञप्तिके



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



उपादान विज्ञप्तियाँ ही हैं और विज्ञप्तियां रूपोंसे उत्पन्न होती हैं। अतः अविज्ञप्तिरूप है और विज्ञानसे बहिर्भूत है। रूपोंकी उपर्युक्त गणनामें स्पष्ट देखा जा सकता है कि यद्यपि ये रूप हैं; फिर भी वे कितनी अधिक मात्रामें मनके स्वभावके समीप हैं। इसी अभिप्रायसे भगवान् बुद्धने कहा है :—

**'कायन्वयं चित्तं होति चित्तन्वयो कायो होति'**

( मज्झिम निकाय उपालि सुत्त ) हम देखते हैं कि चित्तोत्पादके साथ-साथ कितने ही दैहिक व्यापार होने लगते हैं और दैहिक व्यापारके साथ-साथ मानसिक क्रियायें चलने लगतो हैं। दर्शन, श्रवणादि चित्तके कार्य हैं; किन्तु चक्षु, श्रोत्रादि इन्द्रियोंके नष्ट होनेपर वे सम्पन्न नहीं होते। स्पर्श एक चैत्त-धर्म है; किन्तु चक्षु आदि इन्द्रिय तथा रूप-रस आदि विषय और मनके सम्मिलनके बिना यह सम्मिलन-बोध रूप स्पर्श उत्पन्न नहीं होता। इसी प्रकार ध्यानको उत्कृष्ट भूमिमें संज्ञा-वेदयित-निरोध-समापत्ति नामसे एक ध्यान-समापत्ति होती है। जिसमें चित्तकी समस्त वृत्तियाँ निरुद्ध हो जाती हैं। इस ध्यानके सम्पादनके साथ ही वाक्-क्रिया और दैहिक-क्रिया रक्त-संचार, श्वास, प्रश्वास आदि निरुद्ध हो जाते हैं।

आलोक और उसका ताप जैसे सहजात होते हैं, उसी प्रकार गर्भ-कालमें नाम और रूप सहजात ही उत्पन्न होते हैं। जैसे काष्ठिका ( तिपाईके तीनों डंडे ) परस्परकी सहायतासे ही खड़े होते हैं और अपने ऊपर अनेकका भार ढोते हैं; उनमेंसे एक या दो न हों तो सब भूपतित हो जाते हैं उसी प्रकार नाम और रूप परस्परमें ही एक दूसरेके सहयोगसे उत्पन्न होते हैं और विशीर्ण नहीं होते।

गर्भकालमें जीवनकी आयु, वर्ण, गन्ध, रस, ओज, पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, स्त्रीत्व, पुरुषत्व, हृदय सब एक साथ उत्पन्न होते हैं।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



वैभाषिक बौद्ध सभागता नामका एक संस्कार मानते हैं। इनके मतमें सभागता नामका एक ऐसा द्रव्य है; जिसके योगसे विभिन्न मनुष्योंमें समानता प्रतीत होती है और एक ही मनुष्यमें पहलेकी अपेक्षा बादमें साम्य प्रतीत होता है और वह पहचानमें आता है। जन्मान्तर होनेपर भी यह सभागता बनी रहती है। बौद्ध मतमें कर्मचेतना-स्वभाव होते हैं। कर्म ही वह वस्तु है, जिससे व्यक्तिमें नाम और रूप दोनों प्रतिबद्ध होते हैं।

बौद्ध जड़ या चेतन समस्त पदार्थोंको धर्म कहते हैं। धर्म वह है, जो स्वलक्षणका धारण करे। वस्तुकी यह स्वलक्षणता उसका असाधारण स्वरूप है। ये अनन्त हैं; अनित्य और क्षणिक हैं। पदार्थोंका परिचित व्यावहारिक रूप इन्हीं स्वलक्षण धर्मोंकी एक विशिष्ट परिणति है, जिसे बौद्ध संस्कृत धर्म कहते हैं। संस्कृतका अर्थ है अन्योन्यकी, अपेक्षासे उत्पन्न हुई वस्तु, कोई भी व्यावहारिक पदार्थ ऐसा नहीं है, जो किसी एक कारणसे उत्पन्न होता हो। यह नियम है कि सभी धर्म स्वतःसे अन्य धर्मोंके कारण होते हैं। यह भी नियम है कि किसी एक कारणसे कार्य उत्पन्न नहीं होता, प्रत्युत कारण-समुदायसे एक कार्य उत्पन्न होता है। कार्य-कारण-भावका नियम इतना ही है कि किसी एक विशेष वस्तुके होनेपर दूसरी विशेष वस्तु होती है, उसके न होनेपर नहीं होती।

इसे प्रतीत्य समुत्पादका सिद्धान्त कहते हैं—प्रतीत्यका अर्थ है अपेक्षा करके, समुत्पादका अर्थ है उत्पत्ति। प्रतीत्य समुत्पादके इस सिद्धान्तसे कार्य-कारणका पौर्वापर्य तथा उनका सहभावित्व दोनों ही नियम पर्यवसित होते हैं। बीजसे अंकुरकी उत्पत्तिमें पौर्वापर्य है तथा प्रदीप और उसके आलोकमें तथा वृक्ष और उसकी छायामें सहभावित्वका नियम लागू है।

इस प्रकार समस्त संस्कृत धर्म अन्योन्यापेक्ष सहभावी एवं



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



संयोजन-मात्र है। नाम और रूप दोनो संस्कृत हैं। इसलिए हमारा व्यक्तित्व भी संस्कृत एवं सापेक्ष है। नाम और रूपोंमें प्रत्येक अन्यान्य धर्मोंके संयोगसे उत्पन्न होते हैं। चित्त अपने चैत्त धर्मोंके साथ उत्पन्न होता है। रूप अन्य रूपोंके साथ ही उत्पन्न होते हैं। नाम और रूपका सहभावित्व है। यह ठीक है कि जड़से चेतनकी उत्पत्ति नहीं होती और चेतनसे भी जड़की उत्पत्ति नहीं होती; किन्तु जड़ चेतनकी अन्योऽन्यापेक्षता, सहभाविता, एकरूपता एवं समानोद्देश्यता हो सकती है।

चार्वाक्के जडवाद तथा आत्मवादियोंके शाश्वतवादसे अपनी भिन्नता दिखाते हुए आचार्य धर्मकीर्तिने कहा है कि शरीर और मन अन्योऽन्य हेतुक है। मन कायाश्रित इसलिए है कि चक्षुर्विज्ञान आदि रूप आदिको ही ग्रहण करके मनको सुखी या दुखी बनाते हैं। जैसे बिना इन्द्रियोंके बुद्धि नहीं उत्पन्न होती, उसी प्रकार बिना बुद्धिके इन्द्रियाँ भी उत्पन्न नहीं होती, केवल जड़ भूतोंसे ही इन्द्रियाँ उत्पन्न हों तो सभी जड़ोंसे वे उत्पन्न क्यों न हों। इसलिए काय और मनकी अन्योऽन्यहेतुकता है। इसी प्रकार क्रमरहित कारणसे क्रमिक एवं क्षणिक कार्यकी उत्पत्ति नहीं होती, यदि हो तो, एक ही बार सभी कार्योंकी उत्पत्ति हो जाय। इसलिए स्थिर, एकस्वभाव तथा निर्विशेष वस्तुसे बुद्धिकी उत्पत्ति नहीं हो सकती। कायसे उत्पन्न होने वाली बुद्धि क्रमिक होती है, अतः कायकी भी क्रमिकता माननी पड़ेगी, जो केवल चार्वाक्के जड़बादमें संभव नहीं है,, नित्य तो निरतिशय एवं निरपेक्ष होता ही है, उससे कार्योंकी क्रमिक उत्पत्ति मानना अत्यन्त विरुद्ध होगा। बौद्धमतमें काय और मनके सहाव-स्थानका कारण कर्म है, इस पर आगे विवेचन करेंगे। कर्म एक ऐसा समान कारण है, जिससे काय और मन प्रतिबद्ध होते हैं। जैसे इन्द्रिय



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



और उनके विषयोंमें परस्पर आश्रयाश्रयी भाव नहीं है, किन्तु एक सामग्रीके अधीन होनेके कारण ही वे एक विज्ञानको उत्पन्न करते हैं, उसी प्रकार काय और मनका सहावस्थान है।

पहले कह आये हैं कि व्यक्तित्वके विकासमें चित्तकी ही प्रधानता है। चित्त चेतना-स्वभाव है, जो चिन्ता करे, जो विषयालम्बनोंको ग्रहण करे, उसे जाने वह चित्त है। चित्त, मन और विज्ञान पर्याय हैं।, चक्षु, श्रोत्र, घ्राण, जिह्वा, और कायके पांच विज्ञान और मनोविज्ञान चित्त हैं। इस प्रकार विज्ञानकी कोई भी अवस्था नहीं है, जो चित्तके बहिर्भूत हो। वैभाषिक लोग छह विज्ञानोंके अतिरिक्त एक मन भी मानते हैं, चक्षु, श्रोत्रादि कोई भी विज्ञान जब अनन्तर अतीत होता है, तब वह मन हो जाता है। स्थविरवादी मनकी जगह हृदय मानते हैं, जो एक रूपी इन्द्रिय है। उनके मतमें चित्तकी उच्चतम भूमियोंमें भी संस्कारोंके आश्रयके रूपमें हृदय वस्तु रहता है। मनके इस रूपका विज्ञान-वादी बौद्धोंने चमत्कारपूर्ण विकास किया है। वस्तुतः बौद्ध विज्ञान-वादमें मनोविज्ञानका महत्त्वपूर्ण अध्ययन है। प्रस्तुत निबन्धमें मैंने उस दृष्टिसे विचार नहीं किया है। अस्तु, चित्त सर्वसाधारण विज्ञान है, चैत्त या चैतसिक विषयकी विशेष अवस्थाओंको ग्रहण करते हैं। किसी भी अवस्थामें चित्त और चैतसिक एक दूसरेके बिना उत्पन्न नहीं होते। वे एक साथ ही उत्पन्न और निरुद्ध होते हैं, एक ही आलम्बन और वस्तुको ग्रहण करते हैं। बौद्ध अभिधर्ममें चित्त-चैतसिकों का जो श्रेणी विभाजन किया गया है, उससे मनुष्यके व्यक्तित्वका स्तर और उसका उत्तरोत्तर विकास कैसे होता है, यह जाना जा सकता है, चैत्त-चैतसिकोंका विभाग चार लोकोंमें किया गया है। कामलोक, रूपलोक, अरूपलोक, और लोकोत्तर—ये चार चित्त भूमियाँ है। इन चार लोकोंमें कोई अधिवासी है या नहीं यह प्रश्न



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



महत्त्वपूर्ण नहीं है और न तो व्यक्तित्व-विज्ञानमें उसका कोई उपयोग ही है। ये लोक चित्तोंके उत्पत्तिके विषय या स्थान हैं। चित्त-चैतसिकोंके क्रम विकास तथा विश्लेषणके लिये लोकोंकी यह व्यवस्था परम उपादेय है। काम-तृष्णासे युक्त होकर एवं रूपको आलम्बन बनाकर उत्पन्न होनेवाले चित्त कामावचारी कहलाते हैं। कामलोकस्थ चित्त कुशल-अकुशल होते हैं। जो चित्त दुःखकी हेतुभूत तृष्णाओंके जनक हैं, उनके पोषक और वर्द्धक हैं, वे अकुशल हैं। जो चित्त काम तृष्णाके विध्वंसक हैं, वे कुशल हैं। लोभ, द्वेष एवं मोह अकुशल चित्तको उत्पन्न करते हैं, अलोभ, अद्वेष, एवं अमोह कुशल-चित्तके समुत्थापक हैं। मनुष्योंको कुछ अहेतुक चित्त मिले हैं। जीवनके ये निष्क्रिय भाग हैं। यह कुशल या अकुशल नहीं होते। इनपर मनुष्यका कोई अधिकार भी नहीं है, इसलिये इन्हें अहेतुक चित्त कहते हैं। जन्मान्तरवादके अनुसार ये कुशल-अकुशल कर्मोंके फल हैं, किन्तु स्वयं कुशल या अकुशल चित्त नहीं है। आँखसे किसी स्त्रीको देखना पाप या पुण्य नहीं है। हाँ उसके बाद हम उसमें रमणी या मातृ-भाव उत्पन्न करके कुशल या अकुशल उत्पन्न करते हैं। अभिधर्मकी परिभाषाके अनुसार यही जीवनका सक्रिय अंश है। इसलिये निष्क्रिय या अहेतुक चित्त चक्षु आदि इन्द्रियोंसे उत्पन्न पाँच विज्ञान आदि हैं। जैसे कोई रूप चक्षुके सामने उपस्थित होता है तो वह चक्षुके द्वारा ही जाना जायेगा। श्रोत्र आदिके द्वारा नहीं। चित्तका यह जानना ही चक्षु-ज्ञान कहलाता है। उसके बाद चित्त चक्षुके द्वारा उस आगत विषयको निर्बाध आने देता है, जिससे ग्रहण हो पाता है। चित्तका यह निष्क्रिय ग्रहण सम्प्रतीच्छ कहलाता है। उसके बाद चित्त इस विषयको अपने पूर्व अनुभूत विषयोंके साथ तुलना करके परीक्षा करता है, इसीको 'सन्तीरण चित्त'



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



कहते हैं । ये समस्त चित्त निष्क्रिय एवं विपाक हैं । लोभ, अलोभादि कुशल-अकुशल हेतुओंसे उत्पन्न न होनेके कारण ये चित्त अहेतुक कहे जाते हैं ।

कामलोकके अतिरिक्त चित्तकी रूप, अरूप और लोकोत्तर भूमियाँ हैं । ये सब ध्यान-चित्त हैं । काम-तृष्णाके कारण सभी साधारण चित्त ध्यान-चित्त नहीं होते, इसीलिये कामलोकमें अकुशल चित्त भी होते हैं, जो लोभ, द्वेष, मोहसे उत्पन्न होते हैं ।

काम-लोकसे ऊर्ध्व लोकोंमें ध्यान-चित्त तो होते हैं; किन्तु अकुशल नहीं होते । काम-धातुके कुशल चित्तोंके आधारपर ही रूप-लोकमें ध्यान चित्तोंको उन्नीत किया जाता है । ध्यान-चित्तके उन्नयनके लिये शील-विशुद्धि अत्यन्त आवश्यक है, उसके लिये अहिंसा आदि पंचशीलोंका पालन तथा एक विशेष प्रकारका आचार आवश्यक होता है । स्थूल आलम्बनोंपर ही चित्तकी एकाग्रताकी यह क्रिया प्रारंभ होती है। फलस्वरूप चित्त पांच प्रकारके दोषोंसे निवृत्त हो जाता है । रूप-लोकके प्रथम ध्यानका एक अंग वितर्क है । वितर्कसे चित्त ध्येय विषयका ग्रहण है और चित्त चैतसिककी जड़ताका भंग करता है । आगे वितर्कके द्वारा गृहीत पदार्थोंके स्वभावको ही विशेष रूपसे जाननेके लिये 'विचार' नामक ध्यानांग पुनः पुनः निमज्जन करता है, इससे चित्तमें किसी प्रकारकी विचिकित्सा नहीं रह जाती । ऐसे व्यक्तिका मन दोलायित नहीं रहता । आलम्बनमें चित्त जब शंकाहीन हो जाता है तो उसमें प्रीति नामक ध्यानांग उत्पन्न होता है, प्रीतिके कारण चित्त हिंसासे विरत होने लगता है । प्रीतिका साथी 'सुख' नामक ध्यानांग है, सुखसे शारीरिक और मानसिक दुखोंका प्रतिघात होता है और राग-द्वेषादिसे तप्त चित्त शान्त होने लगता है, इससे अव्यवस्थित-चित्तता समाप्त हो जाती है । इसके बाद



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



'एकाग्रता' नामक ध्यानांग उत्पन्न होता है, उससे विषयोंके प्रति अनुराग समाप्त होने लगता है। 'एकाग्रता' के द्वारा चित्त अत्यन्त शक्तिशाली एवं तीक्ष्ण होता है। अब उस व्यक्तिमें पदार्थोंके सत्य-स्वरूपके साक्षात्कार करनेकी क्षमता आ जाती है। इसीके बलपर आगे चलकर ऐसी 'प्रज्ञा' उत्पन्न होती होगी, जिसके द्वारा आत्मा एवं जीवनकी तृष्णाका क्षय संभव होगा। इसी प्रकार रूप-लोकके ध्यानोंका एकमात्र उद्देश्य चित्तको शक्तिशाली बनाना और 'प्रज्ञा' का बीजवपन करना है।

चित्तकी विशुद्धिके लिये चार ब्रह्म विहारोंकी साधना भी सर्वोत्कृष्ट समझी जाती है। दूसरोंका हित साधन करना, उन्हें दुखोंसे विमुक्त करना, लोगोंकी सम्पन्नावस्था देखकर हर्षित होना, समस्त प्राणियोंके प्रति पक्षपातरहित एवं समदर्शी होना—ये चार कुशल चित्त क्रमशः मैत्री, करुणा, मुदिता, और उपेक्षा हैं। मैत्रीसे द्वेष और द्रोह, करुणासे हिंसा-वृत्ति, मुदितासे अरति ( अप्रेम ), उपेक्षासे हिंसा और अनुनयनका प्रहाण होता है।

अरूप भूमिमें विचरण करनेवाले चित्त अरूपावचारी चित्त कहलाते हैं। ये भी ध्यान-चित्त हैं। चित्तकी एकाग्रताके आधारपर ही व्यक्ति अरूप-लोकके ध्यान-चित्तके उपादानके लिये चेष्टा करता है। यहाँ स्थूलतम और स्थूल कामतृष्णा और रूप-तृष्णा दोनों ही नहीं है, फिर भी अरूप-तृष्णा या भव-तृष्णा है। इस लोकमें पहले अनन्तआकाशको चित्तका आलम्बन बनाना पड़ता है, इससे तीन प्रकारकी मिथ्या संज्ञाओंका विनाश होता है। मिथ्या संज्ञाएँ निम्नलिखित हैं यथा जड़-जगतके प्रति मिथ्या संज्ञा, इन्द्रिय और उनके विषयोंके द्वारा प्राप्त ज्ञानसे सम्बन्धित मिथ्या विचार एवं रूप, शब्द आदि नाना प्रकारके आलम्बनोंके



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



प्रति मिथ्या कल्पना। अनन्तआकाशका आलम्बन करके जो अरूप ध्यान होता है, उसके लिये करुणाका असीमित ध्यान सम्पन्न करना पड़ता है। क्योंकि इस ध्यानसे चित्तकी निराकारता और शून्यता स्पष्ट हो जाती है। फलस्वरूप चित्तके प्रति मनुष्यके क्षुद्र अस्तित्वका बोध लुप्त हो जाता है इसीलिये उस व्यक्तिका अनन्त करुणाका ध्यान पुष्ट होता है। बादमें विज्ञानकी अनन्तताका ध्यान-चित्त उत्पन्न किया जाता है। यह रूपावचरकी 'मुदिता' ध्यानके विना सम्भव नहीं होता। इस ध्यानमें विज्ञान या चित्तके आनन्त्यका साक्षात्कार करना होता है। इससे अपनी-अपनी दृष्टियोंके प्रति अभि-निवेश समाप्त हो जाता है, और चित्तका आनन्त्य प्रकट हो जाता है।

इसके बाद वह अनन्त चित्त अर्थात् अनन्त दृष्टयभिनिवेश भी कुछ नहीं है, इससे 'आकिंचन्यायतन' चित्तका साक्षात्कार किया जाता है। किंचन अर्थात् कुछ, अकिंचन अर्थात् 'कुछ भी नहीं' चित्तका लेश भी नहीं है, इसका साक्षात्कार होता है। 'कुछ नहीं' और 'कुछ है' मनुष्यकी कल्पित संज्ञाएँ हैं इनका भी परित्याग करना पड़ता है। यह अरूप-ध्यान चित्तकी अन्तिम एवं चौथी अवस्था है 'नैव संज्ञा नासंज्ञा कुशल चित्त'।

कामावचर, रूपावचर एवं अरूपावचर कुशल चित्तोंके लाभके साथ-साथ व्यक्ति कितने प्रकारके कुसंस्कारोंको छोड़ता है, उसके छोड़नेकी विधि क्या होती है, इसका ज्ञान मनोविज्ञानकी दृष्टिसे बड़ा ही महत्त्वपूर्ण है, उसे न देकर यहाँ मैंनें नये गुणोंके आधानका ही किंचित् प्रकार एवं क्रम प्रदर्शित किया है।

उपर्युक्त तीन ध्यान-भूमियोंके अतिरिक्त चतुर्थ लोकोत्तर ध्यान-भूमि है। यहीं व्यक्ति अपने लोकोत्तर व्यक्तित्वका प्रकाश पाता है, इस अवस्थाकी विशेषता यही है कि व्यक्ति अपने व्यक्तित्वका विलोप करने लगता है। व्यक्तित्वका विलोप व्यक्तित्वकी रक्षाका



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



प्रतिपक्षी तो अवश्य है, किन्तु लोकोत्तरता या पारमार्थिक अस्तित्वका विरोधी नहीं है। काम रूप, और अरूप स्तरोंमें व्यक्तिने कुशल कर्मोंका संचय अवश्य किया, किन्तु इस संचयके बलसे उसका जीवन अनिश्चित कालके लिये दीर्घ होता जा रहा है, अब यह महापुरुष उससे ऊबने लगता है, शुभ तृष्णाओंके अभिनिवेशको भी वह कब तक ढोता रहे, अतः अब वह अन्तिम असीमताकी ओर.चल पड़ता है। वह लोकोत्तर एवं निर्वाणाभिमुखी भी हो जाता है। वह प्रवाह-पतित नहीं है, नये प्रवाहका निर्माता है। वह संकोच एवं सीमाको छोड़कर 'सर्व' को जाननेकी चेष्टामें लग जाता है। यही आर्य-मार्ग है, वास्तवमें अध्यात्मका पथ यही है। इसमें दो प्रकारके चित्त होते हैं ( १ ) मार्ग-चित्त और ( २ ) फल चित्त। यह ध्यानमें रखना चाहिये कि जिस प्रणालीसे व्यक्ति कामावचर चित्तसे रूपावचर चित्तमें उन्नीत-होता है, उसी प्रकार उसी प्रणालीसे लोकोत्तर मार्ग-चित्त एवं फल-चित्तमें उन्नीत होता है। यहाँ वह पृथक्-जनका गोत्र छोड़ता है और आर्य-गोत्र या बुद्ध-गोत्रका बनता है। अर्थात् उसका पामर व्यक्तित्व छूट जाता है। यहाँ समस्त पारमार्थिक सत्योंका साक्षात्कार हो जाता है। बौद्ध दृष्टिसे अत्यन्त पामर अवस्थामें भी मनुष्यको अपने पामरत्वसे ऊपर उठनेका मार्ग मिलता है। इसे बौद्ध मार्ग-सत्य कहते हैं। यह ध्यान देनेकी बात है कि मार्ग-सत्यमें किसी प्रकारका मल-लेश नहीं है। वह शुद्ध एवं अनास्रव है, किन्तु वह संस्कृत एवं सापेक्ष है। वह किसी बाहरी कृपासे लब्ध नहीं होता, अपितु अपने व्यक्तित्वका ही एक अंग है। उसका व्यक्ति विकास करता है। यही कारण कि व्यक्ति अपने व्यक्तित्वमें ही व्यक्तित्वके विलोपका बीज भी सुरक्षित रखता है। वह मार्ग कुशल-चित्त है। आपने देखा इसी कुशल चित्तके विकासके सहारे ही काम, रूप, एवं अरूप स्थितियोंका अतिक्रम करते हुए मनुष्य लोकोत्तर स्थितिमें पहुँचा। ★



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

# महाराजश्रीके सत्सङ्गसे

: विवर्तका अर्थ

—दिनकरराय व्यास

देश, काल और देशकालमें दिखनेवाली पदार्थ-समष्टि—सबका-सब—परमात्माके असल स्वरूपमें जादूका खेल है—माया है—विवर्त है। "वि" माने विपरीत—विरुद्ध और "वर्त" माने वर्तन, विपरीत वर्ताव—विरुद्धवर्ताव। एकको अनेक देखना विरुद्ध वर्ताव है, चेतनको जड़—देखना विरुद्ध वर्ताव है, द्रष्टाको-दृश्य देखना विरुद्ध वर्ताव है, अपनेको अनेक रूपमें—अन्य रूपमें देखना विरुद्ध वर्ताव है। विपरीतं वर्तनं विवर्तः विरुद्धं वर्तनं वा विवर्तः। जो वस्तु जैसी है उसके विरुद्ध उसको देखना—केवल मनके सम्बन्धसे—विरुद्ध वर्तन है। जितने भी पदार्थ हैं, सबके सब अपृथग्भाव हैं। अपृथग्भाव अर्थात् परमात्मासे पृथक् इनकी कोई सत्ता नहीं है। ये सबके सब सत्ता-शून्य होकर ही परमात्मामें दिखायी पड़ते हैं। जो इस बातको ठीक-ठीक जानता है—जो जानता है कि जितनी भी चीजें घड़ा, कपड़ा, स्त्री, पुरुष, पशु, पक्षी, मनुष्य आदि अलग-अलग मालूम पड़नेवाली वस्तुएँ असलमें एक अखंड, अद्वय तत्त्वमें ही मालूम पड़ती है। जिसे यह ज्ञात हो गया कि एकमें ही अनेककी कल्पना हो रही है। यह जो इदं सर्वके रूपमें दिखायी पड़ रहा है, यह आत्मा ही है—ब्रह्म ही है, जो अलग-अलग रूपोंमें दिखायी पड़ रहा है इस बातको जिसने जान लिया उसकी तो छुट्टी है। जो यह जान गया कि ब्रह्मके अतिरिक्त न स्वर्ग है, न नरक, न गोलोक है, न कैलास, न वैकुण्ठ है, न धरती, सात पाताल, सात स्वर्ग ये कोई ब्रह्मसे भिन्न नहीं है। एक परमात्मासे अलग कोई नहीं है। यह तत्त्वज्ञान जिसको हो गया है वह तत्त्वविद् है। ★



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS


SERVICE DEPENDABILITY SATISFACTION.

WHEN YOU THINK OF

Coal-Coke-Dyes-Chemicals-Salt-Starches-Glucose-Hessian & Gunnies Gypsum-Colliery Equipments & Stores-Transport-Wire. Ropes-C. I. Pipes-Refractories Etc.

THINK OF

S. D. Shethia & Company Private Ltd., Ikrah Nandi Coal Company, Industrial Supplies Private Ltd., M. D. Shethia Private Ltd., Madhusudan Brothers Limited., Shethia Mining & Manufacturing Corporation Ltd., Bharat Salt & Chemical Industries (M-K) Ltd., Industrial Crane & Fabricators Ltd.

| | | |
|---|---|---|
| F/2. Gillander House, | Podar Chambers, | Shrijee Niwas, Near |
| 8, Netaji Subhas Road, | Parsi Basar Street, | Dhanasutta'r Pole, |
| P. B. No. 675, | P. B. No.906, | Relief Road, |
| CALCUTTA-1. | BOMBAY-1. | AHMEDABAD. |
| Phone : 22-9933 | Phone : 258775/6 ( 2 Lines ) | Phone : 23703 |
| Telex : 525 | Telex : 473 | Telex : |
| Gram : SHETHIACO(C) | Gram : SHETHIACO | Gram : SHETHIACO |

Branchas and Representatives in all important industrial Centres or India.

---

Well Known Products :—

* BHARAT VELVET
* BHARAT TERENE SUITINGS
* BHARAT TERENE SHIRTINGS
* NYL-ON TERENE SAREES & BUSH SHIRTING

Manufacfured by :—

BHARAT VIJAY VELVET & SILK MILLS

Proprietors :—

The Aditya Texttile

*Industries Pvt. Ltd.*

Kurla Andheri Road,

BOMBAY-70

Phone : 551161/7


CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

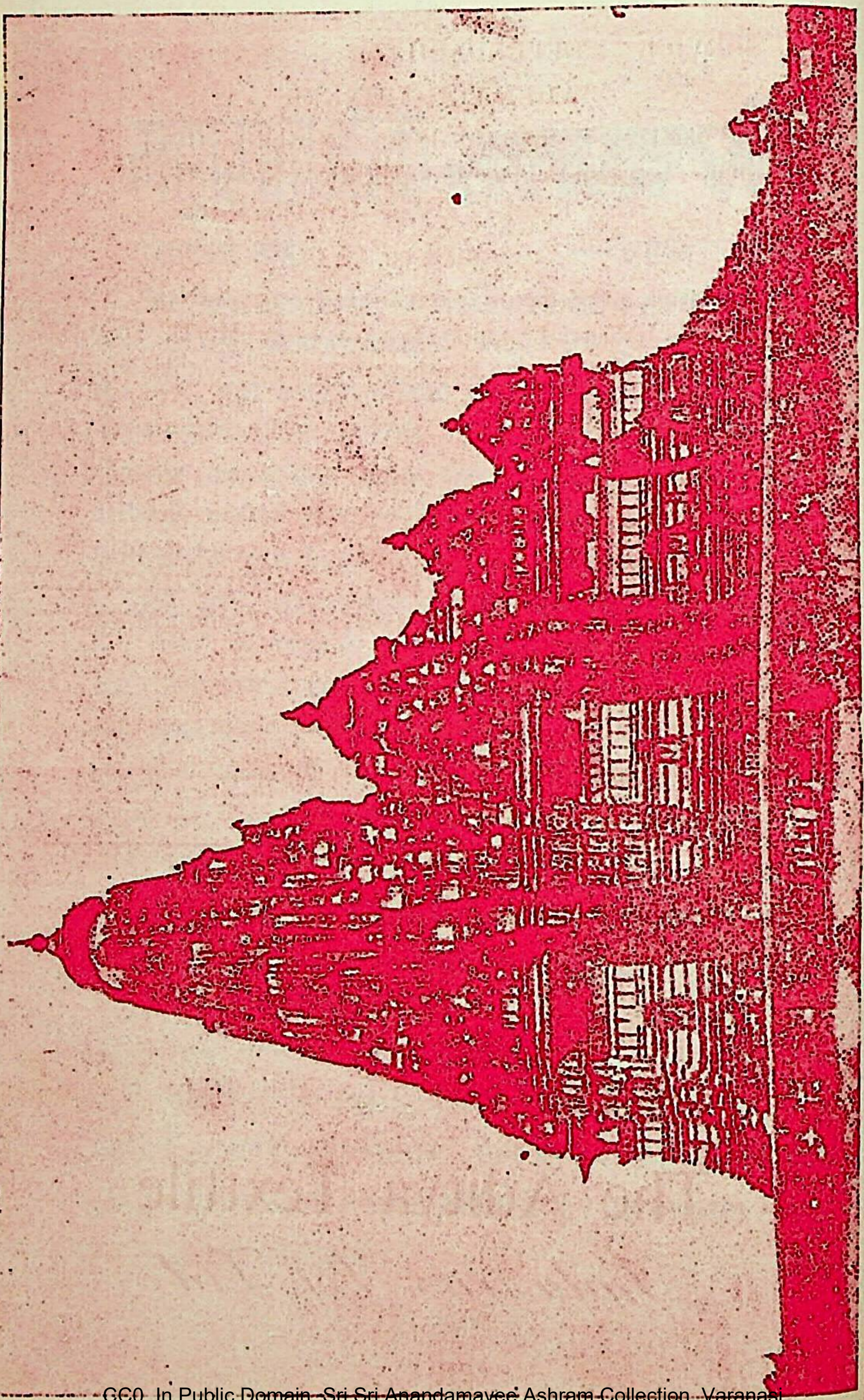

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

# चन्देलों की भटकती हुई आत्माओं की विश्रामस्थली खजुराहो

ज्योति प्रकाश सक्सेना, एम० ए०

कवियों और कलाकारोंकी आराध्य-भूमि विन्ध्यमें छतरपूरसे सत्ताइस मील पूर्वकी ओर छोटा-सा गांव है, खजुराहो, जहाँ सदियों पूर्व चन्देलोंने इतिहास बोया था। दिन गुजरे और इस रत्नगर्भासे पाषाणोंके अंकुर फूटे। देवालयोंकी फसल लहलहायी। सभ्यता फली। संस्कृति फूली।

समय और खिसका। चन्देल चले और खजुराहोके वैभवका लोप हुआ। और फिर एक तूफान; एक और कुठाराघात। बघेलखंड और पन्नासे भागे हुए सिकन्दर लोदीका इस गौरवस्थलीपर प्रकोप और खजुराहोकी सांस्कृतिक श्रीकी अन्त्येष्टि।

परन्तु खजुराहोका तन मरा, आत्मा नहीं। गीत मौन हो गये किन्तु गूंज तब भी शेष रही।

और आज! आज युगोंके आवर्तनोंके पश्चात् खजुराहो फिर जी उठा है। आज वहाँ सभ्यता और संस्कृति फिरसे साँसें लेने लगी हैं। आज वहाँ चन्देलोंकी भटकती हुई आत्माओंको फिरसे एक बार राहत मिली है। आज उसका खोया हुआ वैभव फिर लौट आया है। आज वह पुनः कला-प्रेमियों, पुरातत्त्ववेत्ताओं, इतिहासज्ञोंका तीर्थस्थल बन गया है। चढ़ाव, उतार और फिर चढ़ाव। खजुराहोके संघर्षमें जीवनकी परिभाषा बोल गयी।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



खजुराहोके भव्य मन्दिर चार समूहोंमें विशृंखलित हैं—पश्चिमी, पूर्वीय, दक्षिण-पूर्वीय और दक्षिणी। किसी अदृश्य सूत्रमें बँधे हुए इन चारों समूहोंका अपना संसार है, जहां साधककी साधना विभिन्न परिधान धारणकर अनेकतामें भी एकरूपताका पाठ पढ़ाती। कहीं शिवका रौद्र अनासक्तिमें स्फूर्तिका प्रस्फुटन करता; कहीं विष्णुके सौम्यसे अचेतन चेतन होता। और कहीं जिनके वीतरागमें एक स्वयंसिद्ध जीवन-दर्शनका रहस्य मिलता।

'कन्धारिया' मन्दिर खजुराहोका प्राण है। पश्चिमी समूहकी पिछली पंक्तिमें स्थित यह मन्दिर खजुराहोकी सबसे विशाल और सबसे सुन्दर कृति है। थरों, गोलों, गलतों, शोभापट्टियों एवं रथिकाओंसे अलंकृत प्रवेश-द्वार, सुन्दर कलाकृतियोंसे सुसज्जित महामंडप, और छोटे-छोटे अरुशृंगनों और शृंगोंसे मंडित शिखर इसे सहज ही खजुराहोका सर्वोत्कृष्ट मन्दिर बना देते हैं। फिर, इसकी आठ-सौसे भी अधिक शिल्पाकृतियाँ जिनमें कहींपर नृत्यकी उद्दाम मुद्रा उत्कीर्ण है, तो कहींपर आखेटका मनोहारी दृश्य। कहीं प्रणयी युगलकी लास्य-मुद्रा दिखायी पड़ती, तो कहीं सृजनसे लेकर संहार-तककी सारी विश्व-लीलाका साक्षात्कार होता। चाँदनीमें अभिस्नात इस देवालयमें तो हिमाच्छादित कैलाशकी कल्पना साकार होती। सुन्दर, अतीव सुन्दर। कन्धारियाके पार्श्वमें निर्मित 'देवी जगदम्बी' का मन्दिर है, जहां भ्रम और अज्ञान आश्चर्यको जन्म देते हैं। विष्णुको समर्पित इस मन्दिरमें लक्ष्मीकी स्थापना है; जिसके ऊपर काला रंग और सिन्दूर पोतकर अब कालीका रूप दे दिया है। मन्दिर कन्धा-रियासे छोटा है; किन्तु इस लघुतामें भी चन्देल-कालीन-मूर्तिकलाकी विशालताके अनेक उदाहरण मिल जाते। कुछ ही दूर हटकर 'चित्रगुप्त' मन्दिर है जो सात घोड़ोंके रथपर सवार पाँच फुट



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



ऊंची सूर्य भगवान्‌की सुन्दर मूर्तिके तेजसे सदा दीप्त रहता। अन्धकारमें प्रकाश; जड़तामें चेतनता। फिर, कन्धारियाकी ही भाँति स्थापत्यकी दृष्टिसे समग्र अंगोपांगों–शिखर, गर्भगृह, परिक्रमा, मण्डप, वातायन, साधना-स्थल, अन्तराल, महामण्डप, अर्धमण्डप और तोरणप्रात द्वारसे उपेत दो मन्दिर और हैं, जो क्रमशः 'लक्ष्मणेश्वर' और 'विश्वनाथ' के नामसे पश्चिमी समूहकी सौन्दर्य–श्रीमें वृद्धि कर रहे हैं। लक्ष्मणेश्वर-मन्दिर यशोवर्मन [लक्ष्मवर्मन] की यशोगाथा गाता है और विश्वनाथ-मन्दिर धंगकी कीर्तिपताका फहराता है। दोनों ही मन्दिरोंमें शिलालेख उपलब्ध हैं, जो चन्देलोंके इतिहासपर यथेष्ट प्रकाश डालते हैं। दोनों ही मन्दिर जीवनके विभिन्न अंगोंको हमारे सामने प्रस्तुत करनेवाली सुन्दर कला-कृतियोंसे अलंकृत है। लक्ष्मणेश्वर मन्दिर विष्णुको समर्पित है और विश्वनाथ-मन्दिरमें शिव-लिंग प्रतिष्ठापित है। इसी समूहके मन्दिरोंकी मालाका एक और अनमोल मोती 'मतंगेश्वर' देवालय है; जिसकी शुचिता अखंड है और गरिमा अपरिमेय। मन्दिरमें प्रतिष्ठापित आठ फुट ऊंचे और तीन फुट, आठ इंच व्यासवाले शिव-लिंगकी अर्चनामें प्रतिदिन शंख-ध्वनि करते, घंटे टनटनाते, विजयघंट निनादित होते और आरतीके मद्धिम आलोकमें अनेक कण्ठोंसे 'हर-हर महादेव' फूट पड़ता। अनेकोंमें केवल एक। शिल्पकी दृष्टिसे मन्दिर साधारण है—कोई विशेष अलंकरण नहीं। इसी संदर्भमें आते हैं दो और छोटे किन्तु दर्शनीय मन्दिर; जिनमें प्रतिस्थापित नन्दी और वाराहकी विशाल और सजीव मूर्तियोंको देखकर दर्शकका हृदय आनंदातिरेकसे विभोर हो उठता है। शान्त और भावविभोर नन्दीकी प्रतिमा छह फुट ऊंची और सात फुट लम्बी है और उन्नतग्रीवा वाराह आठ फुट नौ इंच लम्बा और पांच फुट साढ़े नौ इंच ऊंचा है। वाराहके



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



शरीर-भरमें अगणित देवी-देवताओंकी मूर्तियां उकेरी गयी हैं। परन्तु इस वैभवमें भी कहीं कोई वीरानी साँसें लेती; शंख, घंटों और विजयघंटके नादके बीच भी कहीं सिसकियोंके स्वर सुनायी पड़ते। खजुराहोके आदि मन्दिर 'चौंसठयोगिनी' के ध्वंसावशेष—जहां चट्टानोंपर पछाड़ खाकर हवा फूट-फूटकर रो पड़ती। कुरथा पत्थरसे निर्मित कलके ये चौंसठ छोटे-छोटेसे मन्दिर आज एकदम भूमिसात्प्राय हैं। परन्तु उनमें इतिहास आज भी बोलता है; सभ्यता और संस्कृति आज भी अँगड़ाई लेती है। मरणमें भी जीवनका सन्देश। विनाशमें भी सृजनकी लौ।

उत्तरी-समूहका सबसे बड़ा मन्दिर है 'वामन'; जो स्थापत्य और कलाकी दृष्टिसे पश्चिमी-समूहके मन्दिरोंसे हेटा बैठता। गर्भगृहमें चार फुट आठ इंच ऊंची वामनकी मूर्ति प्रतिष्ठापित है। अलंकरण है, लेकिन प्रचुर मात्रामें नहीं। हां, अवतारोंके चित्रोंमें भूमिस्पर्श-मुद्रामें भगवान् बुद्धके दर्शन अवश्य हो जाते हैं। पास ही कुछ टीले हैं; जो कनिंघमके अनुसार ह्वेनसांग द्वारा वर्णित संघारमोंके ढेर हैं। 'ब्रह्मा' का मन्दिर खजुराहो-सागरके किनारेपर स्थित है। लगता है जैसे कोई कलाकार किनारेपर बैठा-बैठा लहरोंकी करवटोंके साथ ही सागरकी गहराईमें डूब जाना चाहता हो। गर्भ-गृहमें एक चतुर्भुजी मूर्ति है—एक लिंग। आकृति वर्गाकार है। शिखर पीठोंका बना है। परन्तु आमलकका अभाव है। 'जवारी' लक्ष्मणजी या ठाकुरजीका मन्दिर है। गर्भगृहके द्वारके ऊपर विष्णुकी मूर्ति है। भीतर भी चतुर्भुजी विष्णु विराजमान हैं। मन्दिर छोटा है—केवल अर्धमण्डप, महामण्डप और गर्भगृह हैं। बाहर उकेरे गये चित्रोंकी तीन पंक्तियां हैं। अलंकरण बड़े मन्दिरोंकी भाँति ही भव्य हैं। परन्तु समूहका सबसे प्राचीन मन्दिर है 'घन्टाई'। जिसका नामकरण



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



सम्भवतः मन्दिरके स्तम्भोंपर उकेरी गयी घण्टिकाओंके आधारपर पड़ा है। मन्दिर अत्यन्त जीर्ण हो चुका है, केवल चौदह फुट ऊंचे कुछ स्तम्भ शेष रह गये हैं; जिनसे मन्दिरकी प्रारम्भिक गरिमाका आभास मिलता। स्तम्भोंकी खुदाई रुचिर है और रूप सुन्दर। अर्धमण्डपकी छतपर गंधर्वों और नर्तकियोंके सुन्दर चित्र अंकित हैं। मन्दिर अपने ढंगका एक ही है।

घन्टाईके दक्षिण-पूर्वमें एक अहातेमें घिरे कुछ जैन मन्दिर हैं जिनमें 'पार्श्वनाथ' 'शान्तिनाथ' और 'आदिनाथ' प्रमुख हैं। पार्श्वनाथ-मन्दिर जैन-देवालयोंमें सबसे बड़ा एवं उत्कृष्ट है। ढाँचा असाधारण है। गर्भगृह, अन्तराल और मंडप सम्मिलित हैं जिनके चारों ओर प्रदिक्षणा-पथ है। पूर्वकी ओर चौड़ाईमें बाहर निकला हुआ द्वारमण्डप [ अर्धमण्डप ] है। दीवारें अनेक प्रकारके उभरे हुए बन्धनोंसे सजायी गयी हैं। बाहरी भागमें अंकित अप्सराओंकी मूर्तियां सचमुच अद्वितीय हैं। बालकको प्यार करती हुयी माँ, पत्र लिखती हुई नायिका, श्रृंगार करती हुई सुन्दरी और कांटा निकालती हुई अभिसारिका आदि कृतियाँ बहुत अच्छी बन पड़ी हैं। हिन्दू देवी-देवताओंके भी चित्र अंकित हैं। शैली हिन्दू-मन्दिरों जैसी ही है। पास ही शान्तिनाथका मन्दिर है; जिसमें भगवान् शान्तिनाथकी पंद्रह फुट ऊंची, कायोत्सर्ग-आसनमें स्थित भव्य प्रतिमा है। मुखपर अपूर्व शांति विराजमान है। आदिनाथ देवालय साधारण है।

घन्टाईके दक्षिणमें एक और मन्दिर है—'दूल्हादेव'। खजुराहोकी एक और उत्कृष्ट कृति। इनमें मन्दिरके पांचो अंग—गर्भगृह, अन्तराल, महामण्डप, मण्डप तथा अर्धमण्डप—विद्यमान है। कला-समालोचकोंने इसकी गणना खजुराहोके उत्कृष्टतम मन्दिरोंमें की



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



है। अलंकरण अति सुन्दर हैं। 'साल-मंजिका' की मुद्रा तो किसीका भी मन मोह सकती है। 'जटकारी' इसी नामके गांवसे लगभग तीन फर्लांग दक्षिणकी ओर है जिसमें प्रतिष्ठापित नौ फुट ऊंची चतुर्भुजी विष्णुकी मूर्ति खजुराहोकी सर्वोत्कृष्ट देव-मूर्तियोंमेंसे एक है। किंवदन्ती है कि इस मन्दिरका निर्माण महोवाके बनाफर वीर आल्हाकी बहिन सुजाने करवाया था।

खजुराहोके मन्दिर उत्तर-मध्यकालकी अनुपम कलाकृतियाँ हैं। 'यह वह समय है जब हमारे कलाकारोंकी कल्पना अपनी प्रौढ़ावस्थाको प्राप्त करके बुढ़ापेमें प्रविष्ट हो चुकी थी। फलतः इस कालके मूर्ति एवं मन्दिर-निर्माता कलाकार न रहकर शिल्पीमात्र रह गये थे अर्थात्, उनका हृदय नहीं, मस्तिष्क काम कर रहा था—वे कोई नयी उपज न कर सकते थे। अतएव, गुप्तकालकी कुछ विशेषताओंका रूढ़ियोंके रूपमें पालन करते हुए अति अलंकृत शैली चालू करना ही उनकी मुख्य नवीनता रह गयी थी। फलतः यह मूर्ति एवं वास्तुकलाके सौंदर्यका नहीं, चमत्कारका युग था। इनकी कृतियोंमें कला नहीं, कलाभास है। राय कृष्णदास—भारतीय मूर्ति-कला ( पृष्ठ १२७–२८ ) परन्तु खजुराहोमें इस बुढ़ापेमें भी यौवनके दर्शन होते, मस्तिष्कमें भी हृदयका योगदान दिखायी पड़ता। चमत्कार-सौंदर्यमें चार चांद लगा देता और कलाभासमें जीवनकी गहराई नज़र आती। पुरातन भी नूतन दिखायी देता; वीरानेमें भी वैभव बोलता। सचमुच, खजुराहोका कलाकार कोई मनमौजी जीव रहा है; जिसने जीवके समस्त रस-तत्त्वोंको मिलाकर पत्थरपर एक ऐसी टीका लिख दी है; जो मनमें सदा अमृत घोलती रहती है। जीवन यहाँ एक स्वर्गीय संगीतकी तरह हमेशा-हमेशा बहता रहा। इसीलिए यहाँकी पाषाण-प्रतिमाओंमें इतनी सजीवता आगयी है



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



कि वे गतिवान हो उठीं हैं; उनको नित प्रति नवीन रहनेका वरदान मिल गया है।

परन्तु खजुराहोकी कलापर सबसे बड़ा और गम्भीर आक्षेप देवालयोंमें उत्कीर्ण यौन-चित्र हैं; जिनके लिए कोई 'अपने कुत्सित कर्मोंको धर्मोंकी ओटमें प्रश्रय देकर शिव और शक्तिके संयोगसे संसारकी उत्पत्तिके सिद्धान्तको वीभत्सरूपमें प्रदर्शन करनेवाले तांत्रिकों' को दोष देता और कोई इन केलिक्रीड़ाओंमें भारतीय जीवन-बोधके दर्शन करता। कुछ भी हो, यह निश्चित है कि जिस यौन-जीवनको आजके नैतिकतावादी कुत्सित और अश्लील कहते हैं, देवालयोंमें उसीकी अभिव्यक्तिके मूलमें कोई गूढ़ तत्त्व अवश्य निहित है क्योंकि देवालयमें ऐसी अपवित्रता या अशुद्धता कल्पनासे परे है। इसी लिए 'खजुराहो आकर आपको अपनी दृष्टिका विस्तार करना होगा, नहीं तो आप बहुत भ्रांत धारणा लेने जाँयेंगे। आपको अपने भोक्तासे मुक्ति लेनी होगी और शुद्ध द्रष्टा बनकर ही आप खजुराहोका मर्म समझ सकते हैं, क्योंकि खजुराहोका मर्म उसके गर्भगृहके समान ही बहुत गहन और उसके शिखरकी भाँति बहुत ही ऊंचा है।'[१] तभी खजुराहोके प्रति न्याय हो सकेगा; तभी प्रस्तर-खण्डोंमें अनुप्राणित आन्तरिक सौन्दर्य-कल्पनाके अभिजातरूप इस पाषाण नगरीमें आपको सत्य शिव और सुन्दरके दर्शन हो सकेंगे।

---

१. विद्याविवास मिश्र—'विन्ध्याचलकी छायामें' (दैनिक जागरण, रीवां विन्ध्य-विकास अंक, पृष्ठ २६)



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

# बस एक बात

श्रीशिवनाथ दुबे 'साहित्यरत्न'

**'वैष्णव जन तो तेने कहिए जे पीर पराई जाणे रे'**

भक्तवर श्रीनरसी मेहताका यह भजन गाँधीजीको अत्यधिक प्रिय था। सम्पूर्ण उत्तर भारतमें यह भजन बड़े ही प्रेम और आदरसे गाया जाता है। सचमुच इस भजनकी इस पंक्तिमें ही वह सब कुछ आ जाता है, जो मनुष्यके जीवनका उच्चतम आदर्श ही नहीं चरित्र-निर्माणका बहुमूल्य संबल है।

'पापाय परपीडनम्' और कविकुलकलाधर गोस्वामी श्रीतुलसीदासजीके शब्दोंमें 'पर पीड़ा सम नहिं अधमाई'। किसी भी प्राणीको पीड़ित करनेकी कोटिमें कोई पाप कोई अधम कर्म नहीं आता है। उर्दूका एक शेर है—

'दर्द दिलके वास्ते पैदा किया इन्सान को।
वर्ना ताअतके लिए कुछ कम न थे करोंवियाँ॥'

'भगवान्‌ने मनुष्यको दूसरेके दिलका दर्द समझनेके लिये भेजा है, पर–पीड़ानुभवके लिए मनुष्यकी योनिमें जन्म दिया है, अन्यथा उसकी उपासनाके लिए फरिश्ते [ देवदूत ] कम नहीं थे।'

परपीड़ानुभव करनेवाले मनुष्यके भीतर दैवी-सम्पत्तियां[1] स्वतः आ जाती हैं। फलतः उसका जीवन उत्तरोत्तर परम कल्याणकी दिशामें अग्रसर होता जाता है। उसके जीवनसे प्रतिपल कुटुम्ब,

१. श्रीमद्भगवद्गीतामें दैवी–सम्पदाके लक्षण इस प्रकार बताये गये हैं—

अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः।
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम्॥

[ शेष पृष्ठ २३३ में ]



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



समाज एवं देशका बड़ा हित-साधन होता है। ऐसे पुरुषके सम्पर्कमें आनेवाले स्त्री-पुरुष और उनके जीवन-चरित्रको सुननेवाले सज्जन सन्मार्गके पथिक बनते हैं। उच्चतम चरित्र-निर्माण उनके द्वारा लोक - जीवनमें स्वतः होता रहता है और देहान्तरमें वे ऊर्ध्वलोककी सुखद यात्रा करते हैं। इसके सर्वथा विप-

अहिंसासत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम्।
दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम्॥
तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता।
भवन्ति संपदं दैवीमभिजातस्य भारत॥

गीता ( १६।१-३ )

श्रीभगवान् बोले—'भयका सर्वदा अभाव, अन्तःकरणकी पूर्ण निर्मलता, तत्त्वज्ञानके लिए ध्यानयोगमें निरन्तर दृढ़ स्थिति और सात्त्विक दान, इन्द्रियोंका दमन, भगवान् देवता और गुरुजनोंकी पूजा तथा अग्निहोत्र आदि उत्तम कर्मोंका आचरण एवं वेद-शास्त्रोंका पठन-पाठन तथा भगवान्के नाम और गुणोंका कीर्तन स्वधर्मपालनके लिए कष्टसहन और शरीर तथा इन्द्रियोंके सहित अन्तःकरणकी सरलता, मन, वाणी, और शरीरसे किसी प्रकार भी किसीको कष्ट न देना, यथार्थ और प्रिय भाषण, अपना अपकार करनेवालेपर भी क्रोधका न होना, कर्मोंमें कर्तापनके अभिमानका त्याग, अन्तःकरणकी उपरति अर्थात् चित्तकी चंचलताका अभाव, किसीकी भी निन्दा न करना, सब भूतप्राणियोंमें हेतुरहित दया, इन्द्रियोंका विषयोंके साथ संयोग होनेपर भी उनमें आसक्तिका न होना, कोमलता, लोक और शास्त्रसे विरुद्ध आचरणमें लज्जा और व्यर्थ चेष्टाओंका अभाव, तेज, क्षमा, धैर्य, बाहरकी शुद्धि एवं किसीमें भी शत्रुभावका न होना और अपनेमें पूज्यताके अभिमानका अभाव—ये सब तो हे अर्जुन ! दैवी-सम्पदाको लेकर उत्पन्न हुए पुरुषके लक्षण हैं।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



रीत 'आढ्योऽभिजनवानस्मि कोऽन्योस्ति सदृशो मया' को चरितार्थ करनेवाले व्यक्ति अपने निजी सुखके लिए, इस क्षणभङ्गुर जीवनमें आनन्दपूर्वक रहनेके लिए, दूसरेके दुःखोंकी अनुभूति कर, दूसरेकी पीड़ा मिटानेके लिए प्रयत्न करनेकी बात तो दूर रही, सर्वथा असहाय, निरुपाय, अनाथ और निरीह प्राणियोंको निर्दयतापूर्वक दलित-पीड़ित करनेमें, यातना देनेमें तनिक भी संकोच नहीं करते। उनके संगसे, उनसे वार्तालाप एवं उनके चरित्र-श्रवणमात्रसे ही कुत्सित परमाणु मनोराज्यको दूषित करने लगते हैं। उन आसुरी सम्पत्ति-वाले कुकर्मी मनुष्योंके लिए भगवान् श्रीकृष्णने अर्जुनसे कहा है—

तानहं द्विषतः क्रूरान्संसारेषु नराधमान्।
क्षिपाम्यजस्रमशुभानाऽसुरीष्वेव योनिषु॥
आसुरीं योनिमापन्ना मूढा जन्मनि जन्मनि।
मामप्राप्यैव कौन्तेय ततो यान्त्यधमां गतिम्॥

( गी० १६। १९-२० )

अर्थात् 'उन द्वेष करनेवाले पापाचारी और क्रूरकर्मी नराधमोंको मैं संसारमें बार-बार आसुरी योनिमें ही डालता हूं। हे अर्जुन! वे मूढ़ मुझको न प्राप्त होकर जन्म-जन्ममें आसुरी योनिको प्राप्त होते हैं, फिर उससे भी अति नीच गतिको प्राप्त होते हैं अर्थात् घोर नरकोंमें पड़ते हैं।'

श्रीनरसीजी परदुःखकातर पुरुषको ही वैष्णव कहते हैं। ऐसे पुरुषका हृदय दयासे पूर्ण होता है। सृष्टिके सम्पूर्ण प्राणियोंका वह हितचिन्तक होता है। उससे किसीका कभी अनिष्ट नहीं हो पाता। अपितु किसीका किसी प्रकार अनिष्ट होनेपर वह चिन्तित, व्यथित और विचलित हो जाता है। उस महापुरुषसे सर्वसमर्थ, सर्वाधार और सर्वव्यापी प्रभुकी अर्चना स्वतः होती रहती है। तृषितकी तृषा और



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



क्षुधार्तके क्षुधा-निवारणार्थ वह अपनी तृषा और क्षुधाकी परवा न कर अपने सम्मुखका जल और भोज्य-पदार्थ बड़ी प्रसन्नतासे दे देता है। किसी रोगीका रोगजनित कष्ट देखकर वह व्याकुल हो जाता है और उसका कष्ट दूर करनेके लिए तन, मन और धन — सब प्रकारसे जुट जाता है। आस्तिक हिन्दूकी शिवि नरेशके जीवनपर श्रद्धा है, जिन्होंने एक निरीह प्राणीकी रक्षाके लिए अपने अङ्ग काट डाले थे। वर्तमानमें राष्ट्रपिता माहात्मा गांधी कुष्ठ-रोगियोंकी परिचर्या स्वयं अपने ही हाथों करते थे। ऐसे नररत्नोंके मनोंमें दीन-दुखियोंकी सेवा करने, यहां तक कि उनके लिए प्रसन्नतापूर्वक प्राणार्पण कर देनेकी भावनाके मूलमें 'पराई पीर जानने' की वृत्ति ही प्रेरणादायिनी रही है। परपीड़ाका अनुभव करनेवाला तो यहांतक कह उठता है—

> मेरे सिवा नजर आये न कोई दोजख[1] में।
> किसी का जुर्म[2] हो मालिक मुझे सजा देना॥
>
> जनाब रियाज

मार्कण्डेयपुराणमें विदेह देशके पुण्यात्मा नरेश विपश्चितकी कथा आती है। उन्हें नगण्य पापके कारण नर्क-दर्शनका दण्ड भुगतना पड़ा। विद्युत्-कान्ति-तुल्य भयानक यमदूतके साथ वे नर्कमें पड़े हुए प्राणियोंको असह्य यातना सहते हुए देख रहे थे।

'महाराज ! हमपर कृपा कीजिए।' पुण्यात्मा विपश्चित आगे बढ़े ही थे कि भयानक पीड़ासे पीड़ित नारकीयोंने चिल्लाकर कहा कि दो घड़ी और रुक जाइए। आपके शरीरको छूकर बहनेवाली वायु हमारे चित्तको आनन्द प्रदान करती है और समस्त शरीरोंमें जो सन्ताप, वेदना और बाधाएं हैं, उनका नाश किये देती है। अतः नरश्रेष्ठ महीपते ! हमपर अवश्य कृपा कीजिए।'

---

१ नर्क २ अपराध।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



'भद्रमुख !' परदुःखकातर धर्मात्मा नरेशने यमदूतसे कहा 'मेरे निकट रहनेसे इन नरकनिवासियोंको सुख मिलता है; तो मैं यहांसे तबतक नहीं जाऊँगा, जबतक ये यहाँ यातना पाते रहेंगे। माना, इनके निकट रहनेसे अग्निजनित सन्तापका कष्ट सहना होगा, नरककी भयानक दुर्गन्धका भोग करना पड़ेगा, भूख-प्यासका महान् दुःख, जो मूर्च्छित कर देनेवाला है, भोगना पड़ेगा, तथापि इन दुखियोंकी रक्षा करनेमें जो सुख है, उसे मैं स्वर्गीय सुखसे भी बढ़कर मानता हूं। यदि अकेले मेरे दुःखी होनेसे बहुतसे आर्त मनुष्योंको सुख प्राप्त होता है, तो मुझे कौन-सा सुख नहीं मिला ? इसलिए दूत ! अब तुम शीघ्र लौट जाओ। मैं यहीं रहूंगा। १

'राजन् !' अचानक वहां धर्मराज और सुरेन्द्रने पहुंचकर कहा— 'तुमने मेरी बड़ी उपासना की है, अतएव इस विमानपर चढ़कर शीघ्र ही स्वर्गकी यात्रा करो।'

'इन असंख्य प्राणियोंको इस दशामें छोड़कर तो मैं कहीं नहीं जा सकता, विपश्चित्ने धर्मराज एवं देवेन्द्रसे कहा 'देवराज इन्द्र और धम ! यदि आप जानते हों कि मेरा पुण्य कितना है तो कृपया बता दीजिये।'

'महाराज !' धर्मने उत्तर दिया 'सागरके जलबिन्दु, आकाशके तारे, वर्षाकी धाराएँ, गङ्गाकी बालुकाके कण तथा जलकी बूंदोंकी भांति आपके पुण्य असंख्य हैं। आज इन नारकीयोंपर कृपा करनेके कारण आपका पुण्य लाखों गुना बढ़ गया। अब आप इन

---

१ न स्वर्गे ब्रह्मलोके वा तद् सुखं प्राप्यते नरैः।
यदार्त्तजन्तुनिर्वाणदानोत्थमिति मे मतिः॥
यदि मत्सन्निजावेतान् यातना न प्रबाधते।
ततो भद्रमुखात्राहं स्थास्ये स्थाणुरिवाचलः॥



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



सबको नरककी यातना सहनेके लिये छोड़कर देवलोकका सुख भोगने चलें।'

'धर्म !' नरेशने विनयपूर्वक पर बड़ी दृढ़तासे कहा, मैं अपना सम्पूर्ण पुण्य-कर्म इन नरकमें पड़े हुए पापियोंको यातनासे मुक्त होनेके लिए दान कर दे रहा हूं। इन्हें अपने सारे धर्म-कर्म सर्मपित कर रहा हूं।'

विपश्चित् नरेशके ऊपर पुष्पोंकी वर्षा होने लगी।

'राजन् !' इन्द्रने नरेशसे कहा 'इस सर्वस्व समर्पणसे तुमने और भी ऊँचा स्थान प्राप्त कर लिया। देखो, ये पापी जीव भी नरकसे मुक्त हो गये।

**एवमूर्ध्वतरं स्थानं त्वयावाप्तं महीपते।**
**एतांश्च नरकात् पश्य विमुक्तान् पापकारिणः।**

(मा० अ० १५।७७)

थोरोका कथन है कि 'सिर्फ भले ही न बनो, कुछ भलाई भी करो।' भलाई; दूसरेका हित परायी पीरका अनुभव किये बिना हो नहीं सकती; और यह परहितका शुभकार्य इस जीवनका फल बताया गया है।

**......परहितसम्पादनं त जन्मफलम्** ॥ (कुट्टनी० श्लोक ७२०)

चरित्रको उज्ज्वल एवं उन्नत बनाकर रखनेवाला सच्चा साधक है। आप याद रखिये निर्बल बलवानसे डरता है, निर्धन धनवानसे डरता रहता है, और मूर्ख विद्वान्से भयभीत रहता है; किन्तु चरित्रवान्से ये तीनों डरते हैं।

चरित्रको ऊंचा उठानेके लिए दैवी-सम्पदाओंकी अपेक्षा है और परपीड़ाका अनुभव करनेवाले, दयालु पुरुषके समीप ये सभी सम्पदाएं धीरे-धीरे आ ही जाती हैं। अतएव सर्वप्रथम दूसरेकी, परायी पीरकी



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



अनुभूति मनमें उदित हो, इसके लिये प्रयत्न करना आवश्यक है। प्राणिमात्रके प्रति मनमें प्रेम, क्षमा, दया एवं उपकारका निरन्तर साधन उस अनुभूतिको पुष्ट करनेमें सहायक होता है। इस परम मंगलमय शुभगुणकी प्राप्ति एवं उसके साधनके लिये मंत्र तो अवश्य ही स्मरण रखना उपयोगी होगा—

**'आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।'**

आप दूसरेके साथ वही व्यवहार करें, जैसा अपने लिये दूसरेसे चाहते हैं। जैसा व्यवहार आप दूसरेसे नहीं चाहते, वैसा व्यवहार आप स्वप्नमें भी कभी किसीके साथ न करें।

## सेवाका अवसर

गुजरांवालाका कालेज देखनेके लिए मालवीयजी गये। उनके साथ स्वामी श्रद्धानन्द, मोतीलाल नेहरू तथा वेंकटेश नारायण तिवारी थे। गर्मीका दिन था। लू चल रही थी। तिवारीजीको छोड़कर, सबके पास छाते थे तिवारीजीको देखकर स्वामीजी बोले—

सवा रुपयेका छाता मिलता है, क्यों नहीं खरीद लेते ? ऐसे अवसरोंपर काम देता। नेहरूजीने कहा—तिवारीजी; आपने क्या आत्महत्याकी ठानी है ? इसी बीच मालवीयजी बढ़े और उनके पीछे छाता लगाये चलने लगे। तिवारीजी संकोचमें पड़ गये और बोले—महाराज क्यों मुझे पापका भागी बनाते हैं ?

मालवीयजी बोले—देखो तुम जिस सेवासमितिके मंत्री हो उसका मैं अध्यक्ष हूँ, क्या तुम सेवाधर्मसे मुझे वंचित करना चाहते हो ? तुम बहुतोंकी सेवा कर रहे हो, तुम पुण्यभागी हो—तुमने मुझे सेवाका अवसर दिया है।

—ज्वालाप्रसाद मिश्र



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

एक अन्वेषक दृष्टि

# श्रीराधा : पुराण और तन्त्रमें

जमीला कुरैशी

प्राध्यापिका, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
वाराणसी

सर्व-प्रथम कृष्ण और गोपियोंकी निकटताका उल्लेख हरिवंश-पुराणमें उपलब्ध होता है। इसके अन्तर्गत विष्णु-पर्वके १२८ अध्यायोंमें कृष्ण-जीवनकी गाथा कही गयी है; जिसके वीसवें अध्यायमें गोपियोंके साथ श्रीकृष्णकी रासलीलाका वर्णन है। इसमें 'रासलीला'के बदले 'हल्लीस-क्रीड़ा' का प्रयोग किया गया है। इस हल्लीस-क्रीड़ाका बड़ा मादक और अनुरञ्जनकारी चित्र पुराणकारने अंकित किया है। परन्तु राधाकी झलक कहीं नहीं मिलती। ब्रह्मपुराणमें भी कृष्ण-चरित्रके साथ रासका आयोजन है किन्तु राधाकी ओर कोई संकेत नहीं मिलता। दोनों पुराणोंमें रासलीलाके विवरणके साथ श्रीराधाके नामका न आना इस तथ्यकी ओर संकेत करता है कि उक्त पुराणोंके रचना-कालमें राधाको प्रमुखता प्राप्त नहीं हुई थी।

भागवतपुराण जिसके आधारपर 'शांडिल्य-भक्तिसूत्र' और 'नारद-भक्ति-सूत्र' निर्मित हुए, माधव-सम्प्रदायकी नींव पड़ी और कृष्णोपासनाका महत्त्व बढ़ा, इसके दसवें स्कंधमें रासलीलाकी संयोजनाकी सम्पूर्णता है; परन्तु 'राधा'का नाम प्राप्त नहीं होता। केवल एक गोपीका उल्लेख है जो सर्वशक्तिमान भगवान् कृष्णको विशेष प्रिय थी—



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



अनयाऽऽराधितो नूनं भगवान् हरिरीश्वरः ।
यन्नो विहाय गोविन्दः प्रीतो यामनयद् रहः ॥
[ श्रीमद्भागवत, स्कं० १० अ० ३० श्लो० २८ ]

उक्त श्लोकमें प्रयुक्त 'आराधितः'के आधारपर राधाकी कल्पना कर ली गयी है। जे० एन० फर्कुहरने राधाका उद्भव और भक्तिका प्रारंभ भागवत-पुराणसे ही माना है। यद्यपि उक्त पुराणमें राधाका नामोल्लेख नहीं है; फिर भी प्रधान गोपीके रूपमें जिसका वर्णन है वही 'राधा' है; अतः यह संभव है कि उसी समयसे राधाका भक्ति-क्षेत्रमें प्रवेश हुआ हो। आपके मतमें भी राधाका नाम सर्वप्रथम कहाँ आया अभी तक अज्ञात है। 'राध्' धातुका अर्थ 'प्रसन्न करना' होनेके कारण राधा नामकी कल्पनाको स्वीकार कर लिया है; किन्तु यह स्वीकृति इतिहास द्वारा पुष्ट नहीं होती। पं. बलदेव उपाध्यायका मत भी इसी तथ्यकी पुष्टि करता है—'श्रीमद्भागवतमें 'राधा' शब्द प्रसंगतः संकेतित है, स्पष्टतः प्रतिपादित नहीं है। वहाँ इस शब्दकी व्युत्पत्ति 'राध्' धातुसे मानी गयी है, जिसका अर्थ होता है आराधना करनेवाली, पूजा करनेवाली: भगवान्की अर्चामें अपना जीवन लगानेवाली। मेरी दृष्टिमें 'राधा'की यही निरुक्ति उचित तथा प्रामाणिक प्रतीत होती है।'[1]

विष्णुपुराणके १३ वें अध्यायमें रासलीलाकी चर्चा है; जो भागवत-पुराणके अनुरूप ही है। इसमें कोई पुण्यवती मदालसा युवतीका चित्रण है जिसे कृष्ण एकांत कुंजमें ले गये हैं और वहाँ उन्होंने निश्चय ही इस सौभाग्य-शालिनीका पुष्पोंसे शृङ्गार किया है और जिसके द्वारा सर्वात्मा विष्णु 'अभ्यर्चित' हुए हैं :—

कापि तेन समायात कृतपुण्या मदालसा।
पदानि तस्याश्चैतानि घनान्यल्पतनूनि च ॥ ३३ ॥

१. भारतीय वाङ्मय में श्रीराधा —पं. बलदेव उपाध्याय पृ० ६७।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

[ श्रीराधा : पुराण और तन्त्रमें ]

पद्मपुराणमें राधाके नामका उल्लेख है। इसके उत्तराखंड-प्रकरणमें राधाष्टमीके महत्त्वपर विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला गया है। इसके पाताल-खंडके अन्तर्गत वृन्दावन-माहात्म्यमें भी राधा-कृष्णके 'युगल-ध्यान'का वर्णन हुआ है। इसमें राधा, माहेश्वरी, रमा, आद्या-शक्ति, मूल-प्रकृति, इच्छा-ज्ञान-क्रिया-शक्तिके रूपमें चित्रित है।

वायुपुराणके अध्याय ४२ में श्लोक ४५ से ५३ तक गोलोकवासी भगवान् कृष्णका विवरण है; जिन्हें लीला-विलास-रसिक, वल्लवीयूथ-मध्यम, शिखि-पिच्छ-किरीटसे शोभित, खंजरीटके समान कानों तक फैले हुए विशाल-मनोहर-नेत्रवाले कुंज-विहारी, पीताम्बर-धारी, वेणुवादक, गायोंके पीछे दौड़नेवाले, राधा-विलासी और गोलोकमें क्रीड़ा करनेवाले कहा गया है। इस स्थलपर राधा तथा गोप-लीलाओंका स्पष्ट उल्लेख है।

ब्रह्मवैवर्त्त-पुराणमें राधा-सम्बन्धी व्यापक विवरण प्रस्तुत किया गया है। इन वर्णनोंको पढ़कर यह धारणा होती है कि इस युगमें राधाको गोपियोंमें श्रेष्ठ. वृन्दावनकी स्वामिनी, मूल-प्रकृतिरूपिणी, भक्तोंको निर्वाण प्रदान करनेवाली, भक्तिकी पावन स्रोतस्विनीके रूपमें सर्वशक्तिमती मानकर पूजा—उपासनाका क्रम प्रचलित हो गया था। ब्रह्मवैवर्त्त-पुराणमें पहुंचकर पुरुष और प्रकृतिका अनूठा और अलौकिक सम्मेलन हुआ है। इसके छठवें अध्यायमें राधा-कृष्णका सम्बन्ध इस प्रकार अंकित किया गया है:—जैसे शरीरके बिना आत्मा और आत्माके बिना शरीरकी स्थिति संभव नहीं है,जैसे दुग्धमें धवलता और अग्निमें दाहकता है, भूमिमें गंध और जलमें शीतलता है, इसी प्रकार राधा और कृष्णकी स्थिति है। जैसे उनमें कोई भेद नहीं है, वैसे ही राधा और कृष्णमें कोई अन्तर नहीं है।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



जैसे मिट्टीके बिना घड़ा नहीं बन सकता, इसी प्रकार कृष्ण राधाके बिना भवका निर्माण नहीं कर सकते।[1]

अध्याय ५२के श्लोक ३८में कृष्णसे राधाकी श्रेष्ठता प्रतिपादित की गयी है :—

'रा' शब्दोच्चारणाद् भक्तो याति मुक्तिं सुदुर्लभाम्।
'धा' शब्दोच्चारणाद् दुर्गे धावत्येव हरेः पदम्॥

'रा'के उच्चारणसे श्रीकृष्ण कामरागपूरित हो जाते हैं तथा 'धा' शब्द कहते ही राधाके पीछे दौड़ने लगते हैं। अतः भक्तजन प्रथम प्रकृति (राधा) का नाम लें तत्पश्चात् पुरुष (कृष्ण) का।

इसके १५वें अध्यायमें बड़ी सज्जाके साथ राधा-कृष्णका धूम-धामसे विवाह सम्पन्न कराया गया है। स्वयं ब्रह्माने कन्यादान दिया है। इस घटनाका उल्लेख अन्य पुराणोंमें नहीं मिलता।

---

१ यथा क्षीरे च धावल्यं दाहिका च हुताशने।
भूमौ गन्धो जले शैत्यं तथा त्वयि मम स्थितिः॥ २१४॥
धावल्यं दुग्धयोरैक्यं दाहिकानलयोर्यथा।
भूगन्धजलशैत्यानां नास्ति भेदस्तथावयोः॥ २१५॥
मया विना त्वं निर्जीवा चादृश्योऽहं त्वया विना।
त्वया विना भवं कर्तुं नालं सुन्दरि निश्चितम्॥ २१६॥
मृदा विना घटं कर्तुं यथा नालं कुलालकः।
विना स्वर्णं स्वर्णकारोऽलङ्कारं कर्तुमक्षमः॥ २१७॥
स्वयमात्मा यथा नित्यस्तथा त्वं प्रकृतिः स्वयम्।
सर्वशक्तिसमायुक्ता सर्वाधारा सनातनी॥ २१८॥
मम प्राणसमा लक्ष्मीर्वाणी च सर्वमङ्गला।
ब्रह्मेशानन्तधर्माश्च त्वं मे प्राणाधिका प्रिया॥ २१९॥
—ब्रह्मवैवर्त्तपुराण श्रीकृष्ण जन्म, अध्याय—६।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



डॉ० शशिभूषण दास गुप्तने ब्रह्मवैवर्त्त-पुराणमें राधाके जिस स्वरूपके दर्शन होते हैं उसे राधातत्त्वका आधार माननेमें आपत्ति की है। उनका मत है—'ब्रह्मवैवर्त्त-पुराणमें राधा-उपाख्यानका प्राचुर्य और राधा माहात्म्यख्यापनके सारे आतिशय्योंके बावजूद ब्रह्मवैवर्त्त-पुराण-वर्णित राधाके तथ्य या तत्त्व किसीका भी अवलम्बन करनेका विशेष उत्साह हमारे अन्दर नहीं दिखायी देता।[1] परन्तु प्रो० विल्सनने राधाके स्वरूप-निर्धारणमें ब्रह्मवैवर्त्त-पुराणका आश्रय लेकर राधाकी शक्तिका कृष्ण-निष्ठ होना सिद्ध किया है। वे राधाको कृष्णकी प्रेयसी मानते हैं और गोलोकमें कृष्णके साथ उसके रहनेका पुराणके आधार-पर ही वर्णन करते हैं। उनका विश्वास है कि हिन्दू भक्ति-सम्प्रदायोंमें राधाकी उपासनाका उदय बहुत अर्वाचीन है। महाभारतमें वर्णित राधा और पुराणोंकी राधाके भेदकी ओर संकेत करते हुए उन्होंने पौराणिक-कालकी राधाको, जिसका नाम कहीं भी भागवत-पुराणमें नहीं मिलता; उसको कालक्रमके बादमें निर्मित ब्रह्मवैवर्त्तकी देन कहा है।

अतः यह कहा जा सकता है कि एक ओर ब्रह्म-वैवर्त्त-पुराणमें प्राप्त होनेवाली राधा-सम्बन्धी प्रचुर सामग्रीका प्रयोग परवर्ती-कालके भक्त कवियोंने पर्याप्त मात्रामें किया है। जयदेव, विद्यापति, चंडीदास, सूरदासने इस सम्पत्तिसे लाभ उठाकर अपनी वाणीको माखन-चौर्य, पनघट-लीला, शृङ्गार-वर्णन, भ्रमर-गीतके उपालम्भ और व्यंग्योक्तियोंसे पूर्ण प्रसंगों द्वारा अलंकृत किया है। दूसरी ओर विविध धर्म, सम्प्रदायोंने राधाके स्वरूपको भागवत-पुराणसे ग्रहण कर परवर्ती कालमें उसे भक्तिका आधार माना है।

तंत्र-साधनामें शक्तिकी मान्यता प्रमुख है। तंत्र-ग्रंथोंमें महाशक्ति

१. श्रीराधाका क्रम-विकास—डॉ० शशिभूषण दास गुप्त पृ० ११३।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



अथवा महाकालीको सृष्टिकी जननी, पालनकर्तृ तथा संहारिणी के रूपमें चित्रित किया गया है। यह शिवकी अर्द्धांगिनी है। यह शक्तिदेवी और महादेवीके नामसे भी विख्यात है। तंत्र तथा पुराणोंमें इसको दुर्गा, अन्नपूर्णा तथा त्रिपुर-सुन्दरी आदि कहा गया है। शिवकी अर्द्धांगिनीके रूपमें देवीको सती,उमा और गौरीके नामसे अभिहित किया गया है। शिवके हृदयमें सृष्टिकी इच्छा जागृत होते ही उनके दो रूप हो जाते हैं—शिव और शक्ति। इनका मिठास और मधु, ज्योत्स्ना और चन्द्र जैसा संबंध है। शक्तिके बिना शिव और शिवके बिना शक्तिका कोई अस्तित्व नहीं। न शिव शक्तिसे अलग रह सकते हैं और न शक्ति शिवसे। दोनों परस्पर अवलंबित हैं। यह ठीक वैसी ही उक्ति है जैसी ब्रह्मवैवर्त्त-पुराण, श्रीकृष्ण-जन्म-खंड, अध्याय १५, श्लोक ५-८-६१ में कृष्ण और राधाके सम्बन्धमें कही गयी है। जिस प्रकार तंत्र साधनामें शक्तिकी श्रेष्ठता प्रमुख है, उसी तरह श्रीकृष्ण-जन्मके अध्याय ५२, श्लोक ३८में कृष्णसे राधाकी श्रेष्ठता घोषित की गयी है।

तंत्र-ग्रंथोंमें राधाकी प्रतिष्ठा पुराणोंसे किसी प्रकार कम नहीं है। वृहद् गौतमीय-तंत्रमें राधाको देवी, कृष्णमयी, राधिका, पर देवता, सर्वलक्ष्मीमयी, सर्वकान्ति, सम्मोहिनी एवं परा माना गया है। जिसका उल्लेख इस प्रकार है।

देवी कृष्णमयी प्रोक्ता राधिका परदेवता।
सर्वलक्ष्मीमयी सर्वकान्तिः सम्मोहिनी परा॥

'नारदपंचरात्र' राधाको वेद-सार-रूपा, पुण्यदायिनी, ब्रह्मस्वरूपा, श्रीकृष्णके प्राणोंकी आधिष्ठात्री, नित्य तथा सत्यरूपा मानता है। 'सम्मोहन-तंत्र' के अनुसार राधाके बिना श्यामकी उपासना करने वाला व्यक्ति पापी है :—



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



गौरतेजो विना यस्तु श्यामतेजः समर्पयेत्।
जपेद्वा ध्यायते वापि स भवेत् पातकी शिवे ॥

सम्मोहन-तंत्रके आधारपर वैष्णव-मतमें इसी शिव और शक्तिको श्रीकृष्ण और राधामें देखा गया है। कृष्ण और राधा रस और रतिके रूप माने गये हैं। इस प्रकार राधाको कृष्णकी शक्तिके रूपमें मानना स्पष्टरूपसे तंत्रवादके प्रभावका परिणाम जान पड़ता है। श्रीनर्मदेश्वर चतुर्वेदीके शब्दोंमें—'वैष्णव-धर्मकी सहज भावनापर स्पष्ट ही तांत्रिकोंका प्रभाव लक्षित होता है। शाक्त मतवाले तात्रिकोंमें जो स्थान शिव तथा शक्तिको मिला है, वही महत्त्व बौद्ध सहजयानियोंमें प्रज्ञा एवं उपायको प्राप्त है। इसी प्रकार वैष्णव सहजिया सम्प्रदायमें राधा तथा कृष्णका ऐसा ही स्थल दिखायी देता है। तात्त्विक-दृष्टिसे इनमें परस्पर कोई अन्तर नहीं है। संसार भरके नर-नारी राधा तथा कृष्णका प्रतिनिधित्व करते हैं। कृष्ण यदि मदन हैं तो राधा मादन। कृष्ण रस हैं तो राधा रति। एक भोक्ता है तो दूसरा भोग्य।'[1]

इस प्रकार सहजिया-सम्प्रदाय लौकिक काम-भूमिपर अलौकिक प्रेमकी कल्पना करता है। अब प्रश्न उठता है कि तंत्रमतमें राधा-भावका आगमन कहाँसे हुआ ? राधाभावका दार्शनिक विवेचन सांख्यदर्शनके आधारपर कृष्णको पुरुष और राधाको प्रकृति कहता है। ब्रह्मवैवर्त्त-पुराणके जन्म-खंडमें भी लिखा है :—

'ममार्द्धंशस्वरूपा त्वं मूल-प्रकृतिरीश्वरी।'

अतः राधा सांख्यकी प्रकृति है। इसी पुरुष और प्रकृतिको तंत्र-मतने शिवशक्तिके रूपमें स्वीकार किया है। डॉ० विजयेन्द्र स्नातकके

१. तंत्र साधना और मादन भाव—श्री नर्मदेश्वर चतुवदी पृ० ८४।

[ हिन्दुस्तानी त्रैमासिक १९६२ ]



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



कथनानुसार--'शैव तथा शाक्त तांत्रिकोंके प्रभावसे राधाको कृष्णके साथ स्थापित किया गया और कालान्तरमें उसका वैष्णव-भावनाके अनुसार विभिन्न सम्प्रदायोंमें विकास हुआ। इसी कारण कतिपय विद्वान् जयदेवके गीतगोविन्दपर भी सहजयानका तथा तंत्रशक्तिका प्रभाव स्वीकार करते हैं। राधाको शक्ति-तत्त्व या आह्लादिनी शक्ति मानना स्पष्ट ही तंत्रवादका प्रभाव सिद्ध करता है।'[१]

इस प्रकार तंत्रमतके परमशिव और पराशक्ति कृष्ण और राधा ही हैं। राधाका विकास इसी शक्तिकी परिकल्पनामें निहित है। इस धारणाकी पुष्टि विभिन्न विद्वानों द्वारा की गयी है। फिर भी राधाके उद्भव एवं विकास संवंधी मान्यताओंका बहुमतसे स्वीकृत कर लेनेवाला स्पष्ट और प्रामाणिक रूप अभी तक सामने नहीं आया। अतः धर्म, दर्शन, ज्योतिष एवं ललित कलाओंमें राधाके जिस स्वरूपको अभिव्यक्ति मिली है वही प्रामाणिक है। इसी आधारपर राधा-माहात्म्यका भव्य प्रासाद निर्मित हुआ है।

---

१. राधावल्लभ सम्प्रदाय: सिद्धान्त और साहित्य—डॉ. विजयेन्द्र स्नातक पृ० १७०५-७६



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

[ बिछुड़ा बूंद ]

मैंने देखा—
यदि बूँद कभी हो गया विवश,
उसका वहना हो गया बन्द
तो कृपा-सिन्धुकी कृपा बरस पड़ती उसपर,
जिससे बन जाता बूँद भाप,
बादल बनकर उड़ता नभमें,
फिर सहज बरस पड़ता भूपर,
चल पड़ता सागर ओर तुरत,
नद-नदी किसीकी शरण लिये,
वह मुख्य धारमें मिल जाता।
जो सिन्धु - मिलनका ध्येय लिये,
अविरल अवाध गतिसे वहती।
चंचल, विह्वल, आकुल व्याकुल,
अत्यन्त तीव्रतासे वहती।
जाकर गिर पड़ती सागरमें
वह आत्म समर्पण कर देती।
बन जाती तत्क्षण महा सिन्धु।
फिर जितने बूँद साथ लायी,
उन सबको सिन्धु बना देती,
यह तीव्र धार।
यदि कभी हुआ सौभाग्य-उदय,
मिल गई बूँदको कृपा धार,
वह चला धार बन सिन्धु ओर,
तटके जल कुण्ड, जलाशयमें—
फँस जानेके भयसे विमुक्त,
जिसका प्रवाह बस लक्ष्य ओर,
जो अभी पूर्ण बन जायेगा,
जीवन कृतकृत्य बना लेगा।
मैं इसी भाग्यके लालचमें
वहता रहता प्रति पल अविरल
मैं बिछुड़ा बूँद पयोनिधिका।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

# कवियोंकी उड़ानें

## जिन्होंने नीरस भी व्याकरण सरस बनाया!

गोविन्द नरहरि वैजापुरकर • एम.ए., न्याय वेदान्त साहित्याचार्य

एक मनुष्य तीन प्रश्न पूछता है और उन सबका उत्तर वह पाणिनिके एक ही सूत्रमें चाहता है। वे प्रश्न ये हैं: १. कौन प्राणिमात्रका क्षय करता है ? २. विष्णुने किसका भार उठाया ? और ३. नीच पुरुष कब गर्विष्ठ होता है ? ये तीनों प्रश्न निम्न-लिखित श्लोकमें संकलित कर उनका उत्तर पूछा गया है—

वैयाकरण उसे पाणिनिका **'यमो गन्धते'** ( १।२।१५ ) सूत्र बतलाता है। इस सूत्रका मूल अर्थ है : 'यम् धातुका 'गन्धन' यानी हिंसा या पर दोषोंका आविष्कार अर्थ जब अभिप्रेत हो, तब उसके आगेका 'सिच्' प्रत्यय 'कित्' हो जाता है।

अब हमारे वैयाकरण कवि तीन प्रश्नोंके तीन उत्तर देनेके लिए प्रस्तुत सूत्रके तीन पदच्छेद करते हैं: 'यमः, अग्रम्, धने'।

१. प्रश्न : सब प्राणियोंका कौन क्षय करता है ?

उत्तर : **'यमः'**।

२. प्रश्न : विष्णुने किसका भार उठाया ?



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



उत्तर : 'अगम्' यानी पहाड़ ( गोवर्धन पर्वत ) का।

३. प्रश्न : नीच कब गर्वीला होता है ?

उत्तर : 'धने' धन प्राप्त होनेपर।

( ४ ) इसी प्रकारका दूसरा भी एक श्लोक है और उसका उत्तर 'चन्द्र-व्याकरण' का सूत्र है। वह श्लोक इस प्रकार है:

**किं स्याद्विशेषनिघ्नम् ? का संख्या वदन परिपूर्णा ?।**
**नीचः केन सगर्वः ? सूत्रं चन्द्रस्य कीदृक्षम् ॥**

कवि पूछता है कि विशेष्यनिघ्न क्या होता है ? अर्थात् विशेष्यके अनुसार किसका रूप बदलता है और परिपूर्ण संख्या कौन-सी है, यह बताओ। तीसरा प्रश्न यह है कि नीच किस बातसे गर्वीला बन जाता है ?

इसका उत्तर 'चन्द्र' व्याकरणके '**विशेषणमेकार्थेन च**' (२।२।१८) इस एक सूत्रसे मिल जाता है। अर्थात् १. विशेष्यनिघ्न 'विशेषण' होता है। २. 'एक' परिपूर्ण संख्या है। और ३. नीच पुरुष धनसे ( अर्थेन ) गर्विष्ठ हो जाता है

( ५ ) संस्कृत व्याकरणमें कोई शब्द साधते समय आदेश, आगम, लोप और प्रत्यय ये प्रक्रियाएँ काममें लायी जाती हैं। इनका स्वरूप बतलानेवाला निम्नलिखित श्लोक है :

**स्थाने शत्रुवदादेशा भाले पुण्ड्रवदागमाः।**
**दन्तानामिव लोपः स्याच्छत्रुवत् प्रत्ययाः परे ॥**

अर्थात् 'आदेश' शत्रुकी तरह होते हैं। यानी जिनके लिए वे बताये जाते हैं, उनका पूर्ण उच्चाटनकर उनकी जगहपर जा बैठते हैं। 'आगम' भालस्थित भस्मकी तरह होते हैं। यानी वे जिन्हें लगते, उनसे लिपट जाते और उन्हींका एक भाग बन जाते हैं। दाँत गिरनेके बाद जैसे अदृश्य हो जाते हैं, वैसे ही व्याकरणमें



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



जिसका लोप बताया होगा, उतना भाग अदृश्य हो जाता है। और जिस तरह शत्रु सदैव मनुष्यको याद रहता है, उसी तरह प्रत्यय प्रकृतिको छोड़कर कभी नहीं रहते।

( ६ ) 'गुण' और 'दोष' शब्दोंपर व्याकरणकी उड़ान भरता हुआ कोई कवि कहता है:

तात वाग्भट मा रोदीः कर्मणां गतिरीदृशी।
दुष् धातोरिवास्माकं दोषसम्पत्तये गुणः॥

एक पुत्री अपने पितासे कहती है : 'पिताजी, आप मेरे बारेमें खेद न करें, अपना मन दुःखी न करें, मेरे कर्मोंकी गति ही वैसी है ! देखिये, 'दुष्' धातुको 'गुण' होनेपर भी उससे 'दोष' शब्द ही बनता है। ज्ञातव्य है कि व्याकरण-प्रक्रियाके अनुसार दुष् धातुके उकारको ओकार गुण होनेपर 'दोष' शब्द बनता है। यह कितना अन्धा श्लेष है। तात्पर्य यह कि गुण भी दोषके ही कारण बनते हैं !

( ७ ) अन्तरङ्ग-बहिरङ्गः व्याकरणशास्त्रमें सिद्धान्त है कि बहिरङ्ग कार्यकी अपेक्षा अन्तरङ्ग कार्य बलवान् होता है। 'असिद्धं बहिरङ्ग-मन्तरङ्गे'—(५०) यह वैयाकरणोंमें एक सुप्रसिद्ध परिभाषा ही है। इसी सिद्धान्तको लक्ष्यकर कवि कहता है:

मन्मथाग्निपरितप्तमनस्का चन्दनेन किमु लिम्पसि गात्रम्।
किं न वेत्सि बहिरङ्गविधाना-दन्तरङ्गविधिरेव बलीयान्॥

विरहिणीको चन्दनलेप द्वारा उसकी विरहज्वाला शान्त करनेके लिए प्रस्तुत किसी अनाड़ी सखीसे दूसरी विज्ञ सखी कहती है 'अरी ! जिस नायिकाका अन्तर् कामाग्निसे जल रहा है; उसके गात्रको ऊपरसे चन्दन लीपकर शीतल करना बेकार है। क्या तू नहीं जानती व्याकरण-शास्त्रका बड़ा ही प्रसिद्ध नियम है कि दृष्टिसे बहिरङ्ग किसी कामका नहीं रहता ? ज्ञातव्य है कि व्याकरणमें अन्तरङ्ग और बहिरङ्ग शब्दोंकी व्याख्याएँ इस प्रकार हैं :



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



१. एकपदाश्रयमन्तरङ्गम् । उभयपदाश्रयं बहिरङ्गम् ।
२. अल्पाश्रयमन्तरङ्गम् । बह्वाश्रयं बहिरङ्गम् ।
३. प्रकृतेराश्रितमन्तरङ्गम् । प्रत्ययाश्रितं बहिरङ्गम् ।

अन्तरङ्ग बहिरङ्गपर एक श्लोक और देखिये :

स्तनपत्रलता तस्या विनोदपुलकोद्‌गमा ।
सत्यं यदन्तरङ्गेण, बहिरङ्गं निरस्यते ॥

अर्थात् नायिकाकी स्तन-पत्रलतापर पुलकोंका उद्‌गम (रोंगटोंका उठना) किस बातका लक्षण है? शुष्क वैयाकरण कितना ही अन्तरङ्ग-बहिरङ्गका विचार करे यहाँ तो कवि यही कहता है कि अन्तरङ्गकी (अन्तरकी) मदनबाधाकी खलखलीके कारण ही बाहर यह पुलकोद्‌गम क्यों न माना जाय ?

(८) व्याकरण-शास्त्रकी अष्टाध्यायीमें पाणिनिने निम्नलिखित चार सूत्र रचे हैं। उन्हें पहेली बनाकर उसका हल ढूँढनेका आह्वान करनेपर कवि श्लोकरूपमें यह उत्तर देता है :

'सर्वस्य द्वे' जगति नियते सम्पदापच्च जन्तोः[1]
'वृद्धो यूना' सह परिचयात् त्यज्यते कामिनीभिः ।
'एको गोत्रे' प्रभवति पुमान् यः कुटुम्बं विभर्ति[2]
'स्त्री पुंवच्च' प्रभवति यदा विद्धि[3] गेहं विनष्टम् ॥

'सर्वस्य द्वे' (८।१।१) यह पाणिनीय-सूत्र है। इसका मूल वाच्यार्थ यह है कि 'सर्व' इस अधिकारमें आनेवाले शब्दोंका किन्हीं विशिष्ट अर्थोंमें (आभीक्ष्ण्य और वीप्सामें) द्विरुच्चारण (दो बार

---

१. इस चरणमें यह भी पाठान्तर मिलता है : 'सर्वस्य द्वे सुमतिकुमति सम्पदापत्तिहेतू ।'

२. पाठान्तर : 'एको गोत्रे' भवति पुरुषः संपदामाश्रयो यः ।'

३. 'तद्धि' पाठान्तर ।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



उच्चारण) होता है। जैसे : 'पचति पचति' (निरन्तर पकाता है) किंवा 'वृक्षं वृक्षं सिञ्चति' बार बार पेड़को सींचता है। कविने इसी को पहेली बनाकर इस श्लोकके प्रथम चरणमें उसका हल भी दिया है। पहेली है : दुनियामें सभी प्राणियोंको कौन-सी दो बातें नियत रहा करती हैं?' हल है : 'सम्पत्ति और विपत्ति अर्थात् सुख और दुःख"

**'वृद्धो यूना'** यह पूरे सूत्रका एक अंश है। पूरा सूत्र इस प्रकार है। **'वृद्धो यूना तल्लक्षणश्चेदेव विशेषः'** (१।२।६५)। अर्थात् 'युव' और **'गोत्र'** संज्ञक शब्द एक साथ मिलनेपर गोत्र वाचक शब्द शेष रहता है, आदि। जैसे : **'गार्ग्यश्च गार्ग्यायणश्च गार्ग्यौ'**। अब कवि इसका वाच्यार्थ लेकर पहेली बूझता है : 'युवतीका बूढ़ेके साथ पाला पड़े तो क्या होता है?' हल है : 'कामिनियाँ उन्हें लात मारकर चली जाती हैं।'

**'एको गोत्रे'**(४।१।९३) यह भी एक सूत्र है। इसका अर्थ है 'गोत्र' अर्थमें सदैव एक ही प्रत्यय होता है। वाच्यार्थसे 'गोत्रमें एक ही पुरुष होता है' तो क्या होता है ? यह पहेली बनाकर कवि उत्तर देता है : 'कुलमें एक भी सुपुत्र पैदा हो जाय तो वह सारे परिवारका भरण-पोषण करता है'। पाठान्तरमें सर्व-संपत्तिका आश्रय होता है।

**'स्त्रीपुंवच्च'** (१।२।६६)। इस सूत्रका अर्थ है कि स्त्रीलिङ्गी शब्द किन्हीं विशिष्ट अर्थोंमें तद्धित प्रत्यय लगनेपर पुल्लिङ्गकी तरह चलता है[१]। जैसे : **'गार्गी च गार्ग्यायणौ च गर्गाः'**। इस सूत्रके वाच्यार्थको लेकर कवि पहेली बूझता है कि 'स्त्री जब पुरुष बनती है तो क्या होता है ?' स्वयं ही आगे उत्तर देता है : 'यदि ऐसी स्थिति आ जाय तो समझ लें कि वह घर चौपट हो गया!' इस तरह व्याकरणके चार सूत्र लेकर पहेली बुझौवल देखते ही बनती है। (क्रमशः)

---

१. पूरे सूत्रका अक्षरार्थ है : 'यूना सहक्तौ वृद्धा स्त्री शिष्यते तदर्थश्च पुंवत्।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

# पर्वोत्सव

## 'श्री श्री महाराजश्रीका प्रवचन'

संन्यास जयन्ती
२-२-६७
के
शुभ अवसर पर

संकलन
द्वारा
डा० उर्वशी जे. सूरती एम. ए.
पी.एच.डी.

मनुष्यके मनमें जो बात भरी रहती है उसीको वह प्रकट करता है। किसीकी प्रशंसा अपनी ही प्रशंसा है, ब्राह्मणके प्रति आदर, विद्वान्के प्रति श्रद्धा, त्यागीके प्रति आदर और श्रद्धा जब तुम व्यक्त करते हो तब जो अच्छाई तुम्हारे मनमें है वही प्रकट होती है।

आरतीमें जब तुम लोग "ब्रह्मानन्दं परम सुखदं······" जैसे अपने गुरुके लिए बोलते हो और वहाँसे आरती घुमाते हो, वैसे हम भी यहाँसे उस समय मनही मन हमारे गुरुके लिए 'ब्रह्मानन्दं······' बोलते हैं और आरती घुमाते हैं। तुम्हारे गुरु हैं तो क्या हमारे गुरु नहीं हैं ?

बचपनमें एक महात्माने मुझे बताया, यदि तुम्हें गुरु और शास्त्रके विरुद्ध कोई अनुभव हो, तो उसे झूठ मानना। वह कोई विघ्न है, तुम्हारे मनकी दानव-भावना है। आज तो तुम्हें वह ठीक मालूम होगा; किन्तु आगे चलकर उससे तुम्हारी हानि होगी।

एक सज्जन भगवान्का भजन करते थे, सत्संग भी करते थे। और माला फेरते थे। उनको सपनेमें सट्टेके नंबर आते थे। मैंने इनसे



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



कहा—'तुम इसे सच्चा मत मानो। कभी न कभी तुमको यह धोखा देगा। मुझसे 'हाँ' कहकर भी वे नंबरवाली बात छोड़ते न थे। एक बार तो मैंने प्रतिज्ञा भी करवायी, किन्तु उन्होंने प्रतिज्ञा तोड़कर भी सपनेके नंबरपर सट्टा किया। कई बार उन्हें इसमें फायदा हुआ; किन्तु एक बार उनकी सारी संपत्ति चली गयी, पाँच-सात मकान निकल गये। जो लोग अपने सपनेपर, मनोराज्यपर ज्यादा विश्वास करते हैं वे धोखेमें पड़ जाते हैं।

एक महात्माने हमें जो तीन बातें बतायी थी, उनमें एक यह थी। उन्होंने मुझे बताया कि "गुरु और शास्त्रके विपरीत जो सपना दीखे, मनोराज्य हो—ध्यानमें जो मालूम पड़े उसका आदर न करो।" सपनेमें ठाकुरजी कहें 'व्याह करो' तो मत मानना कि वह ठाकुरजीका हुकुम है, वह तो तुम्हारे मनमें वासना है; वह ठाकुरजी बनकर आयी है। वैराग्य, त्याग, निर्वासनताके अनुकूल जो आदेश मिलते हैं वे ईश्वरके आदेश होते हैं। ईश्वरके आदेश संसारमें फँसानेवाले नहीं होते। ईश्वर हमें अपनी ओर बुलाता है, उल्टी दिशामें नहीं भेजता।

× × ×

एक सज्जन अपने व्याहकी वर्षगांठपर हमें प्रणाम करने आये थे, ईश्वर करे उनका जीवन सफल हो। एक बालक अपनी वर्षगांठपर मुझे प्रणाम करनेको आया था। मैं श्री जगजीवनरामकी वर्षगांठमें शामिल हो चुका हूँ। हमारे तो संन्यासकी वर्षगांठ मनानेका ख्याल ही नहीं था। यहाँ ये जागीरदार बैठे हैं उन्होंने एक बार कहा कि हम तो आपके नामपर कुछ मनायेंगे।' हमारा जन्मदिन तो आषाढ़में आता है और वे कहने लगे कि 'हम तो माघमें ही मनायेंगे। तव सर्वप्रथम गाँवमें हमारी संन्यासजयंती मनायी गयी और फिर तो उसकी परम्परा बन गयी।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्री महाराजश्री संन्यासके पूर्व

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सन् १९६३ में श्रीमहाराजश्रीके प्रवचन हुए थे
बनारस-हिन्दू-विश्वविद्यालयमें जो अब प्रकाशित हुआ है—
**भागवत विचार-दोहन**
मूल्य : एक रुपया मात्र [ डाक व्यय अतिरिक्त ]

'चिन्तामणि'
सन् ६६–६७
की
सजिल्द प्रतियाँ
उपलब्ध
हैं
मूल्य : छः रुपये

पुस्तकें मांगिये-
व्यवस्थापक-
सत्साहित्य प्रकाशन
ट्रस्ट
'विपुल'
२८/१६ रिजरोड
बम्बई–६
★

श्रीहरिसूरिविरचितम्
**श्रीभक्तिरसायनम्**
[ मूलमात्र ]
इस ग्रन्थमें श्रीमद्भागवत महापुराणके दशमस्कन्धपर अलौकिक और गम्भीर उत्प्रेक्षाएँ हैं। अब तक यह ग्रन्थरत्न दुर्लभ रहा है। भागवतके मर्मज्ञ—रसिकोंकी मांग इसके सम्बन्धमें बराबर बनी थी। अब ट्रस्टने इसे प्रकाशित किया है; जिसे एक भक्तके सहयोगसे ग्राहकोंको अपनी लागतसे भी आधी कीमतमें, प्रचार–प्रसारकी दृष्टिसे देनेका निश्चय किया है। –रियायती मूल्य : चार रुपये

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

[ संन्यास जयन्ती : प्रवचन ]

यदि हमसे कोई पूछे कि संन्यास-जयन्ती कैसे मनायी जाय तो हम बताते हैं कि "कमरा बंदकर हम बैठ जायँ और लोगोंको कह दें कि कोई हमारे पास मत आओ।" लाल कपड़ेका नाम संन्यास नहीं है। लाल रंग तो अग्निका प्रतीक है। ज्ञानाग्निमें प्रपंच भस्म हो जाता है, जैसे आगमें लकड़ी। किसीको स्वर्ग जाना हो तो यज्ञाग्नि चाहिए। चोटी हिन्दूधर्मकी प्रज्वलित शिखा है। मूर्धामें जो अग्नि है उसकी वह शिखा है। शिखाका अर्थ है—'शरीर मंदिर है और शिखा शिखर है।' ईसाई या मुसलमान धर्ममें यह बात नहीं मिलती। हिन्दूधर्ममें प्रत्येक व्यक्तिके लिए वर्ण और आश्रमके अनुरूप कोई न कोई विधान है। एक ब्राह्मणको यज्ञोपवीत धारण करना चाहिए, रोज होम और त्रिकालसंध्या करनी चाहिए। यज्ञोपवीतमें प्रत्येकमें तीन-तीन सूत होते हैं, उनमें तीन गांठें होती हैं; तीन-तीन सूतवाले डोरोंकी गिनती नव होती है। तीन त्रिगुणका प्रतीक है।

पुरोहिताईवाला धर्म संन्यास नहीं है। संप्रदायका प्रचार संन्यास नहीं है। गृहस्थोंके लिए जो वैदिक धर्म है, उसमें पुरोहित चाहिए। संन्यास तो प्रदीप्त अन्तर्दृष्टि है। असलमें ज्ञानका ही नाम संन्यास है। अर्थात् संन्यासमें द्वैत नहीं है

× × ×

आज तक जीवनमें कई बड़े-बड़े महात्माओंके दर्शन मुझे हुए। मैंने संन्यास वेश ज्योतिष्पीठके शंकराचार्यसे लिया। संन्यासके पहले भी कभी मेरे मनमें यह भाव न था कि मैं ब्राह्मण हूँ, मैं गृहस्थ या वर्णाश्रमवाला हूँ और बादमें भी मनमें कभी यह बात नहीं आती कि मैं मानव या दानव, ईश्वर या देवता हूँ। इसलिए जीवनमें एक क्षण भी कभी नहीं आया जब मेरे मनमें बात जमी



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



हो कि मैं संन्यासी हूँ। 'मैं ब्रह्म हूँ' ऐसी कल्पना पूरे वेगके साथ एक बार आयी थी किन्तु उसके बाद 'मैं मनुष्य हूँ' ऐसी भ्रान्ति मुझे कभी नहीं हुई।

× × ×

एक महात्मा थे, उन्होंने हमसे भागवत सुना। फिर बोले कि 'बैठो, मैं दक्षिणा देता हूँ।' मैंने कहा, 'दक्षिणा मैं दूँगा।' दक्षिणा माने क्या? भागवतमें कहा है कि ज्ञानका संदेश दक्षिणा है। शिष्य दक्षिणा नहीं देता, गुरु शिष्यको दक्षिणा देते हैं जिससे चेलेमें ब्रह्मज्ञानकी योग्यता आ जाय।

× × ×

मैंने एक महात्मासे पूछा था: 'हमें और कोई अच्छा महात्मा बताओ जिनका मैं दर्शन करने जाऊँ।' ऐसा कहना तो उनका अपमान है किन्तु मैं तब बालक था। उन्होंने कहा: 'तुम्हें विरक्त महात्मा चाहिए न? आओ, बैठो, नारायण, तुम कल्याणस्वरूप हो। मैं दुःखी हूँ ऐसा अभिमान कभी मत करो।' हम जब बाहरसे हमारा सम्बन्ध जोड़ते हैं तब दुःखी होते हैं। पागलको कभी ऐसा अभिमान नहीं होता।

× × ×

दूसरेकी जानकारी ही दुःख है। हम अंग्रेजी नहीं पहचानते। A, B, अभीतक जाननेकी कोशिश नहीं की, प्रयत्न करता तो जान लेता। गिनतीमें भी वही बात है। 6 और 9 में गलती होती है। मैं छोटा था तब अंग्रेजी बोलनेवालोंकी बस्तीमें जाता था। वहाँके लड़के हमें देखकर अंग्रेजीमें गालियाँ देते थे; किन्तु हम तो कुछ समझते न थे! एक अंग्रेज अफसरने कहा: 'ये लड़के तो बड़े असभ्य हैं, वे तुम्हें गाली देते हैं। यह जाना; तब दुःख हुआ।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



जीवनमें दुःख बाहरसे नहीं आता, भीतरसे निकलता है। दूसरेका दोष जानना दुःख है। अभिमान करना कि मैं बड़ा विद्वान् और दूसरोंमें दोष देखना; यह विद्वान् होकर दुःख निकलता है। एक व्यक्तिने पाँच रुपया खोया और दुःखी हुआ। मैंने कहा : 'चला गया ? कुछ आया तो नहीं ? अब दुःख बुलाना क्यों ? जो गया उसे जाने दो। रुपया गया तो गया, दुःख मनमें क्यों आये ? डाकू पैसा ले जाय और उस डाकूको क्यों घरमें बुलाना ? दुःख मेहमान है।

× × ×

उस महात्माने बताया, 'कपड़ा चाहे सफेद हो या गेरुआ, घरमें रहो या बनमें, अपनेको परिच्छिन्न जीव मत मानो। यह बात समझमें न आये तो गुरुसे मिल कर समझो और यह निश्चय कर लो कि संसारके इन झगड़ोंका हमारे मनसे कोई सम्बन्ध नहीं है।' मेरे मनमें यह बात चमकी कब ? जब मैं श्री उड़ियाबाबाके सम्पर्कमें आया। उनकी एक-एक बात अज्ञानको जड़मूलसे उखाड़ने-वाली थी। मैं अपने अनुभवकी एक बात सुनाता हूँ—'मेरे पास एक आदमी आया। उसने मुझसे पूछा कि 'मैं परमात्माकी प्राप्तिके लिए क्या करूँ ?' मैंने उसे समझाया कि 'परमात्माकी प्राप्तिके लिए कर्म, ध्यान, योगाभ्यास, भक्ति कुछ भी करनेकी जरूरत नहीं है।' वह दूसरे दिन मेरे पास आया और बोला : 'मैंने सब छोड़ दिया, ज्ञान, योग, भक्ति। ज्ञान ऐसे ही हो जाता है तो इस लफड़ेमें क्यों पड़ें ?' मैंने पूछा : 'तुमने क्या क्या छोड़ा ?' उसने कहा : 'सब छोड़ा' फिर मैंने पूछा : 'क्या दुकानदारी छोड़ी ?' वह बोला : 'नहीं, दुकान छोड़ेंगे तो खायेंगे क्या ? 'मैंने पूछा, 'अच्छा, दुकान भले रहे; व्यापार तुम ईमानदारीसे करते हो ?'



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



उसने कहा : 'ईमानदारीसे व्यापार कैसे चलेगा ? बेईमानी तो करनी ही पड़ती है।' फिर मैंने कहा : 'तुम ब्लैक तो नहीं करते होगे !' उसने बताया : 'अरे, इस जमानेमें इसके बिना तो चल ही नहीं सकता !' उसने न दुकान छोड़ी, न बेईमानी छोड़ी, न ब्लैक करना छोड़ा और सारे साधन छोड़ दिये ! मैंने मनमें सोचा कि मैंने इस आदमीका कल्याण किया या अकल्याण ? तब मेरे मनमें निश्चय हुआ कि जीवनमें जितने 'कु' अर्थात् धर्मदृष्टिसे निषेध हैं; उनको छोड़ना चाहिए। शास्त्रमें बुराइयोंका निषेध है, भक्ति योगाभ्यास आदिका निषेध नहीं है। शास्त्रमें जो साधन बताये गये हैं; उनका कभी विरोध नहीं करना चाहिए, साधनमें जो बाधक हैं उनका विरोध करना चाहिए। साधन करते-करते जब बुराइयाँ शिथिल पड़ जायँगी, तब केवल अच्छाइयाँ रह जायँगी। अज्ञानका पर्दा हल्का है। ज्ञान होनेपर अच्छाई-बुराईका भेद मिट जायगा।

निषेध बुराईका किया जाता है, अच्छाईका नहीं। जब हम लोगोंके बीचमें वेदान्तका ज्ञान करवाते हैं तब अधिकारी, अनधिकारी सबके बीचमें बोलते हैं। एक बात निश्चत है कि जो लोग वेदान्तके नामपर सदाचारका, भक्तिका, योगाभ्यासका, सत्शास्त्रका खंडन करते हैं; वे लोगोंको ठीक रास्तेपर नहीं चलाते हैं। वे उनको ऐसे मार्गपर डाल देते हैं जहाँसे उठनेका उपाय ही नहीं है। वे लोग सदाचारकी नींवको ही खण्डित कर रहे हैं।

तत्त्वज्ञानके लिए पहले दुर्वासनाका, ईश्वरपर अविश्वासका, विक्षेपका, बुराईका खण्डन करो। इतनी बुराइयोंके रहते साधनका खण्डन करना वेदान्तका मार्ग नहीं है।

× × ×

इसलिए साधनका हम प्रारम्भसे ही समर्थन करते हैं। एक



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



यज्ञोवीतधारी ब्राह्मणको अपने विवेकको जागृतकर उसे बढ़ाना चाहिए। आजकाल वेदान्तके नामपर उच्छृंखलता और बुराइयोंका जो पोषण हो रहा है; वह ज्ञानका मार्ग नहीं है। ऐसे कभी किसीको आत्मसाक्षात्कार हुआ नहीं है और होगा नहीं।

× × ×

हमारे गुरु, परमगुरु, परात्पर गुरु किस मार्गपर चले हैं, वे किस प्रकार साधकको धीरे-धीरे ऊपर उठाकर मार्गपर चलाते हैं, यह समझकर हमें भी वैसे ही करना चाहिए।

× × ×

मैं अठारह-उन्नीस वर्षकी वयमें ही सन्तोंके चक्करमें पड़ गया था। मुझे सत्संग-कुसंग दोनों मिले। अच्छाई-बुराई ईमानदारी-बेईमानी दोनों हम जानते हैं। ऐसे हीं जीवनकी धारा बहती रहती है, चक्रवत् घूमती रहती है। संन्यास अर्थात् अबाधित जीवन। संन्यास-जयन्ती मनाना अर्थात् हमारे साधन, आचरण पवित्र होने चाहिए। विवेक द्वारा अपनेको अनात्मासे अलगकर ब्रह्म जानना और फिर तब संन्यास लेना संन्यास है। ★

## ढकनीका गर्व

पानीसे भरे घड़ेके ऊपर रखी रिक्त ढकनीने कहा— 'तुम प्रत्येक पात्रको जल-पूरित करते हो; चाहे वह छोटा हो या बड़ा। क्या समीपस्थकी इसी तरह उपेक्षा की जाती है? क्या यह पक्षपात नहीं?

जलसे भरपूर घड़ा बोला : मेरे सामने जो आकर झुकते हैं, अवश्य उन्हें मैं भरता हूँ। तुम गर्वमें चूर सदा मेरे शिरपर सवार हो। जरा भी झुकना तो आता! ★



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

# गीताका आत्मसंयम योग

—श्रीप्रभुदत्त ब्रह्मचारी—

[ गतांकसे आगे ]

. ५ .

सुख दुख अन्य न देहिं स्वयं ही जगत बनावै ।
करै कामना सहित करम बन्धन बँधि जावै ॥
यह संसार समुद्र स्वयं उद्धार करावै ।
स्वयं उच्च पद प्राप्त करैं नीचे न गिरावै ॥
यह अपनो ही आतमा, स्वयं आपनो मित्र है ।
करै काज अन्यायके, फिर आपनो ही शत्रु है ॥

( ६ )

कैसे आत्मा शत्रु मित्र है तोइ बताऊँ ।
हौं जैसो ई करूँ अन्तमें सो बनि जाऊँ ॥
जा आत्मा तैं सबहिँ इन्द्रि मन जीत्यो जावैं ।
ग्वा आत्माको स्वयं आत्मा मित्र कहावै ॥
जाते जीते नहिँ गये, मन अरु इन्द्रिय देह हैं ।
जीवात्माके वे अधम, शत्रु कहे न सन्देह हैं ॥

( ७ )

जिनिको अन्तःकरन शीत अरु उष्ण समाना ।
जो दोउनिमें शान्त मान हो वा अपमाना ॥
सरदी गरमी परै रहें सम भाव अवस्थित ।
मान होहि अपमान न होवैं कबहूँ विचलित ॥



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



वही जितात्मा शान्त अति, ब्रह्मभावमें लीन हैं।
परमात्मामें अवस्थित, ज्ञानी परम प्रवीन हैं॥

(८)

जाको अन्तःकरन तृप्त विज्ञत ज्ञान तैं।
रहै नित्यकूटस्थ परे जो विकृत भाव तैं॥
कीन्ही इन्द्रिय विजय नहीं जो तिनि वश होवै।
नित भोगनी तैं विरत शुभाशुभ हँसै न रोवै॥
मिट्टी कनक पषान सम, भेद भाव जिनिमें नहीं।
वेई योगी युक्त हैं, शास्त्रनि बात कही यही॥

(९)

चाहें होवैं सुहृद सगे सम्बन्धी भाई।
चाहें होवै मित्र आयु जिन संग विताई॥
उदासीन जो होहिँ शत्रुता चाहे माने।
चाहें द्वेषी होहिं हमें ढोंगी करि जाने॥
बन्धु होहिँ मध्यस्थता, धरमात्मा पापी रहें।
सबमें राखे भाव सम, श्रेष्ठ पुरुष तिनिकूं कहें॥

(१०)

योगी रहे इकान्त करै नहिँ संग सबनिको।
दश इन्द्रिय मन एक करै संयम नित इनको॥
वशमें राखै देह और की रखै न आशा।
संग्रह कबहुँ न करै रखै प्रभु पै विश्वासा॥
संसारिनिकी आश तजि, मगन रहे निज आत्ममें।
सदा लगावै नेम तै, आत्माकूँ परमात्ममें॥

[ पुनः ]



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

## ये आवाजें कहांसे आती हैं ?

**जसबीर कौर**

न्यूयार्कके लोग रेडियो-प्रोग्राम सुन रहे थे कि सहसा रेडियोसे वाद्य-यन्त्र बजने बन्द हो गये और दो महिलाएँ आपसमें ऊँची-ऊँची आवाजमें बातें करने लगीं। वे एक-दूसरेसे कह रही थीं—'मार्टल कहाँ है ?'

इससे पहले कि दूसरी महिला उत्तर देती, वाद्ययन्त्र पुनः बजने लगे। अब वाद्ययन्त्रों और महिलाओंकी आवाज एक साथ आ रही थी। शनैः-शनैः महिलाओंकी बातचीत धीमी होती गयी और फिर विलीन हो गयी।

सेंट लुईसके एक रात्रि-क्लबमें एक संगीतकार वाद्ययन्त्र उठाकर कोई मनमोहक राग बजाने लगा तो सहसा उसके वाद्ययन्त्रसे ताजी खबरें प्रसारित होने लगीं और उसके वाद्ययन्त्रपर थिरकनेके लिए तैयार नर्तकियाँ अपने-अपने स्थान-पर स्तब्ध रह गयीं।

कैलीफोर्नियामें एक स्त्री अपने विद्युत्-चूल्हेपर खाना पकानेकी तैयारी कर रही थी कि सहसा चूल्हेने एक मधुर गीत छेड़ दिया। यह देखकर वह दौड़ी-दौड़ी पड़ोसिनोंके पास गयी। घटना सुनायी और



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



इससे पहले कि पड़ोसिनें चूल्हे तक पहुँचती, गीत खत्म हो चुका था और उसके स्थानपर अब एक प्रसिद्ध साबुनके बारेमें बताया जा रहा था।

इस प्रकारकी घटनाएँ आयेदिन हो रही हैं। कभी किसी अंगीठीसे गाने - बजानेकी आवाजें आ रही हैं तो कभी किसी नहानेके टबसे वाद्य - यन्त्रोंकी आवाज सुनायी दे रही है। यही नहीं, मकानोंके सामने लगे हुए लोहेके जंगले राग अलापते हैं। पानीकी टंकियोंसे संवाद प्रसारित हो रहे हैं और घास-फूस आपसमें बातचीत करते हुए सुनायी दिये हैं।

**चूल्हेने गीत गाया...वाद्य-यंत्रसे समाचार प्रसारण... पलंग लोरी सुनाने लगा... बाथटब गीत गाता है... दो मजदूर युवक जब जोरसे सांस लेते हैं तो उनके शरीरसे संगीतके प्रोग्राम प्रसारित होते हैं...–जैसे ही ढक्कन उठाया जाता है एक कूआं गीत गाने लगता है...। यह सब प्रेत-लोकके रहस्य नहीं–इसी लोकके आश्चर्य हैं! जिन्होंने विज्ञानको उलझनमें डाल दिया है।**

शिकागोके एक वकीलने यह बतलाया कि, जब वह सोनेके लिए अपने बिस्तरके निकट जाता है तो उससे अजीब तरहके संगीतकी आवाजें आती हैं। उससे भी आश्चर्य-जनक घटना एक अन्य व्यक्तिके साथ बीती, जिसे चलते-चलते अजीब आवाजें सुनायी दीं।

वह दौड़ा-दौड़ा एक मनोविज्ञान विशेषज्ञके पास गया जिसने उसका बड़े ध्यानसे निरीक्षण करनेके बाद जो रहस्योद्घाटन किया वह इस प्रकार है—कि वह व्यक्ति एक ऐसे कारखानेमें काम करता है जहाँ विभिन्न चीजोंको निकलके द्वारा पालिश किया जाता है और मशीनसे जो धूल उड़ती है, उसमें विभिन्न धातुओंके कण होते हैं, जो सांस लेनेसे मनुष्यके शरीरमें प्रवेश कर जाते हैं। यह कण उस व्यक्तिके मुँह और



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



दाँतोंमें पहुँचकर आपसमें सम्बन्ध स्थापित कर लेते हैं। इस सम्बन्ध स्थापनासे उस व्यक्तिके मुँहमें एक ऐसी विद्युत्-तरंग पैदा हो जाती है जो किसी निकटवर्ती ट्रांसमीटरसे प्रसारित होनेवाले प्रोग्रामको अपने अन्दर जब्ब कर लेती है और इस प्रकार वह व्यक्ति संगीतकी धीमी और विशिष्ट आवाजें सुनता है।

मानवीय शरीरके बारेमें अनुसंधान यह है कि एक सामान्य मनुष्य विभिन्न विद्युत और रासायनिक पदार्थोंका मिश्रण है। इसी अनुसंधानके आधारपर हावर्ड युनिवर्सिटीके मनोवैज्ञानिक प्रयोग-शालाके प्रोफेसर स्मिथने अपने शरीरको रेडियोमें बदलनेका निश्चय कर लिया। विभिन्न प्रयोग करनेके बाद डाक्टर स्मिथने अपनी रिपोर्टमें लिखा कि उसने अपने कानमें थोड़ा-सा नमकीन रासायनिक पानी डालकर उसमें एक तार डुबा दिया। तारका दूसरा सिरा उसने अपने दूसरे कानमें डाल दिया। इस प्रकार उसे निकटवर्ती रेडियो-स्टेशनके प्रोग्राम साफ तौरपर सुनायी देने लगे। इस रहस्योद्‌घाटनके बाद भी विभिन्न वस्तुओं और शरीरोंसे आवाजें सुनायी देनेकी पहेली हल न हुई। मनोविज्ञान विशेषज्ञों और वैज्ञानिकोंको उस समय उलझनका सामना करना पड़ा, जब उन्हें चैकोस्लावाकियाकी राजधानी प्रागसे दो नवयुवकोंके बारेमें यह रिपोर्ट मिली कि जैसे ही वे जोर-जोरसे सांस लेते हैं, उनके शरीरोंसे संगीतके प्रोग्राम प्रसारित होने लगते हैं। ये दोनों नवयुवक किसी फैक्टरीमें मजदूर थे। डाक्टरोंने उनके बारेमें पर्याप्त अन्वेषण किया, किन्तु किसी निष्कर्ष-पर न पहुंच सके। पत्र-प्रतिनिधि जो हर बातकी तहतक पहुंच जाते हैं, केवल इतना कह सके कि इन नवयुवकोंका सारा कमाल उनके जोर-जोरसे सांस लेनेमें छिपा है। अपने विचित्र कौतुक दिखाते समय यह मजदूर एक लाउडस्पीकरके अन्तिम सिरोंको छूते थे जिससे प्रोग्रामोंकी आवाज इतनी ऊंची



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



सुनायी देती थी जैसे किसीने पूरा रेडियो खोल दिया हो।

वैज्ञानिकोंका विचार है कि इन सारे चमत्कारोंका असल कारण रेडियोके शार्ट-वेव ट्रांसमीटर हैं। इस प्रकारकी घटनाएँ दिन-व-दिन आश्चर्यजनक रूपमें वढ़ रही हैं। इनमें हीटर, विजलीके चूल्हे, इस्त-रियां और विजलीसे चलनेवाले वाद्ययंत्र शामिल हैं। बिजलीके एक चूल्हेसे अजीव आवाजें सुनायी देने लगीं। वह चूल्हा एक दूकान-दारके पास मरम्मतके लिए आया था। दूकानदारने वहुत प्रयत्न किया कि किसी प्रकार चूल्हेसे आवाजें आना बंद हो जायं, किन्तु उसका हर प्रयत्न विफल गया। तंग आकर उसने चूल्हेका एक-एक भाग अलग कर दिया। उसके वावजूद चूल्हेसे आवाजें लगातार आती रहीं। कुछ देर वाद चूल्हेसे आवाजें आना बंद हो गयीं तो उसकी लोहेकी चारपाईके तारोंसे वही आवाजें आने लगीं।

रेडियोके आविष्कारके कुछ समय वादसे ऐसी शिकायतें आमतौर पर सुनीं गयी थीं कि कई टेली-फोनोंपर सहसा रेडियोके प्रोग्राम सुनायी देने लगते हैं या कई रेडियो सेटोंपर कभी टेलीफोनोंके संवाद सुनायी दे जाते हैं। यह एक ऐसी खरावी थी; जिसपर वैज्ञानिकोंने मामूली-सी कोशिशके वाद कावू पा लिया था। न्यूयार्कमें जिस दिन रेडियोके श्रोता संगीतके स्थान-पर दो महिलाओंके संवाद सुन रहे थे, उस दिन भी कुछ ऐसी ही खरावी पैदा हो गयी थी।

केनेडामें कुछ ऐसी रहस्यमय घटनाएँ हुई हैं जिनका सुराग अभी तक नहीं मिल पाया है। ओंटारियोमें एक महिलाने पुलिसको रिपोर्ट दी कि जैसे ही वह अपने रसोईघरका दरवाजा खोलती है, उसके विद्युत्-चूल्हेसे संगीत सुनायी देने लगता है और यह संगीत उस समय तक सुनायी देता रहता है जवतक रसोईघरका दरवाजा जरा-सा भी खुला रहता है। इस घटनाके जाँचके लिए विज्ञानके इसी



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



सिद्धान्तको आधार बनाया गया कि यह आवाजें किसी निकटवर्ती शार्ट-वेव ट्रांसमीटरसे आती हैं जिन्हें; विद्युत् वस्तुओंकी लहरें पुनः प्रसारित कर देती हैं। उसके दूर-निकट कोई ट्रांसमीटर नहीं लगा हुआ था और रेडियो इंजीनियरने सावधानीके रूपमें अड़ोस-पड़ोसके सभी रेडियो-सेट बन्द करवा दिये। चूल्हेके एक-एक तारको अलगकर दिया गया, किन्तु उसकी योजना, उपयोगी सिद्ध न हुई। चूल्हा लगातार अपना 'राग अलाप' रहा था।

इस घटनाके दो सप्ताह बाद अल्बर्टाके एक किसानने यह घटना सुनायी कि एक दिन प्रातः जब उसने अपने खेतोंके कुएंको ढकनेवाला तख्ता सरकाया, तो कुएंको तहसे मधुर संगीतने उसका स्वागत किया। किसानने उसे एक वहम समझते हुए कुएंको दुबारा तख्तसे ढक दिया और कुछ देर बाद उसने तख्तेको फिर सरकाया तो वही संगीत उसे पुनः सुनायी दिया। उसने फौरन इस घटनाकी सूचना पुलिसको दी। पुलिस इस निष्कर्ष पर पहुँची कि किसानने अपना रेडियो कहीं निकट ही धरतीमें दबाकर रखा है जिसकी आवाज कुएं तक पहुंच रही है, किन्तु पुलिस को यह भी पता चला कि उस किसानके पास कभी कोई रेडियो-सेट नहीं था। लेकिन उसके पड़ोसी के घरमें रेडियो था; जिसे पुलिसने अपने कब्जेमें ले लिया। उसके बाद पुलिसने कुएंका ढकना सरकाया तो भी संगीत निरन्तर सुनायी दे रहा था। पुलिसके भरसक प्रयत्नके बाद भी कुएंके संगीतकी समस्या हल नहीं हुई।

'गानेवाले' कुएंके बाद गानेवाले टबकी घटना सामने आयी। नाइरियालकी एक महिलाने रहस्योद्‌घाटन किया कि उसके नहानेके टबसे विचित्र संगीत सुनायी देता है। टबसे उस समय गानेकी आवाजें आती थीं; जब उसका पानी एक खास सतहपर आ जाता था।

इस रहस्यमय संसारके नित नये रहस्योंको किसी दिन मानव जान पायेगा? ★

[ 'नवभारत टाइम्स' से साभार ]



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

# सन्तुलित भोजन

डा० के० एन० राव

[ भारत सरकारकी स्वास्थ्य-सेवाओंके महानिदेशक ]

★

लोग अक्सर तुनककर कहते हैं—"जहांपर लोग भरपेट भोजन भी मुश्किलसे जुटा पाते हों, वहाँ संतुलित भोजनकी बात करनेमें भला क्या तुक है ?' किंतु मैं समझता हूँ, जहाँ भोजनपर एक-एक पाई खर्चनेके पहले दस बार सोचना पड़ता हो, वहाँ संतुलित भोजनके बारेमें बात करना विशेष रूपसे आवश्यक है।

यह ठीक ही कहा गया है कि पशु-पक्षियोंकी तरह मनुष्य अपना उचित भोजन स्वयं नहीं चुन सकता। उसे यह बताना जरूरी होता है कि वह क्या खाये और क्या न खाये। इस कथनकी सत्यताका सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि अच्छे संपन्न लोग भी असंतुलित भोजन करते हुए पाये जाते हैं।

यह आम शिकायत है कि संतुलित भोजन बड़ा महंगा होता है—अन्नकी दुर्लभता और महंगाईके इन दिनोंमें तो विशेष रूपसे महगा। किन्तु यह बात सच नहीं है; क्योंकि दयामयी धरती माताने ऐसे विविध खाद्य हमें दिये हैं जो सस्ते होते हुए भी पुष्टिकर हैं।

एक उदाहरण लीजिये। एक प्रसिद्ध अंग्रेजी कहावत आप सबने सुनी है, जिसमें कहा गया है कि प्रतिदिन एक सेव खाया जाये, तो रोग पास नहीं फटकते, मानो सेव गजबका पुष्टिकारक फल हो !

अब जरा विश्लेषण करें, तो प्रकट होगा कि फलोंमें रहनेवाला



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



मुख्य पोषक तत्त्व विटामिन सी है, जो शरीरकी रक्षाके लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है। विटामिन 'सी' की मात्राके हिसाबसे फलोंकी जांच करनेसे सिद्ध हुआ है कि हमारे देशके बहुत ही सस्ते और लोक-प्रिय मौसमी फल अमरूदमें सेवकी तुलनामें कम-से-कम तीन-चार गुना ज्यादा विटामिन सी होता है।

इसी तरह संतरेको भी विटामिन 'सी' की खान कहा जाता है। लेकिन हममेंसे कितने जानते हैं कि नन्हें-से आंवलेमें संतरेकी अपेक्षा दो-तीन गुना अधिक विटामिन सी रहता है।

संतुलित भोजन वह है, जिसमें शरीरके लिए आवश्यक समस्त पोषक तत्त्व हों, जो रुचिकर और तृप्तिकर होनेके अलावा खानेवालेके बूतेके बाहर न हो।

भोजनके तीन काम हैं और सतुलित भोजनको वे तीनों काम ठीक ढंगसे करने चाहिए। ये काम हैं :

१. शरीरको विविध कार्योंके लिए आवश्यक ऊर्जा देना।

२. शरीरके अवयवोंके निर्माण और मरम्मतके लिए आवश्यक कच्चा माल मुहैया करना।

३. शरीरको रोगसे बचानेवाले रक्षक तत्त्व पहुंचाना।

इन तीनों कामोंकी दृष्टिसे खाद्य पदार्थोंको निम्नलिखित तीन वर्गोंमें बांटा जा सकता है :

१. **ऊर्जादायक भोजन :** इनमें गेहूं, चावल, ज्वार, बाजरा, मकई, मडवा आदि अनाज, घी-तेल, गुड़-शक्कर और आलू, शकरकंद, जिमीकंद व टैपियोका जैसे कंद आते हैं।

२. **शरीर-निर्माणकारी भोजन :** शरीर-निर्माणके लिए कच्चा माल प्रस्तुत करनेवाले मुख्य तत्त्व हैं प्रोटीन और खनिज। इस तत्त्वोंसे भरपूर दालें, मेवे, दूध व मांस-अंडे, मछली इस वर्गमें आते हैं।



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



३. **रक्षाकारी भोजन :** शरीरको रोगोंसे बचानेकी जिम्मेदारी विटामिनों, खनिजों, और प्रोटीनोंपर है और ये तत्त्व मांस-मछली-अंडे, दूध-पनीर, साग ( यानी पत्तोवाली सब्जियाँ ) में विशेषतः पाये जाते हैं।

भोजनमें हमें इस बातका खयाल रखना चाहिये कि भोजन हमारे शरीरकी यह त्रिविध सेवा ठीक-ठीक कर सके। इसके लिए हमें सात प्रकारके खाद्य पदार्थोंका भोजनमें समावेश करना चाहिए :

१. **अनाज :** गेहूं, चावल, ज्वार, बाजरा, मकई, मडवा आदि।

२. **दालें :** अरहर, मूंग, मसूर, उड़द, चना, लोविया आदि।

३. **तरकारी :** ताजी मौसमी साग व सब्जी, विशेष रूपसे साग।

४. **घी-तेल :** तलने-पकानेमें प्रयुक्त या ऊपर-से परोसा हुआ।

५. **गुड़-शक्कर :** चाहे व्यंजनमें मिलाया गया हो, या ऊपरसे परोसा जाये।

६. **मौसमी फल :** आम, अमरूद, केले, टमाटर, आंवला आदि।

७. **पशुजन्य खाद्य :** दूध, दही-लस्सी, पनीर, और जो शुद्ध शाकाहारी न हों उनके लिए मांस, मछली, अंडे आदि।

यदि नीचे बताये हुए सीधे-सादे गुर याद रखें, तो संतुलित भोजनकी व्यवस्था आप आसानीसे कर सकते हैं :

**क. अनाज सभी अच्छे हैं :** कोई एक ही अन्न रोज दोनों वक्त खाते रहनेके बजाय विभिन्न अनाज खाने चाहिए—कभी गेहूं, कभी चावल, कभी ज्वार-बाजरा, कभी मकई। हर अनाजकी अपनी विशेषताएं हैं। सबका लाभ उठाइए।

**ख. दालें पर्याप्त खायें :** चाहे सामान्य दालके रूपमें, अथवा मिठाई या नमकीन चीजोंके अंगके रूपमें दालें पर्याप्त मात्रामें पहुंचती रहनी चाहिए। इडली, घुंघनी आदि भी इस दृष्टिसे उपयोगी हैं। दालोंमें भरपूर प्रोटीन होती है। शाकाहारियों और निर्धनोंके लिए तो दालें मांसवत् हैं। दिनमें ७० से १०० ग्राम तक दाल खायें तो शरीरको पर्याप्त प्रोटीन मिल जायेगी।

**ग. तरकारी जरूरी है :** मौसमी साग-पात हमारे यहां काफी सस्ता होता है। सागमें विटामिन ए, रिबोफ्लेविन, एस्कार्बिक अम्ल,



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



कैल्शियम, लोहा आदि प्रचुर मात्रामें रहते हैं। दिनमें १०० ग्राम जितना साग खाया जाये, तो ये सब तत्त्व शरीरको मिल जायेंगे।

नवीन प्रयोगोंसे सिद्ध हुआ है कि अनाज, दाल और साग तीनों भोजनमें हों, तो उनके पोषक तत्त्व एक-दूसरेके पूरक होते हैं और यह मिलाप अत्यन्त पुष्टिकारी सिद्ध होता है।

**घ. फल जो सुलभ हों :** जैसा कि पहले दिखाया जा चुका है, कई सस्ते मौसमी फलोंमें भरपूर विटामिन सी होता है। प्रायः सभी मौसमोंमें कोई-न-कोई सस्ता व स्वादिष्ट फल मिल ही जाता है। सो जरूरी नहीं कि महंगे फल खाये जायें।

**ङ. चाहे घी खायें, चाहे तेल :** तेल ( मूंगफली, सरसों, तिल आदिके ) और घीमें पौष्टिकताकी दृष्टिसे कोई अंतर नहीं है। तेल और घी दोनों निरी वसा हैं और दोनोंसे मिलनेवाली कैलोरीकी मात्रा एक-सी है।

आजकल एक और प्रकारकी वसाका बहुत चलन हो गया है। यह है 'वनस्पति'। यह हाइड्रोजनित तेल है। यह भी शुद्ध वसा है। हां, इसमें कृत्रिम विटामिन ए और डी मिलाये गये होते हैं; ताकि यह घी-मक्खनके समान हो जाये।

लेकिन याद रखिये, शुद्ध तेल खाना अधिक अच्छा है और अधिक सुरक्षित भी है। पौष्टिकताकी दृष्टिसे तेल कई अन्य वसाओंसे श्रेष्ठ है।

**च. पशुजन्य प्रोटीनकी महिमा :** भोजनमें, विशेषतः बच्चोंके भोजनमें प्रतिदिन दूध, दही-लस्सीका, और अगर परिवार शुद्ध शाकाहारी न हो, तो मांस, अण्डा, मछली जैसे पदार्थोंका समावेश होना चाहिए।

इस तरह सर्वसुलभ, सस्ते खाद्य पदार्थोंकी सहायतासे भी संतुलित भोजनकी व्यवस्था की जा सकती है। कोई आवश्यक नहीं कि संतुलित भोजनके नामपर महंगी चीजें ही खायी जायें।

[ 'आकाशवाणी' से साभार ]

**नोट :** जो वस्तु धर्मके विपरीत हो, उसका उपयोग नहीं करना चाहिए।

—सम्पादक



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

# CHINTAMANI

Sat Sahitya Prakashan Trust

VIPUL

28/16 RIDGE ROAD, BOMBAY-6

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

With best compliments from

*Chintamani*

ON THE OCCASION OF SAMNYAS JAYANTI

Sat Sahitya Prakashan Trust

BOMBAY 6

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

# AN INTRODUCTION TO A REALISED SOUL

By--B. C. MISHRA, Senior Advocate
Supreme Court of India

Sri Rama Jayam

That self effulgent Supreme Lord is all bliss and delight and the seeker finding Him, himself becomes blissful and happy. It is realised that Bliss is Brahman, as all things manifest themselves from bliss, live in bliss and move towards it, are satiated with bliss and enter into it.

—Taitriya Upanishad

A tall, well-built impressive personality—you see it beaming with smiles ! Do you want to know who he is ? A similar question was put to Shri Hanumanji and his classic answer made to Lord. Rama was as follows :

"It is my firm conviction that from the stand point of body, I am your humble servant; from the point of view of mind of a Jiva, I am your part but in reality you and I are same."

But great Hanuman is a pre-historic mythological figure. We want to see something right here and now—Brahman—Brahmana incarnate, living, moving and having its being.



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



The Gita describes in the second canto how a man of wisdom speaks, sits and moves :—

He is said to be a Muni of steady wisdom who is free from affection, fear and wrath and who is unshaken by adversity and does not hanker after happiness.

Gita II—56

He is a man of fixed wisdom who is unattached every where and who is not pleased at receiving good nor vexed at evil.

Gita II—57

That man attains peace who lives without a sense of I or mine and without longing and abandons all desires.

Gita II—71

However, precept is a more effective method of teaching than preaching and I desire to introduce to you such a holy figure, who has to my mind, transcended Kama, Lobha, Moha, Krodha and Ahankara, i. e. lust, greed, attachment, anger and ego.

He was married at an early age and had one son and one daughter and renounced his devoted wife at the age of 19 and since then he has not had any worldly cravings. He was born in a comparatively poor Brahmin family and has since passed through rolls of wealth and is President of valuable Trusts, but, on principle, he never asks for money and God's good money comes of its own accord and goes away to serve its end, leaving no credit balance with him.

And Moha ! even a dear and favourite relative, friend or disciple who receives boundless affection and countless boun-



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



ties is never mourned or remembered, when he steps off the ladder of life, or should he faint and fall while walking in company, he is ordered to be removed well treated and looked after, but he never succeeds in disturbing the peace of a detached mind or obstructing any programme or activity.

What about Krodha, which is the last citadel of conquest to the sadhaks ! Well, nobody has ever seen him using abusive language or showing any signs of anger, even if some one fells a tea pot to pieces, or a young man who comes to participate in satsang walks away with the ornaments of an idol or finds and seduces a lady love. Such persons are pardoned with a smile. His anger is experienced only by those blessed disciples who dilly dally in the spiritual path and keep attainment of the Brahmatmaikya Jnan away which he strives them hard to attain and achieve instantly.

Still he is Nirahankar or egoless and appears to be lower than the lowest and higher than the highest. In his behaviour towards the common man, he acts with exemplary affection and sweetness. With his body he serves the humanity, with his mind and intellect he probes deep in the sources of knowledge. and with his spirit, he radiateg eternal peace and happiness and his personality is a charm and source of inspiration.

His present name is Swami Akhandanand Saraswati, He has adorned the holy order of Dandi Sanyasis in February 1942 and was initiated by His Holiness Shri Brahmanand Saraswati, Shankaracharya of Jyotish Peeth, Badrikashram, one of the four famous Peetha established by Bhagwadpad



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



Shri Adi Shankaracharya. His present mission in life is to live, move and have his being as a Jivan Mukta Chetan untrammelled by limitations of a finite ego. He gives practical training in the various paths of realisation of God and everlasting removal of sorrow and grief. He delivers discourses on the Vedas, Upanishads and Shrimad Bhagwat Maha purana besides Shrimad Bhagwat Gita and other Hindu scriptures. He has a charming voice and a fascinating style of his own. He has an extremely original and unbiased outlook and he very much appreciates the modern scientfic methods of investigation and research. So he has easily been found to be one of the most suitable persons to satisfy the doubts and solve the problems of the unconventional inquisitive minds of the modern youth, as well as of the learned Pandits long bred in traditional approach to scriptures by faith and arguments according to the Shastrik styles. It is rapturous to hear him deliver discourses, or solve knotty questions of philosophy or resolve practical problems of a life struggling to find its progress, peace and communion with the Creator. He has helped numerous persons according to their adhikar and capability to step on the path of righteous conduct or walk fearlessly and briskly on the path of love and devotion of God, or else to obtain a glimpse of the real self within and attain Brahmatmaikya Jnan and Nirvana in this life in a very short time.

## EARLY LIFE

The name of our Swamiji in the previout Ashram was Pt. Shantanu Behari Dwivedi. He was born on 25th of July



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



1911, corresponding to Shravan Krishna 15, Vikram Samvat 1968 in a devout Brahmin family in a village named Mahrai situated in Varanasi District of the State of Uttar Pradesh in Northern India. His grandfather and father were well versed in scriptures and followed the vocation of priests and spiritual preceptors in the town and neighbourhood. Before his birth he had a grown up brother who died young and there was a fear of the family line becoming extinct. Therefore, his grandfather and mother performed some religious penances and as a result of the grace of Lord, our Shantanu Behari was born exactly 9 months after the completion of the penance. Shantanu Behari, however, lost his father in early age of seven and he was brought up by his grand father who also died when he was about 17 years old, leaving the whole responsibility on the mother, a devout Hindu lady who lived a long sacred life and later adorned yellow robes and became a disciple of our Swamiji himself.

Shri Swamiji as a young boy did not receive much school education but he acquired a great proficiency in Sanskrit literature, astrology, the Puranas, Shrimad Bhagwat Maha Purana at an early age and later followed it by a deep study of the Vedas and Vedangas from erudite scholars of the day like Shri Pandit Ram Bhavan Upadhyaya Grammarian, Shri Pt. Kashi Nath Vedanti, Shri Pt. Ram Parikshan Shastri Darshanacharya and Shri Swami Manishanandji Maharaj.

His training and education in spiritual practices was done under the guidance of famous Shri Swami Yoganandji Maharaj and realised souls like Shri Baba of Mokalpur, Shri Baba



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



of Madhayeepur, Shri Swami Purnanand Tirth ( Shri Udiya Baba ) and Shri Swami Shankaranandji Bhikshu and others.

As for Sadhans, he has performed austerities, penances, purushcharans and anushthans. He learnt in practice Archana Puja, Bhaktiyog, Mantrayog, Rajyog. He learnt to vitalise Mantras and experimented with several of them with success and he has had visions of Shri Shukdev Maha Muni and deities like Shri Hanuman. He performed Purushcharan of Brahma Gayatri as well as Anushthan of 18-worded Shri Krishna Mantra. At one Anushthan he used to get up at about three in the morning and do meditation for some time; then have a bath and perform sandhya and little japa and then sit down for Anushthan of his Mantra and continue till about 11 o'clock and then after a glass of milk he would soon do the Saptah Path of Shrimad Bhagwad till late in the evening. Then he would have a small meal and a little walk and come back and perform sandhya and hold sankirtan. His intense sadhana soon yielded fruitful results. Lord Shri Krishna appeared and graced him. He put his hand on his forehead and gave him the Maha Vakya for realisation of Moksha ( salvation ).

On the path of knowledge, Shri Swamiji has done intensive self-introspection and original thinking called Vichar and Manan ( contemplation ). There have been occasions when he took up a question to solve for example "Am 1 baddha or mukta that is to say whether by nature I am bound down or free" ! He continued to ponder over the problem for four or five hours continuously sitting



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS


at a stretch, oblivious of the needs of his body and surroundings. He did not get up until he could find the satisfactory solution. Shri Swamiji says that Brahma Jnan can be realised only by Shravan of the Mahavakya but the quest for knowledge must be earnest and intense and the Manan and Nidhidhyasan should be sincere and not casual. The realisation came to him with the Grace of God when he served a Mahatma with the recitation of Shrimad Bhagwat and then the saint gave him the Updesha. He shid "You are in reality Brahman itself; you are yourself bliss and from now onwards where- ver you live, whatever clothes you wear, whatever ashram you adopt, never consider yourself to be a finite jiva. The duality ( or the Dwands ) of good and evil, happiness and sorrow, this world and beyond and the finite limitations, must all be rejected, as they are a product of nescience and a result of misconceptions. You are really eternally free from the entire duality." This happened in 1930 and with this dawned on Swamiji the true meaning and full significance of the Maha Vakya 'Thou art that', 'Aham Brahmasmi.' It is needless to state that since then Shri Swamiji, never identified his real self, with the dualities and leads the life of a Jivan Mukta, free from any fear of birth and death.

## ACTIVITIES & MIRACLES

Many have been the external activities of Shri Swamiji. In early life his vocation was of a spiritual preceptor and for a period of about seven years from 1934 to 1942 his principal occupation was work on the Editorial Board of the Hindi



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



Kalyan published by the Gita Press, Gorakhpur. There he was very kindly and respectfully treated and he wrote a number of books and articles and he translated into Hindi, Shrimad Bhagwat Mahapuran as well as other scriptures and he has contributed several valuable articles on diverse religious subjects which have from time to time been printed and published and some of the most valuable a rticles are contained in the SADHANA-ANK of the Kalyan. They speak volumes of his great insight in the path of spiritual progress and the difficulties and experiences encountered by the aspi rants and they offer solutions of numerous doubts and intricate problems. His articles on Dharm, righteous conduct, Brahmacharya ( continence ) purity of thought and living, Sati Dharm. Yog, Mantra Siddhi bear abiding testimony to his great learning, sharp intellect and rich practical realisations.

One incident recorded in an article published during that period out of the very many may be briefly described here :—

One day in early stages of life, Shri Swamiji was telling his beads of Rosary very quickly at about 4 o'clock in the morning. A previously kuown Swamiji came to him and said that 4 o'clock in the morning is the time when from very doings of a man you can ascertain the true picture of the man; The way you are trying to complete the allotted quantity of the Japa is not the correct way of spiritual progress" and he invited Shri Swamiji to follow him.

He took Shri Swamiji a little distance away to the Bank of the Ganges and asked him to sit down in the shade of a tree and take deep breaths and take God's name with each



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



breath slowly and patiently and zealously, feeling every syllable of the name while at the same time mentally hearing it as you hear the echo of a bell. Our Swamiji sat in this posture and continued to take the name of Lord for sometime and became oblivious of his body and its surroundings. Soon he saw a vision. It was divine Vrindaban and the Bank of the Jamuna.

There were silvery particles of sand and there was a kadamb tree. As he looked upon the tree, he fund Lord Shri Krishna, Darling of Yashoda on each leaf looking gracefully and blissfully, Shri Swamiji said to himself 'Was there only one Krishna on each leaf ? The vision at once showed that there were number of Shri Krishnas on each leaf. Then Shri Swamiji said to himself "What was there between two tiny Shri Krishnas ?' As he thought of it, the vision changed and there appeared a little grown up fair coloured Shri Krishna with a flute in his hand and peacock feathers on his head, casting a bewitching glance but he was fair coloured and not of the conventional dark complexion. Shri Radha also appeared and they both danced round and round in raptuous love. Shri Swamiji said to himself 'Shri Krishna he is but why is he fair coloured ?' Shri Krishna in the vision threw a covetous smile and said 'You know I meditated on my Fair Radha and so acquired the colour of her complexion.' Then the divine sport disappeared from sight and Shri Swamiji came to the mundane plane. He found the day had risen very high and the pilgrims ( yatris ) had deserted the bank of the Ganges,



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



He got up and walked back home recounting his abiding, invaluable and spiritual treasure. This was not the only occasion when he had the vision of Lord Shri Krishna and in slightly later stages of life, he was moving in the company of a fellow aspirant from one place to another and there he was obliged to break his journey for the night at a wayside railway station away from any human habitation. So they decided to sleep on the railway platform. They had not had a morsel of food since the morning and they were feeling extremely hungry. They tried to find something to eat but nothing was available and there was no method of procuring anything with any amount of effort to give a little nourishment to the tired body. They took God's name and went to sleep. But sleep avoids a hungry man. As they were lying tired as logs, taking God's names, two young boys appeared before them. One was dark complexioned and the othcr was fair. They had beautiful features and handsome cuts. They were quite young. They brought two packets of peras (sweets) and gave one to Swamiji and the other to his companion. Shri Swamiji felt enchanted by their presence and asked them who they were. They replied they were sons of a farmer, living nearby who had sent them to serve the hungry and the needy. The travellers ate the peras ( sweets ) and found them exceedingly invigorating and tasty, and they slept peacefully. Next morning they got up and tried to find the whereabouts of the two urchins who had fed them in need but they were told that no such boys lived nearby and the nearest village was several miles away. It was realised that



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



Krishna and Balram themselves felt sympathy for the travellers and decided to feed them in person. It is true that

When friends fail and comforts flee
Help of the Helpless comes to Thee.

The principal activity of the major part of the life of Shri Swamiji has been to deliver discourses and to offer comments on Shrimad Bhagwat Mahapuran, the Upanishads and the other Scriptures and religious and philosophic books, and many of which have been recorded and reproduced in print. He delivers lectures almost every morning and evening for about an hour and he holds regular satsangs which are attended by a large number of persons and are received with rapt attention and remarkable benefits. He has done numerous Saptahs, Anushthans and Pathas of Shrimad Bhagwat Mahapuran and numerous reports of miracles have been received and good many listeners have found in his sweet recitations and thoughtful comments, the glimpse of original shri Shukdev Muni and have found solace and inspiration in his words. On one occasion a boy who had been dead for sometime became an evil spirit and started haunting and troubling his mother. No amount of treatment could cure the mother and ultimately the spirit of the dead boy spoke and requested for recitation of Shrimad Bhagwat by a learned man. Shri Swamiji recited the Bhagwat Saptah and at the end, the evil spirit declared that he had been freed from bondage and thereafter he never troubled or haunted anybody and his mother at once felt completely cured.

There are many other miracles that have been reported



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



by devotees of Shri Swamiji from time to time. One young boy was graced by Swamiji and he lovingly touched his forehead and the boy at once fell into a Samadhi or trance. Many a sadhak aspirant have obtained solution of their doubts and difficulties and have derived peace of mind by meditating either on Swamiji himself or on the Isht Dev as directed by him. Many have learnt the secret of making their lives eternally happy and peaceful and many have learnt the skill of making their Mantras ( sacred symbols ) and Puja ( method of worship ) Chaitanya or lively so as to bring in divine love and visions of the deity. The worldly people have also richly gained by his association and many a desire have been fulfilled and many a trouble has been averted by his grace and it has been learnt that sick persons got twell and barren ladies got children and unhappy social relaions of father and son; brother and brother; husband and wife have considerably improved and become sweet and smooth by his advice, Some have indeed received gainful employment, profits in business and monetary and other help by following the path and practices prescribed by him. still his greatest desire and contribution to humanity is towards upliftment on the spiritual path so that happiness and peace be real and eternal.

Shri Swamiji has done a number of pilgrimages throughout the length and breadth of the country on foot as well as in the pilgrims special trains organised by the Gita Press Gorakhpur or by Shri Devi Sampad Mandal of Swargashram. Amongst his friends, acquaintances, admirers, devotees and



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



disciples are men and women of various states, castes and creed, and of diverse political views and include a Shankaracharya, Dandi Sanyasis, Dashnami, Sanyasis, Udasins, Bramcharies, Pious Grihasths, Ministers, Judges, Lawyers, Doctors, Professors, Industrialists, Traders, Businessmen, employees as well as learned Pandits. Many of them are walking briskly on the path of spiritual progress and many of them have attained solace and realisation under his guidance and they bow their heads with gratefulness to God and His manifestations.

I have myself attained considerable mental and spiritual benefits from him which I have already described in Anand Vani Part 4 and it is not appropriate to repeat them here.

## TEACHINGS

The manner of his teachings is to have an integrated personality where the Sat Chit Anand aspects of the spirit manifested in the body, mind and soul are all co-ordinated and well looked after as a composite unit. The central theme of his teachings is that one should be absolutely free from all kinds of grief and sorrows at all times and under all circumstances and one must have a righteous conduct and correct behaviour by his body and a peaceful mind and sweet and affectionate outlook and the soul must be rich by everlasting communion with the Supreme Being. Shri Swamiji loves to say that nothing is more sinful than to be sorrowful.

Lately Shri Swamiji has bestowed some attention to social and cooperative works and he has floated a number of chari-



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS



table trusts like Shri Udiyababa Trust, Shri Anand Vrindaban Trust, Janata Janardan Trust, Shri Krishna Janma Bhumi Trust, Sat Sahitya Prakashan Trust and others. The last named trust is responsible for arranging discourses and bringing out publications of useful literature, a list of which is given in this Patrika.

Amongst the multifarious activies, two things of Shri Swamiji stand out very prominently. One is Ahimsa and the other is Vairagya. He believes and practices Ahimsa in thought, word and deed and he never hurts or harms anybody even unknowingly. He never enters into controversy which is likely to lead to bitterness and he never indulges nor permits anybody to indulge in the pastime of back biting or a campaign of calumny and he gives an impression of ignoring and pardoning the faults and lapses of the frail creatures.

So far as the Vairagya is concerned he had been told by the Astrologers at the age of 16 that he would die within 3 years and he at once left his home and travelled about in search of immortality. He ultimately discovered himself and found that his self was infinite self and the same was immortal and defied time, space and conditions and it was all existence, knowledge and bliss absolute and there were no real shackles of bondage. Since then he has not had any deep attachment to any man, condition surroundings and remains in communion with the Supreme Spirit. He radiates a joy, peace and charm in which those near him drink deep.

I have tried to introduce, in brief, to you in my own humble way, the life sketch of Shri Swamiji, which I trust would be found useful to improve our lives and reduce our sorrows.

Om Shanti, Shanti, Shanti.



CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥

ॐ सहृदयं सांमनस्यमविद्वेषं कृणोमि वः ।
अन्यो अन्यमभिहर्यत वत्सं जातमिवाघ्न्या ॥

मैं आप लोगोंमें सहृदयता, मानसिक पवित्रता और राग-द्वेषराहित्यकी प्रतिष्ठा करता हूँ । जैसे अवध्य गाय अपने छोटे-से बछड़ेसे स्नेह करती है, वैसे ही आप सब परस्पर एक दूसरेसे प्रेमपूर्ण व्यवहार करें ।

# श्रीपूर्णवस्त्रभंडार

## २२२ नवी गली, मंगलदास मार्केट

बम्बई—२

वाम्बे डाइंग एण्ड मैन्यूफैक्चरिंग कम्पनी

बम्बई

के

( फेन्ट ) कटपीस वस्त्र के थोक विक्रेता

की

# शुभ कामनाएँ

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

for yonr requirements of

ALL GADES OF CASTOR OIL
BLOWN CASTER OIL
DEHYDRATED CASTOR OIL
HEPTALDEHYDE
UNDECYLENIC ACID
LENOLIC ACID
RICNOLEIC ACID Etc

Please Contact

JAYANT OIL MILLS

13 Sitafalwadi, Mount Road, Majgaon,
BOMBAY-10

Phone : 379444/42/43

With best wishes from :—

Telephone : 473526

M/S. Natvarlal Govindji Zaveri

*Jewellers*

264 C. AMARATLAL MANSION
MATUNGA ( C. Rly. )
BOMBAY--19

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS


श्री

शुभ कामनाओं के साथ

हरेक प्रकार की टेक्सटाईल्स
मशीनरी के लिए हमसे
सम्पर्क करें।

टेलीफोन : २६२०६३

# मेसर्स ओरियण्ट टेक्सटाईल्स

नजीर बिल्डिंग

कालीकट स्ट्रीट

फोर्ट बम्बई—१


CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS


With best compliments :

Gram :

Phones : Show Room : 356497
Residence : 357015

PRANSUKHALAL BROTHERS

JEWELLERS

Agt.—Mrs. D. D. Vasudeva

7 New Queens Road, Opera House,

BOMBAY 4



With best compliments :

Grams : 'SHOWINDOW' Phone : 352725

*Bhgat Brothers*

JEWELLERS & DEPARTMENT STORE

PATEL CHAMBERS

Sandhurst Bridge

BOMBAY 7


CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS


*For all types*

OF

*Electric wires and cables.*

# *Raval & co.*

LARGEST STOCKISTS OF

.I C.C. PARAMITE + C.C.I. TROPODUR + L.T. & H.T.
WIRES AND CABLES TRAILING FLEXIBLES &
CONTROL CABLES A SPECIALITY

HEAD OFFICE:

*SHREEJI BHUVAN, LOHAR CHAWL*

*POST BOX No. 2279*

*BOMBAY-2*

PHONE 23720 20233 28426

Grams: Godspeed

*Branch Office:*

12--B, LOWER CHITPUR ROAD,

CALCUTTA-1

*Phone: 345651*

*Grams:* YOURCHOICE


CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

WITH COMPLIMENTS OF :—

# R.M. Appliances Private Ltd.

Manufacturers of :—
FIRE FIGHTING EQUIPMENTS
2, BRABOURNE ROAD : CALCUTTA—1

Phone : 22-4341

Gram : ROBIEAN

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS


# ALUCOIN

Supplying Industrie's Increasing demand of the following various ALUMINIUM products from one source :

Virgin Aluminium Ingots and Aluminium Alloy Ingots

Aluminium Notched Bars and Shots

*PLAIN & CORRUGATED SHEETS,

*CIRCLES

*PLATES

*COILS & STRIPS

*VARIOUS EXTRUDED SECTIONS

*A.A.C. and A.C.S.R. (Conductors)

*Various Range of Foils

*Alumina Hydrated and Alumina Calcined

# Aluminium corporation of India Ltd.

Sole Selling Agents : J. K. Alloys Limited

7, Council House Street

CALCUTTA-1


CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS


With best compliments from :—

मेसर्स जेठामल नेमचन्द

*Mrs. Jethamal Nemchand*

किराना मर्चेन्ट

KIRANA MERCHANTS

तथा

and Commission Agents

कमीशन एजेन्ट

46 KAZI SYED STREET

४६ काजी सैयद स्ट्रीट

BOMBAY-3

बम्बई—३



With best compliments from :—

The Mahavir Printing Works,

*Sambava Chambers,*

SIR PHEROZESHAH MEHTA ROAD

FORT : BOMBAY-1

Phone : 262785


CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

મંગલ દિવસો ની
શુભેચ્છાઓ

UNICHEM
QUALITY
RELIABILITY

# યુનિકેમ

ઔષધિ ક્ષેત્રમાં
વિશ્વાસપાત્ર નામ

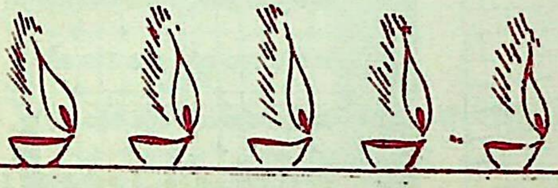

યુનિકેમ
લેબોરેટરીઝ લિ.
મુંબઈ ૧૧ • ગાઝીઆબાદ (યુ.પી.)

THE BANK OF INDIA LTD.

RAAS/P/23

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

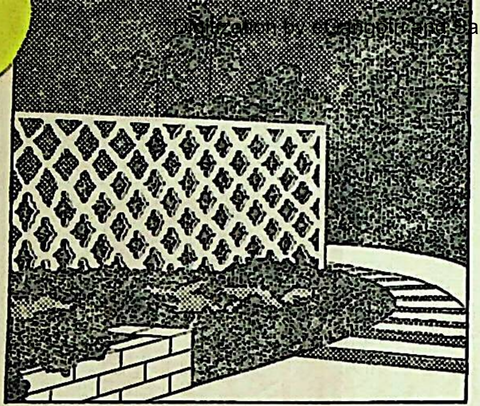

**Lacy garden walls** show how SILVICRETE can take almost any shape and design. Indoors, it provides unlimited scope for decorative effect—in plain colours or in multi-colour patterns.

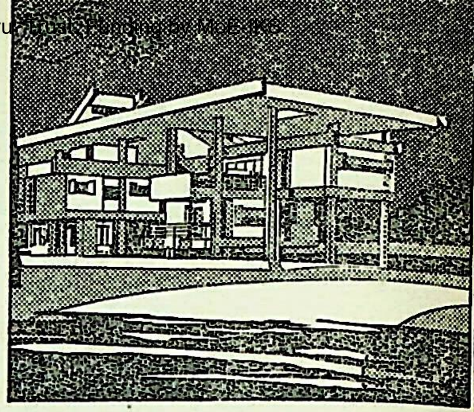

**New look in housing:** Judging by the modern trend in home designing, architecture is no longer confined within four walls. Designers have an 'open' mind on the subject. SILVICRETE lends itself readily to the new outlook in form, colour and texture.

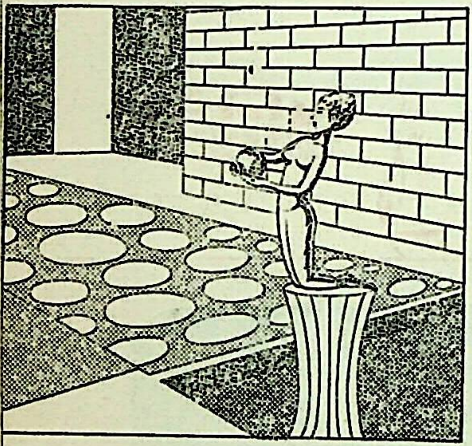

**Modern Concrete Sculpture** sets the theme for a smart garden. Plain or coloured flagstones, crazy pavements, fountains, sun dials...made of SILVICRETE add new zest to outdoor living.

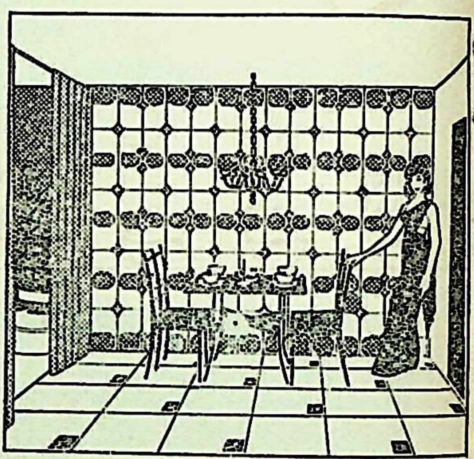

**SILVICRETE terrazzo floor finishes** laid over large areas in plain colours or in multi-colour patterns make living a pleasure. Stairs and dadoes may be made in terrazzo to match or contrast with floors.

## For happier living... indoors and outdoors

## specify **Silvicrete** ACC WHITE CEMENT

**Readily available from the nearest branch of The Cement Marketing Co. of India Ltd., or their distributors.**

*Silvicrete is the basic material for the production of Snowcem and Colorcrete*

**THE ASSOCIATED CEMENT COS. LTD. • The Cement Marketing Co. of India Ltd.**

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

CML 5924A

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

Gram 'EASTSALE'

Phone 253045
252829

Res. By Req. 79583

# MAKHARIA BROTHERS

DEALERS IN GENERATING SETS, ELECTRIC MOTORS, SWITCH GEARS, OIL ENGINES, PUMPSETS ETC.

101/103 Apolo STREET
*FORT, BOMBAY—1.*

हर प्रकार के इलेक्ट्रिक-मोटर, जनरेटिङ्ग सेट, क्रुड आयल-इंजन, चक्की तेल के घाणे, पानी के पम्पिंग सेट आरा मशीन, स्टॉक में फायदे से मिलता है।

फोन : २५३०४५
२५२८२९

# मारवरिया ब्रदर्स

तार : 'ईस्टसेल'

१०१/१०३, अपोलो स्ट्रीट
फोर्ट बम्बई—१

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

"ॐ भूरसि भूमिरस्यदितिरसि
बिश्वधाया विश्वस्य भुवनस्य धर्त्री ।
पृथिवीं यच्छ पृथिवीं दृंह पृथिवीं मा हिंसीः ॥"

यजुर्वेद १३।१८

"हे बड़ी माँ ! तुम सम्पूर्ण सुखोंकी दाता हो । तुम्हारा स्वरूप विशाल है । तुम स्वयं देवता हो और देवताओंकी माता हो । तुम सम्पूर्ण विश्वको अपने उदरमें धारण करती हो और उसका भरण-पोषण करती हो । सब प्राणी तुम्हारी गोदमें रहकर तुम्हारा ही दूध पीते हैं । तुम अपनी विशालताको और बढ़ाओ, अपनेको और दृढ़ करो और अपने-आपको कभी क्षीण मत करो ।"

फोन—39736

तार—RAIBANSI

दि चिरीमिरी कॉलिअरी कम्पनी
प्राइवेट लिमिटेड

१८।२२ शेखमेमन स्ट्रीट

बम्बई—२

की

शुभकामनाएँ

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS


# मेसर्स पंजाब डाइंग
## एण्ड
## केमिकल्स मैन्युफेक्चरिंग
## एशोशिएसन

टेलीफोन : २५२०६७

## बी० के० इंजिनियरिंग वर्क्स

श्री टेक्सटाईल्स

१०१ अपोलो स्ट्रीट फोर्ट

वम्बई–१



टेलीफोन : २५४३५६

## मेसर्स गुप्ता इंजिनियरिंग कं०
## ( बम्बई )

१०५ अपोलो स्ट्रीट फोर्ट

बम्बई–१

ट्रान्सफोरमर्स केवल्स इलेक्ट्रीक मोटर्स
सभी प्रकार के इलेक्ट्रीकल्स मशीनरी
तथा सामान के लिए सम्पर्क करें।


CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS


With Best Complements From

"MOUNT UNIQUE"

11Th Floor. Block 86,

Pedder Road, Bombay 26.

# Chhotalal N. Shah

105, Audiappa Naick st.

Sowcarpet. Madras 1.

PHONE : 33325



*With Complements*

FROM

# Dhanamall Silk Mills

DADI MANSION

BEHIND METRO CINEMA,

*BOMBAY—1.*

Telegram : Dhanamall

Phone : 243358


CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

# सत्साहित्य पढ़िये


| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| माण्डूक्यप्रवचन | ... | ... | | ६.०० |
| गोपीगीत | ... | ... | | ३.५० |
| नारदभक्तिदर्शन | ... | | | ३.५० |
| भक्तिरहस्य | ... | ... | (अप्राप्य) | २.०० |
| सत्सङ्ग साधन और फल | ... | ... | (अप्राप्य) | २.०० |
| श्रीमद्भागवतरहस्य | ... | ... | | २.५० |
| सुगम भक्तिमार्ग | ... | ... | | २.०० |
| भगवान्‌के पाँच अवतार | ... | ... | | २.०० |
| ईशावास्यप्रवचन | ... | ... | | १.२५ |
| पुरुषोत्तमयोग | ... | ... | | २.५० |
| भक्तियोग | ... | ... | | ४.५० |
| सांख्ययोग | ... | ... | | ५.०० |
| मुण्डकसुधा | ... | ... | | २.५० |
| आनन्दवाणी भाग १-२ | ... | ... | (अप्राप्य) | ०.५० प्रति |
| आनन्दवाणी भाग ३ से १० तक | | ... | | १.०० प्रति |
| महाराजश्रीका एक परिचय (द्वि. सं. | | ... | | ०.५० |
| मोहननी मोहिनी | ... | ... | [गुजराती] | ०.५० |
| चरित्रनिर्माण आणि ब्रह्मज्ञान | | ... | [मराठी] | १.०० |
| श्रीमद्भागवतरहस्य | ... | ... | [सिन्धी] | २.०० |
| महाराजश्रीका एक परिचय | | ... | [ „ ] | ०.२५ |

## सत्साहित्य प्रकाशन ट्रस्ट

'विपुल'

२८/१६ रिजरोड, मलावारहिल

बम्बई—६


CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

१—बिजली के तारके ऊपर रबरका मसाला चढ़ जानेसे फिर उससे 'शाक' नहीं लगता, उसी प्रकार साधकके ऊपर सत्संगका प्रसर हो जानेसे उसे शोक नहीं सताता।

२—जिस प्रकार बिजलीके तार बिजलीको स्थान-स्थानपर पहुँचानेमें सहायक हैं, उसी प्रकार सन्त, महात्मा, गुरुजन आध्यात्मिक शक्तिके विकासको जनतातक पहुँचानेमें सहायक है।

३—जिस प्रकार घरमें वार्यरिंग हो जानेके पश्चात् केवल स्विच दबाने मात्रसे घरमें प्रकाश हो जाता है, उसी प्रकार साधक साधन-सामग्री प्राप्त हो जानेपर आत्म-विकासको प्राप्त होता है।

४—जिस प्रकार पावरहाउसमें पावर होते हुए और बल्ब भी नया होते हुए बिजलीके तारका 'कनेक्शन' ढीला होनेके कारण बल्बमें प्रकाश नहीं होता, उसी प्रकार गुरु-शिष्यका श्रद्धाका सम्बन्ध थोड़ा-सा भी ढीला होनेके कारण शिष्यमें विकास नहीं होता।

५—जैसे बिजलीके मोटरमें कई एनेमल वायर एक ही करेण्टको प्रसारित करनेका काम करते हैं, इसी प्रकार चलते-फिरते जीवोंमें एक ही सर्वाधारका प्रसार है।

## देवीदयाल केबल इण्डस्ट्रीज, लि०

गुप्ता मिल्स स्टेट, रे रोड,

बम्बई—१०

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

॥ श्रीहरिः ॥

आ ब्रह्मन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामा राष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायताम्, दोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्ध्रिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायताम् । निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु । फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम् । —यजुर्वेदः २२।२२

"हे परमेश्वर! हमारे राष्ट्रमें सर्वत्र ब्रह्मतेज-सम्पन्न ब्राह्मण जन्म लें । अस्त्र-शस्त्र विद्यामें निपुण, शत्रुको भलीभाँति पीडित करनेवाले महारथी क्षत्रिय उत्पन्न हों । इस यजमानकी गौएँ दूध देनेवाली हों, बैल भार वहन करनेवाले और अश्व शीघ्रगामी हों । स्त्री सर्वगुण-सम्पन्न तथा रथमें बैठनेवाले पुरुष विजयशील हों । हमारे घरमें शूर-वीर युवा पुत्र हो । मेघ हमारी इच्छानुसार वर्षा करें । ओषधियाँ परिपक्व एवं फलवती हों । हमें योग्य अर्थात् अलब्धका लाभ और क्षेम अर्थात् प्राप्तका संरक्षण प्राप्त हो ।"

शुभ कामनाओं सहित

# दि खटाउ मकनजी स्पिनिंग एण्ड वीविंग कम्पनी लिमिटेड

—रजिस्टर्ड आफिस—

## लक्ष्मी बिल्डिंग,

६, बेलार्ड एस्टेट फोर्ट,

बम्बई

के

सौजन्यसे

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS


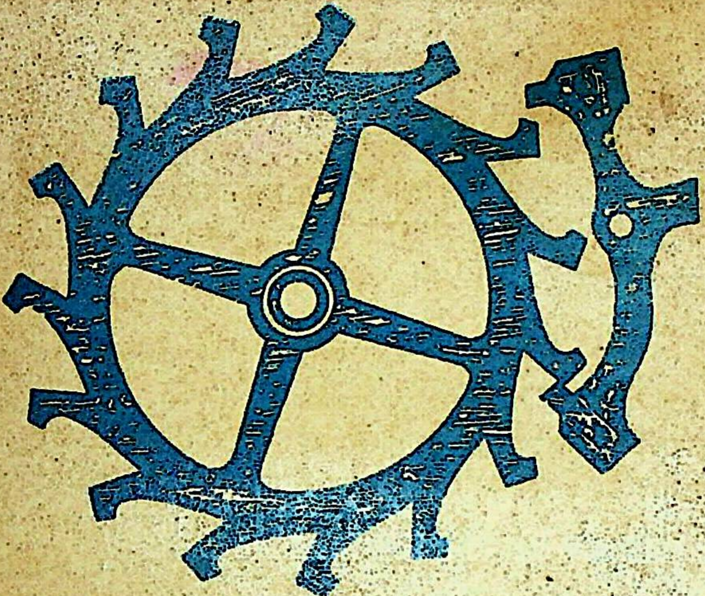

"हर क्षण, हर घड़ी समृद्धि की ओर"

औद्योगिक चक्र घूमते ही राष्ट्र का कलेवर बदल गया और हर क्षण, हर घड़ी उसकी समृद्धि में निखार आने लगा। इतना तीव्र, इतना सुनिश्चित और प्रेरक है यह चक्र और साथ ही इतनी दूर तक असर डालने वाला भी कि दलितावस्था में पड़े लाखों की जिन्दगी बदल गयी, उनके ओठों पर मुस्कराहट आ गयी और उन्हें अपने अस्तित्व का नया बोध होने लगा। जे०के० आर्गनाइजेशन पिछले डेढ़ सौ वर्षों से यही करता आ रहा है। आज हमारे उद्योगों की शृंखला में, जिसमें मशीनरी से लेकर पेंट तक, जूट से लेकर टाइप राइटर तक, टेक्सटाइल से लेकर केमिकल तक सब कुछ निर्मित होता है, करीब ४५,००० व्यक्ति संलग्न हैं। हमारा प्रयास है जीवन को परिपूर्ण और जीने योग्य बनाना।

जे.के. ऑरगनाइज़ेशन

कानपुर • बम्बई • कलकत्ता

भारत का एक विशालतम औद्योगिक और व्यावसायिक संगठन

सत्साहित्य प्रकाशनट्रस्ट, बम्बईके लिए विश्वम्भरनाथ द्विवेदी द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा आनन्द कानन प्रेस, सी. के. ३६/२० वाराणसीसे मुद्रित।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi